Bachelor of Arts (Sanskrit)

बैचलर ऑफ आर्ट्स (संस्कृत)

तृतीय सेमेस्टर - बी0ए0एस0एल (N)- 220

उत्तराखण्ड के संस्कृत साहित्यकार

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी-263139

Toll Free : 1800 180 4025
Operator : 05946-286000
Admissions : 05946-286002
Book Distribution Unit : 05946-286001
Exam Section : 05946-286022
Fax : 05946-264232
Website : http://uou.ac.in

पाठ्यक्रम विशेषज्ञ समिति **बी0ए0एस0एल (N)- 220**

कुलपति (अध्यक्ष)
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

प्रोफेसर ब्रजेश कुमार पाण्डेय, संकाय अध्यक्ष
संस्कृत एवं प्राच्य विद्या अध्ययन केंद्र,
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

प्रोफेसर गिरीश चन्द्र पन्त,
संस्कृत विभागाध्यक्ष, जामिया मिल्लिया इस्लामिया विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

प्रोफेसर जया तिवारी,
संस्कृत विभागाध्यक्षा, कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल

प्रोफेसर रेनू प्रकाश (संयोजक)
निदेशक, मानविकी विद्याशाखा
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

डॉ0 देवेश कुमार मिश्र,
एसो0 प्रोफे0, इन्दिरा गान्धी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली।

डॉ0 नीरज कुमार जोशी,
असि0 प्रोफे0-ए.सी.,संस्कृत विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

पाठ्यक्रम समन्वयक एवं सम्पादन

डॉ0 नीरज कुमार जोशी
असि0 प्रोफे0 ए.सी.,संस्कृत विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

इकाई लेखन	खण्ड इकाई संख्या
प्रो० पुष्पा अवस्थी संस्कृत विभागाध्यक्ष, एस०एस०जे० परिसर, कुमाऊँ विश्वविद्यालय, अल्मोड़ा	खण्ड 1 (इकाई 1 से 4) खण्ड 2 (इकाई 2)
डॉ0 नीरज कुमार जोशी, असि0 प्रोफे0 ए.सी., संस्कृत विभाग, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी	खण्ड 2 (इकाई 1 एवं 3) खण्ड 3 (इकाई 3 एवं 4)
श्री राहुल पन्त, असि0 प्रोफे0 ए.सी., संस्कृत विभाग, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी	खण्ड 3 (इकाई 1 एवं 2)
डॉ0 कंचन तिवारी असिस्टेन्ट प्रोफेसर, उत्तराखण्ड संस्कृत विश्वविद्यालय, हरिद्वार	खण्ड 3 (इकाई 5)

प्रकाशक: (उ0 मु0 वि0, हल्द्वानी) -263139 **कॉपीराइट** @ उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

पुस्तक का शीर्षक- उत्तराखण्ड के संस्कृत साहित्यकार **प्रकाशन वर्ष :** 2024

ISBN No. **मुद्रक:**

नोट:- यह पुस्तक छात्र हित में शीघ्रता के कारण, प्रकाशित की गयी है। संशोधित व परिवर्द्धित संस्करण का प्रकाशन पाठ्यक्रम के पूर्ण लेखन व सम्पादन के पश्चात् किया जायेगा। इसका उपयोग उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना अन्यत्र किसी भी रूप में नहीं किया जा सकता।

अनुक्रम

खण्ड एक- उत्तराखण्ड की संस्कृत परम्परा एवं साहित्यकार : भाग-1	**पृष्ठ संख्या 1- 4**
इकाई 1 - उत्तराखण्ड में संस्कृत साहित्य की परम्परा	05-17
इकाई 2 - लोकरत्न गुमानी का व्यक्तित्व एवं कृत्तित्व	18-33
इकाई 3 - विद्याभूषण श्रीकृष्ण जोशी का परिचय एवं उनका संस्कृत साहित्य में योगदान	34-51
इकाई 4 - श्री हरि नारायण दीक्षित का जीवन परिचय एवं उनका रचना संसार	52-66
खण्ड दो- उत्तराखण्ड की संस्कृत परम्परा एवं साहित्यकार : भाग-2	**पृष्ठ संख्या 67**
इकाई 1 - अशोक कुमार डबराल का व्यक्तित्व एवं कृत्तित्व	68-85
इकाई 2 - शिवप्रसाद भारद्वाज का जीवन परिचय एवं उनकी कृत्तियाँ	86-98
इकाई 3 - उत्तराखण्ड के अन्य प्रमुख कवियों का परिचय	99-132
खण्ड तीन- महाकाव्य एवं अन्य विधाएं	**पृष्ठ संख्या 133**
इकाई-1 गंगापुत्रावदानम् की विषयवस्तु एवं महाकाव्यत्व	134-149
इकाई-2 गंगापुत्रावदानम् : प्रथम सर्ग मूलार्थ, अन्वय एवं व्याख्या	150-171
इकाई-3 नाटक : दायाद्यम् एवं राष्ट्रं भवति सर्वस्वम् का परिचय	172-181
इकाई-4 संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं का परिचय एवं महत्व	182-214
इकाई-5 संस्कृत साहित्य की आधुनिक विधाएँ	215-232

तृतीय सेमेस्टर / SEMESTER-III

खण्ड–प्रथम

उत्तराखण्ड की संस्कृत परम्परा एवं साहित्यकार

इकाई 1: उत्तराखण्ड में संस्कृत साहित्य की परम्परा

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 इकाई की पाठ्यसामग्री
1.3.1 गढ़वाल में संस्कृत साहित्य की परम्परा
1.3.2 गढ़वाल में प्राप्त संस्कृत अभिलेख
1.3.2.1 देवप्रयाग में प्राप्त यात्री नामावली
1.3.2.2 उत्तरकाशी के शक्ति स्तम्भ का लेख
1.3.2.3 अनुसूयादेवी मन्दिर मार्ग पर पाषाण अभिलेख
1.3.2.4 पलेठी का शिलालेख
1.3.2.5 लाखामण्डल-ईश्वरा का शिलालेख
1.3.2.6 कालीमठ का शिलालेख
1.3.2.7 नाला-मणदेव का शिलालेख
1.3.2.8 अन्य अभिलेख
1.3.3. कुमाऊँ में संस्कृत साहित्य की परम्परा
1.3.3.1 आचार्य हरिहर एवं उनके ग्रन्थ
1.3.3.2 केदार पाण्डे एवं उनके ग्रन्थ
1.3.3.3 राजा रूद्रचन्द्रदेव एवं उनके ग्रन्थ
1.3.3.4 रूद्रमणि जोशी एवं उनका साहित्य
1.3.3.5 अनन्तदेव एवं उनका साहित्य
1.3.3.6 पण्डित शिवानन्द पाण्डे एवं उनका साहित्य
1.3.3.7 कुमाऊँ में प्राप्त अभिलेख
1.4 सारांश
1.5 पारिभाषिक शब्दावली
1.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ/सहायक सामग्री
1.8 निबन्धात्मकप्रश्न

1.1 प्रस्तावना:-

उत्तराखण्ड में संस्कृत साहित्य की आधुनिक प्रतिभाएँ इस प्रथम खण्ड की ''उत्तराखण्ड में संस्कृत साहित्य की परम्परा'' यह प्रथम इकाई है। इस इकाई में उत्तराखण्ड के कुमाऊँ एवं गढ़वाल दोनों ही मण्डलों में संस्कृत साहित्य की प्राप्त परम्परा का उल्लेख किया जा रहा है। इस इकाई में उत्तराखण्ड में प्राप्त संस्कृत में अंकित अभिलेखों, ताम्रपत्रों आदि के साथ-साथ उपलब्ध प्राचीन संस्कृत साहित्य एवं साहित्यकारों के विषय में चर्चा की जा रही है।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप उत्तराखण्ड में प्राप्त संस्कृत साहित्य की परम्परा से सम्बन्धित प्राचीन अभिलेखों, ताम्रपत्रों, शिलालेखों तथा संस्कृत भाषा में लिखित प्राचीन साहित्य के विषय में भलीभाँति जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

1.2 उद्देश्य:-

- प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप अच्छी प्रकार बता सकेंगे कि उत्तराखण्ड में संस्कृत साहित्य का सर्वप्रथम प्रणयन कब हुआ।
- अच्छी तरह समझा सकेंगे कि उत्तराखण्ड में ही सर्वप्रथम वेदादि शास्त्रों की रचना हुई।
- बता पाएंगे कि उत्तराखण्ड में संस्कृत साहित्य का लिखित रूप सर्वप्रथम अभिलेखीय सामग्री के रूप में प्राप्त होता है।
- समझा पाएंगे कि अभिलेख एवं शिलालेख उत्तराखण्ड में संस्कृत साहित्य परम्परा की प्रथम सामग्री है।
- भलीभाँति बता सकेंगे कि उत्तराखण्ड कें गढ़वाल क्षेत्र में कौन-कौन से संस्कृत में अंकित लेख कहाँ प्राप्त हुए हैं।
- समझा सकेंगे कि कुमाऊँ में संस्कृत साहित्य का लिखित स्वरूप प्राचीन काल में कब से प्राप्त होता है।
- बता सकेंगे कि कुमाऊँ में 17 वीं सदी तक कौन-कौन से संस्कृत साहित्यकार हुए।
- कुमाऊँ में प्राप्त संस्कृत के अभिलेखों के बारे में अच्छी तरह बता पाएंगे।

1.3 इकाई की पाठ्य सामग्री:-

आप इस बात से भलीभाँति परिचित होंगे कि उत्तराखण्ड को देव भूमि कहा जाता है। यह क्षेत्र पुरातन काल से ही देवी-देवताओं की वासस्थली रहा है। यहाँ की प्रत्येक घाटी, शिखर, वनखण्ड किसी न किसी ऋषि-मुनि या देवी-देवता के नाम पर है। अतः निश्चय ही प्राचीन काल से ही देववाणी (संस्कृत) का प्रभाव भी यहाँ पर रहा होगा। इसके प्रमाण विभिन्न अभिलेखों, ताम्रपत्रों एवं शिलालेखों के रूप में तथा समय-समय पर प्राप्त प्राचीन संस्कृत साहित्य की पाण्डुलिपियों के रूप में हमारे सामने आते रहे हैं।

आज के उत्तराखण्ड को आप पूर्व में उत्तर प्रदेश के ही एक भाग के रूप में जानते है जो 9 नवम्बर सन 2000 ईसवी में अलग राज्य के रूप में अस्तित्व में आया। आप यह भी जानते होंगे कि प्राचीन काल में भी यह क्षेत्र उत्तराखण्ड नाम से जाना जाता था। आप जान लें कि स्कन्दपुराण में उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊँ को केदारखण्ड एवं मानसखण्ड के रूप में कहा गया है। इनमें गढ़वाल एवं कुमाऊँ का सुरम्य एवं प्रामाणिक वर्णन प्राप्त होता है। ऋषि-मुनियों की तपस्थली तथा देवी-देवताओं की वासभूमि के रूप में उत्तराखण्ड की पहचान पुरातन है। शिव-पार्वती का तो यह स्थान ही माना जाता है। भारतवर्ष के उत्तर में स्थित हिमशिखरों से सुशोभित उत्तराखण्ड का संस्कृत साहित्य की अभिवृद्धि में विशेष योगदान है। ऐसा माना जाता है कि हिमालय की कन्दराओं और नदियों के संगम तटों पर की वैदिक ऋषियों को वेद मंत्रों का साक्षात्कार प्राप्त हुआ था।- **''उपगह्वरे गिरीणां संगमे च नदीनां धियः विप्रोऽजायत्''**

उत्तराखण्ड में संस्कृत साहित्य की अजस्र धारा पुराने जमाने से ही अविरल रूप से चली आ रही है। आज भी ग्रामीण क्षेत्रों में अनेकों हस्तलिखित पाण्डुलिपियों के होने की प्रबल संभावना व्यक्त की जाती है लेकिन यथासमय प्रकाश में न आ पाने से यह अमूल्य निधि अब नष्ट भ्रष्ट होकर लुप्तप्राय हो चली है।

उत्तराखण्ड में संस्कृत साहित्य की परम्परा को आप गढ़वाल में संस्कृत साहित्य की परम्परा तथा कुमाऊँ में संस्कृत साहित्य की परम्परा के रूप में विभाजित कर अधिक सरलता पूर्वक समझ सकेंगे। अतः इसी रूप में हम इसका वर्णन करेंगे -

1.3.1 गढ़वाल में संस्कृत साहित्य की परम्परा:-

गढ़वाल और कुमाऊँ भारतीय समाज के लिए साहित्यिक, धार्मिक, आध्यात्मिक तथा सांस्कृतिक आकर्षण का विषय रहे हैं। भारतीय साहित्य का मूल वैदिक साहित्य है। गढ़वाल, जिसे स्कन्दपुराण में केदारखण्ड के नाम से कहा गया है, में संस्कृत का मूल स्वरूप वैदिक काल से है। संस्कृत समस्त भारतीय भाषाओं की जननी है। भाषा के माध्यम से व्यक्ति और समाज अपने भावों को अभिव्यक्ति देता है। भाषा के सदैव दो रूप रहे है। एक राजनैतिक काम-काज में प्रयुक्त होने वाली तथा समाज के प्रबुद्ध वर्ग के द्वारा साहित्य में प्रयुक्त होने वाली भाषा तथा दूसरी बोलचाल की भाषा। प्राचीन काल में वैदिक ऋषि मुनियों की तपोस्थली, उनके विद्याकेन्द्र (आश्रम), साधना भूमि आदि हिमालय की उपपत्यकथाओं में ही थे। इस तथ्य पर विद्वानों में सहमति बनती दिखाई देती है। हिमालय का यह क्षेत्र गढ़वाल (प्राचीन केदारखण्ड) था जहाँ ऋषियों को वेद-मंत्रों का आत्मबोध हुआ।

वैदिक काल का समग्र साहित्य वैदिक संस्कृत में प्राप्त है। अतः मानना होगा कि उस काल की राजभाषा संस्कृत रही होगी। गंगा-यमुना की पवित्र धारा की तरह संस्कृत साहित्य की अजस्र धारा भी हिमालयी क्षेत्र से निकलकर सर्वत्र व्याप्त हुई। ऋग्वेद में जिन अनेकानेक ऋषि परिवार के सूक्त संकलित है उनमें भारद्वाज तथा अत्रि ऋषि का घनिष्ठ सम्बद्ध गढ़वाल प्रदेश से

प्रतीत होता है। प्राचीन ऋषियों के अनेक स्थान (विद्याकेन्द्र या आश्रम) आज भी गढ़वाल में उन्हीं के नाम से प्रचलित है।

वैदिक काल के बाद पौराणिक काल के अनेक ऋषि मुनियों के आश्रम भी केदारखण्ड (गढ़वाल) में होने का उल्लेख प्राप्त होता है यथा- नर-नारायण आश्रम, उपमन्यु आश्रम, व्यास आश्रम, कण्व आश्रम, अगस्तमुनि आश्रम, भृगु आश्रम आदि के उल्लेख से यह सिद्ध होता है कि गढ़वाल में संस्कृत की जड़े बहुत गहरी है। इन आश्रमों में गुरू द्वारा शिष्यों को वैदिक ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा दी जाती थी तथा ये आश्रम सतत् वेद-मंत्रों की ध्वनियों तथा यज्ञधूम से व्याप्त रहा करते थे। पौराणिक ग्रन्थों के अन्तःसाक्ष के आधार पर यह तथ्य भी पुष्ट होता है कि बदरीनाथ के समीप सरस्वती के तट पर व्यास और जैमिनी ऋषियों के आश्रम थे। यहीं पर व्यास ने महाभारत और अट्ठारह पुराणों की रचना की थी।

कश्यप और चरक का आश्रम गन्धमादन पर्वत (बदरीनाथ) पर, मरीचि और अंगिरा का आश्रम अलका प्रदेश और वसुधारा के मध्यवर्ती पर्वत के मूल में (अलकापुरी की ओर) कपिल और सनत्कुमारेां का हरिद्वार में वशिष्ठ-अरून्धती का हिमदाश्रम (हिदाऊ में), जनु और जगदन्नि का आश्रम उत्तरकाशी के समीप, गर्ग का आश्रम द्रोणगिरी में, मनु का आश्रम माना (माणा गाँव में), पतंजलि का आश्रम ऋषिकेश के निकट तपोवन में, अगस्त्य व गौतम का आश्रम मन्दाकिनी नदी के तट पर, विश्वामित्र और दुर्वासा का आश्रम ज्योतिर्मठ (जोशीमठ) के पास तपोवन में, पाराशर का यमुनोत्री में, भृगु का केदारकांठा के पास, अत्रि-अनुसूया का गोपेश्वर के पास, कण्व का आश्रम मालिनि के तट पर कोटद्वार के पास तथा बाल्मीकि का आश्रम पौड़ी के निकट सीतोन्स्यू में होने के प्रमाण मिलते है।

यह संभव है कि जिस गढ़वाल में ऋषि-मुनियों के आश्रम थे जहाँ दिन-रात वेद-मंत्रों की ध्वनि गूँजती थी वहाँ राजकार्य की भाषा संस्कृत रही होगी क्योंकि राज्य की राजभाषा का प्रभाव जन-जीवन एवं समाज की शिक्षा-दीक्षा पर पड़ता ही है। कालान्तर में केदारखण्ड (गढ़वाल) राजनीतिक अस्थिरता के भँवर में फँस गया। फलतः साधनों के अभाव में अपनी प्राचीनतम संस्कृत रचनाओं को सुरक्षित रख पाने में असमर्थ रहा। वे सब काल के गर्त में समा गई। केवल उनका स्मरण कराने वाले स्थान मात्र ही रह गए।लौकिक संस्कृत के महाकवि कुलगुरू कालिदास के काव्यों में वर्णित मास-नक्षत्र, विवाह कर्म, प्राकृतिक सौन्दर्य, अलकापुरी वर्णन, मेघदूतम् के मेघ-मार्ग वर्णन आदि से विद्वानों के इस तर्क को बल मिलता है कि कालिदस की जन्मस्थली गढ़वाल रही होगी। गढ़वाल के अन्त्रगत गुप्तकाशी के निकट स्थित 'कालीमठ' ही वह स्थल है जहाँ मूर्ख कालिदास 'काली देवी' की उपासना करके उनकी कृपादृष्टि से कालान्तर में महाकवि कालिदास बन गए। जनश्रुति है कि आदि शंकराचार्य के गुरू गोविन्दपाद का विद्या केन्द्र (आश्रम) कर्णप्रयाग के पास 'सिमली' में था। इस प्रकार इन विभिन्न ऋषि-मुनियों के नाम

पर आधारित आश्रमों की वर्तमान में प्रामाणिकता से यही सिद्ध होता है कि प्राचीन काल में गढ़वाल में संस्कृत की स्थिति अत्यन्त समृद्ध रही होगी।

1.3.2 गढ़वाल में प्राप्त संस्कृत अभिलेख:-

यद्यपि उत्तराखण्ड के गढ़वाल क्षेत्र में संस्कृत भाषा में पठन-पाठन, ग्रन्थ लेखन आदि के प्रमाण प्राचीन काल से मिलते है तथापि आप जानते है कि उनमें से अधिकांश कालकवलित हो गया और आज अप्राप्य है तथापि यहाँ प्राप्त अभिलेख प्राचीन काल से गढ़वाल में संस्कृत की समृद्ध परम्परा के परिचायक हैं। इन अभिलेखों का विवरण इस प्रकार है -

1.3.2.1 देवप्रयाग में प्राप्त यात्री नामावली:-

देवप्रयाग में दूसरी शताब्दी से पाँचवी शताब्दी तक उत्तराखण्ड (बदरी-केदार) की यात्रा पर आए हुए यात्रियों का नामोल्लेख संस्कृत में प्राप्त होना इस तथ्य का सूचक है कि तब यहाँ संस्कृत भाषा प्रचलन में थी।

1.3.2.2 उत्तरकाशी के शक्तिस्तम्भ का लेख:-

उत्तरकाशी के गोपेश्वर तथा वाराहाट में त्रिशूल पर उत्कीर्ण लेख की भाषा भी संस्कृत है। यह लेख 12 वीं शताब्दी का है। इस लेख में गणेश्वर नामक नरेश द्वारा राज-पाट छोड़कर कैलाश प्रस्थान के पश्चात् उसके पुत्र श्रीगृह के राज्यारूढ़ होने का तथा उसके गुणों एवं कीर्ति का वर्णन प्राप्त होता है। यह अभिलेख ''श्रीगृह का त्रिशूल अभिलेख'' कहलाता है।

1.3.2.3. अनुसूया देवी मन्दिर मार्ग पर पाषाण अभिलेख:-

इस अभिलेख की भाषा शुद्ध संस्कृत है। इसका समय छठी शताब्दी के आस-पास का है। इसमें राजा सर्व वर्मन से संबंधित विवरण अंकित है।

1.3.2.4 पलेठी का शिलालेख:-

गंगा और अलकनन्दा के संगम पर स्थित देवप्रयाग से लगभग 12 किमी. दूर पश्चिमोत्तर में टिहरी के अन्र्तगत पट्टी खास की गहरी घाटी में स्थित पलेठी के प्राचीन मन्दिरों के अवशेषों पर उत्कीर्ण शिलालेख संस्कृत भाषा में है। ये अभिलेख अत्यन्त टूटी-फूटी हालत में है। इनका समय लगभग 7 वीं शताब्दी है। इन अभिलेखों में से एक में तो राजा आदित्यवर्मन, परमभट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर कल्यानवर्मा, आदित्यवर्धन तथा करवर्धन का सन्दर्भ है जबकि दूसरे खण्डित पूर्ण लेख में कल्याणवर्मन् और आदित्यवर्मन के नाम आते हैं।

1.3.2.5 लाखामण्डल-ईश्वरा का शिलालेख:-

यह शिलालेख छठी से सातवी शताब्दी वि0 का है। इसकी भाषा परिमार्जित (शुद्ध) संस्कृत है। इसमें द्विजवर्मन् के शासनकाल में ब्रह्मपुर जिले में स्थित कार्तिकेयपुर का वर्णन किया

गया है, जो कि वर्तमान जोशीमठ प्रतीत होता है। यह शिलालेख यदुवंशी राजर्षि सेनवर्मन् के आगे उसके पुत्र पौत्र प्रपौत्र आदि वंशावली का वर्णन करता है।

1.3.2.6 कालीमठ शिलालेख:-

कालीमठ के मन्दिर की दीवारों पर रूद्रसुनू का शिलालेख संस्कृत भाषा में है। इसका समय 10 वीं से 12 वीं शताब्दी है। यह कत्यूरी कालीन शिलालेख प्रतीत होता है। यह लेख मात्र 18 पंक्तियों का है। इसमें गिरिपति मंदिर के संरक्षक किन्हीं रूद्र नामक सामन्त के पुत्र (रूद्रसुनू) बालपन में सर्व विजेता बन गए थे और उनके द्वारा ही इस मन्दिर का निर्माण करवाया गया इस आशय का लेख प्राप्त होता है।

1.3.2.7 नाला-मणदेव का शिलालेख:-

गुप्तकाशी सं एक मील दूर नाला में एक पत्थर का एक स्तूप है, जो बौद्ध धर्म के चिह्न का अवशेष प्रतीत होता है। नाला के समीप 'ललितामाई' मन्दिर के पास स्थित छोटे मन्दिर के द्वार के ऊपर एक शिलालेख है। यही मणदेव का शिलालेख कहलाता है। इसमें 1203 वि0 में मन्दिर निर्माण का उल्लेख संस्कृत भाषा में उत्कीर्ण है।

1.3.10 अन्य अभिलेख:-

इनके अलावा चाँदपुर गढ़ी का शिलालेख (कनकपाल से संबंधित), गोपेश्वर में प्राप्त अशोकचल्ल का अभिलेख, वाराहाट (उत्तरकाशी) में प्राप्त त्रिशूल के निचले भाग का लेख, देवप्रयाग के क्षेत्रपाल के मन्दिर-द्वार के ऊपर सहजपाल का शिलालेख, देवप्रयाग में ही रघुनाथ मंदिर के पीछे वामन गुफा के प्रवेश स्थान के ऊपर अंकित शिलालेख, महाराज फतेहशाह के सिक्के का लेख, उत्तरकाशी के परशुराम मंदिर पर अंकित अभिलेख, यहीं के विश्वनाथ मंदिर द्वार पर अंकित अभिलेख, टिहरी के बदरीनाथ मंदिर के ऊपर दरवाजे पर अंकित अभिलेख तथा कत्यूरी अभिलेख, जिनमें पाँच ताम्रपत्रांकित लेख और एक शिलालेख है, भी गढ़वाल में संस्कृत की समद्ध परम्परा को दर्शाते है।संस्कृत भाषा में लिखित समृद्ध अभिलेखीय परम्परा के होते हुए भी गढ़वाल में संस्कृत भाषा में लिखित प्राचीन साहित्य अनुपलब्ध है। संभवतः राजनीतिक अस्थिरता ने प्राचीन साहित्य को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया था अथवा गोरखों के राज्य में वह नेपाल ले जाया गया। चाहे जो भी कारण रहा हो उत्तराखण्ड के गढ़वाल क्षेत्र में हमें प्राचीन लिखित संस्कृत साहित्य अप्राप्य ही है।

1.3.3. कुमाऊँ में संस्कृत साहित्य की परम्परा:-

गढ़वाल की अपेक्षा कुमाऊँ में प्राचीन काल से ही संस्कृत साहित्य प्रचुर मात्रा में देखने को मिलता है। यहाँ 8 वीं शताब्दी के बाद अनेकानेक कवि तथा साहित्यकार हुए उनके द्वारा रचित पर्याप्त संस्कृत साहित्य उपलब्ध है। कुमाऊँ में चन्द राजाओं का आगमन 700 ई0 के लगभग हुआ। इससे पूर्व यहाँ कत्यूरियों का राज था। उस काल के अनेक ताम्रपत्र, शिलालेख

आदि प्राप्त हुए हैं जो संस्कृत भाषा में अंकित है। चन्दों का शासन काल तो कुमाऊँ में संस्कृत के विकास एवं प्रचार-प्रसार की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। आप जानते होंगे कि चन्द नरेश संस्कृतानुरागी थे। वे काशी से संस्कृत विद्वानों को अपने यहाँ आमंत्रित करते थे। उन्होंने अनेक संस्कृत पाठशालाएँ खुलवाई। योग्य विद्यार्थियों को वे राजकीय खर्च पर विद्याध्ययन हेतु काशी भी भेजते थे। अनेक चन्द नरेश स्वयं संस्कृतज्ञ एवं साहित्यकार भी थे। चन्द शासकों ने संस्कृत को राजभाषा का दर्जा दिया। इस तरह यह काल संस्कृत के लिए स्वर्णिम काल माना जाता है।वर्तमान में उपलब्ध ऐतिहासिक प्रमाणों के आधार पर कहा जा सकता है कि कुमाऊँ के सर्वप्रथम ज्ञात साहित्यकार श्रीहरिहर है। आगे यह परम्परा अविच्छिन्न रही। कुमाऊँ के विद्वान संस्कृत साहित्यकारों का परिचय इस प्रकार है -

1.3.3.1 आचार्य हरिहर एवं उनके ग्रन्थ:-

श्रीहरिहर कुमाऊँ में चन्दवंशी राजाओं के मूल पुरूष सोमचन्द के साथ यहाँ बदरीनाथ की यात्रा हेतु आए और यही बस गए। राजा सोमचन्द का समय इतिहासकारों के अनुसार 700-721 ई. के आस-पास माना गया है। अतः हरिहर का समय भी तभी का माना जा सकता है। हरिहर मूलतः कान्यकुब्ज प्रदेश के पैती ग्राम के कश्यप गोत्री ब्राह्माण थे। कुमाऊँ में ये कश्यप गोत्री 'पाण्डे' कहलाते हैं। श्रीहरिहर ने पारस्कर गृहयसूत्र पर 'भाष्य' की रचना की थी। कुमाऊँ में प्रचलित कर्मकाण्ड में श्रीहरिहर का नाम आदर से लिया जाता है। हरिहर विरचित 'भाष्य ग्रन्थ में तीन काण्ड और 51 कण्डिकाएं है। प्रथम काण्ड में होमविधि, अरणिमन्थन, विवाहविधि के प्रधान अंग, गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण तथा अन्नप्राशन आदि संस्कारों का वर्णन है। द्वितीय काण्ड में चूड़ाकर्म, उपनयन, ब्रह्मचर्यव्रत, पंचमहाज्ञविधि, इन्द्रयज्ञ तथा सीतायज्ञ प्रधान रूप से वर्णित हैं। तृतीय काण्ड में नवान्नभोज विधि, अशौच विधान, प्रायश्चित विधान, सभा प्रवेश विधि, हस्त्यारोहरण, कर्मविधान तथा अष्टकाश्राद्धपद्धति आदि विषयों का समावेश है।

1.3..3.2 केदार पाण्डे एवं उनके ग्रन्थ:-

श्रीहरिहर के बाद 12 वीं शताब्दी में जन्में श्री केदारपाण्डे द्वारा विरचित ग्रन्थ 'वृत्तरत्नाकर' ही आज उपलब्ध है। बीच की कालावधि की कोई रचना आज प्राप्त नहीं है। संभवतः इस बीच की रचनाएं नष्ट हो चुकी है। केदार पाण्डे आचार्य हरिहर की ही 10 वीं पीढ़ी में उत्पन्न पद्मापति पाण्डे के पुत्र थे। यद्यपि पद्मापति स्वयं शैवदर्शन के प्रकाण्ड विद्वान थे किन्तु इनका कोई ग्रन्थ आज नहीं मिलता। केदार पाण्डे का 'वृत्तरत्नाकर' छन्दशास्त्र विषयक प्रसिद्ध ग्रन्थ है। इसका रचनाकाल 1135 ई. के आस-पास मान्य है। यह केदार पाण्डे की एकमात्र रचना है। 136 श्लोकों में विरचित यह ग्रन्थ 6 अध्यायों में विभक्त है। इस ग्रन्थ की 30 से अधिक टीकाएँ हो चुकी, जिनमें विक्रम भट्ट की टीका सबसे पुरानी मानी जाती है।

1.3..3.4 राजा रूद्रचन्द देव एवं उनके ग्रन्थ:

राजा रूद्रचन्द देव द्वारा विरचित चार ग्रन्थ उषारागोदया नाटिका, श्यैनिकशास्त्रम्, तथा त्रैवर्णिक धर्मनिर्णय तथा ययातिचरितम् है। इनमें से उषारागोदया नाटिका सन् 1979 ई. में सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय से प्रकाशित हो चुकी है। श्यैनिकशास्त्रम् प्राचीन काल में प्रचलित आखेट विद्या का प्रामाणिक ग्रन्थ है तो त्रैवर्णिक-धर्मनिर्णय स्मृति तुल्य (मनुस्मृति आदि की तरह) ग्रन्थ है। इनका ययातिचरितम् ग्रन्थ अनुपलब्ध है। राजा रूद्रचन्द मुगल सम्राट अकबर के समकालीन थे। इनका समय 16 वीं सदी का उत्तरार्ध माना जाता है।

1.3.3.5 रूद्रमणि जोशी एवं उनका साहित्य:

रूद्रमणि अपने समय के प्रसिद्ध ज्योतिषी थे। ये चन्द राजा बाजबहादुर के सभा पण्डित थे। अतः इनका समय सन् 1638-1678 ई0 मान्य है। ये अल्मोड़ा से कुछ दूरी पर स्थित 'माला' गाँव के निवासी थे। इनके पिता का नाम श्री महादेव था। पण्डित रूद्रमणि की दो रचनाएँ है - 'रूद्रप्रदीप' एवं 'ज्योतिषचन्द्रार्क'। रूद्रप्रदीप इनकी पहली रचना है। इसमें कवि ने सूक्ष्म रूप से फलित विषयों का निर्देश किया है। रूद्रप्रदीप में पाँच अध्याय है, जिनमें विभिन्न कर्मकाण्डों की पद्धतियों का परिचय छंदोबद्ध रूप में दिया गया है। यह ग्रन्थ अब तक अप्रकाशित है। ज्योतिषचन्द्रार्थ में कुल आठ अध्याय हैं जिनमें से प्रारम्भ के पाँच अध्याय प्रकाशित भी हो चुके हैं। रूद्रमणि ने 'काशिका' नाम से इस ग्रन्थ की टीका भी स्वयं लिखी है।

1.3.3.6 अनन्तदेव एवं उनका साहित्य:

अनन्तदेव राजा बाजबहादुरचन्द के दरबारी कवि थे। अतः इनका समय भी 17 वीं शताब्दी का उत्तर भाग सिद्ध होता है। अनन्तदेव मूलतः महाराष्ट्र के थे किन्तु इन्होंने अपनी संस्कृत साधना बाजबहादुर के आश्रय में की। अनन्तदेव की संस्कृत साहित्य को देन अमूल्य है। इन्होंने निम्नलिखित ग्रन्थों की रचना की -

(1) स्मृतिकौस्तुभ
(2) प्रायश्चितदीपिका
(3) कालबिन्दुनिर्णय
(4) अग्निहोत्रप्रयोग
(5) आग्रहायणप्रयोग
(6) चातुर्मास्य प्रयोग
(7) अन्त्येष्टि पद्धति
(8) नक्षत्र सत्र प्रयोग
(9) भगवन्नामकौमुदी प्रकाश टीका
(10) भगवद्भक्तिनिर्णय

(11) मथुरासेतु

(12) मीमांसान्यायप्रकाशी की टीका(भट्टालंकार)

(13) वाक्य भेदभाव

(14) देवतातत्त्वविचार

(15) सिद्धान्त तत्त्व

1.3.3.7 पण्डित शिवानन्द पाण्डे एवं उनका साहित्य:

शिवानन्द पाण्डे लिखित दो संस्कृत काव्यों का उल्लेख मिलता है- 'कल्याणचन्द्रोदय' एवं 'कूर्माचलकाव्य'। शिवकवि चन्द नरेश कल्याणचन्द के राजगुरू एवं दरबारी कवि थे। इनका समय सन् 1670 से 1750 ई0 सिद्ध होता है। अपने आश्रयदाता कल्याण चन्द की कीर्त्ति गाथा के रूप में इन्होंने कल्याणचन्द्रोदय काव्य लिखा। यह एक ऐतिहासिक काव्य है। इनका कूर्माचलकाव्य आज प्राप्त नहीं है।

1.3.3.8 कुमाऊँ में प्राप्त अभिलेख:

कूर्माचल में संस्कृत साहित्य की एक समृद्ध परम्परा रही। इस परम्परा में 8 वीं शताब्दी से 17 वीं शताब्दी तक के साहित्यकारों के बारे में आप जान चुके हैं। इससे पूर्व भी कुमाऊँ में संस्कृत के प्रचलन के संकेत मिलते हैं। विक्रम की तीसरी सदी के प्रारंभिक वर्षों के कुछ सिक्के अल्मोड़ा में मिले हैं, जिनमें संस्कृत से प्रभावित पालि तथा प्राकृत भाषा का प्रयोग मिलता है। तीसरी शताब्दी के बाद के प्राप्त सभी अभिलेख संस्कृत भाषा में छन्दोबद्ध हैं। सातवीं सदी के बाद के जो ताम्रपत्रांकित अभिलेख मिले हैं उनमें समास बहुत संस्कृत गद्य-पद्य की वही छटा देखने को मिलती है जो दण्डी, बाण और सुबन्धु की शैली में दिखाई देती है।कुमाऊँ में संस्कृत भाषा में लिखे सबसे प्राचीन लेख अल्मोड़ा जनपद के 'तालेश्वर' से प्राप्त हुए हैं। ये लेख छठी से सातवीं सदी के हैं। अल्मोड़ा के जागेश्वर के महामृत्युंजय मन्दिर में संस्कृत भाषा में अंकित लेख 8 वीं से 10 वीं शताब्दी का है। इसी तरह बागेश्वर के बैजनाथ मन्दिर में 11 वीं सदी का संस्कृत भाषा में लिखा लेख प्राप्त होता है। चन्द नरेश रूद्रचन्द देव द्वारा सन् 1568 ई. से सन् 1596 ई. तक जारी किए गऐ 6 ताम्रपत्रांकित लेख संस्कृत भाषा में होने की जानकारी मिलती है। इसके अलावा राजा लक्ष्मणचन्द (1620 ई.) का, त्रिमलचन्द का (1633 ई.), बाजबहादुरचन्द का (1720 ई.) ताम्रपत्र संस्कृत भाषा में है। इन अभिलेखों से कुमाऊँ में संस्कृत की अजस्र धारा का परिचय मिलता है।उत्तराखण्ड में आगे भी संस्कृत में साहित्य रचना लगातार होती रही। जिनका उल्लेख आगे की इकाईयों में किया जाएगा।

1.4 सारांश:-

उत्तराखण्ड की पावन धरती, हरियाली से परिपूर्ण वातावरण कल-कल करती नदियों की पवित्र धारा, उत्तुंग हिमाच्छादित पर्वत शिखर, ऐसा वातावरण किसी भी संवेदनशील व्यक्ति

को कवि बना देने के लिए पर्याप्त है। अतः उत्तराखण्ड यदि प्राचीन काल से ही मेधावी ऋषि-मुनियों और साहित्यकारों की कर्मभूमि बना रहा तो इसमें आश्चर्य कैसा ?

उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊँ दोनों क्षेत्रों में अनेकानेक अभिलेख- ताम्रपत्र-शिलालेख आदि की प्राप्ति होना इस क्षेत्र में संस्कृत के प्रचलन के ठोस सबूत है। गढ़वाल में यद्यपि प्राचीन संस्कृत साहित्य आज उपलब्ध नहीं है तथापि निश्चित रूप से वहाँ संस्कृत साहित्य की स्थिति रही होगी जो राजनीतिक अस्थिरता और विदेशी आक्रमण के चलते या तो नष्ट हो गया या अन्यत्र ले जाया गया। कुमाऊँ में प्राप्त अभिलेखीय सामग्री तथा लिखित संस्कृत साहित्य इस क्षेत्र में संस्कृत साहित्य की उत्कृष्ट परम्परा के परिचायक है। इस इकाई में 17 वीं शताब्दी पर्यन्त ही उत्तराखण्ड में संस्कृत साहित्य की परम्परा का वर्णन किया गया है क्योंकि इससे आगे के कालखण्डों में प्राप्त संस्कृत साहित्यकारों एवं उनके साहित्य का उल्लेख आगे की इकाईयों में किया जाएगा।

अभ्यास प्रश्न:

टिप्पणी:

(1) पलेठी का शिलालेख

(2) उत्तरकाशी के शक्ति स्तम्भ का लेख

(3) अनन्तदेव एवं उनका साहित्य

(4) कुमाऊँ में प्राप्त अभिलेख

बहुविकल्पीय प्रश्न:

1. किस पुराण में उत्तराखण्ड का उल्लेख 'केदारखण्ड-मानसखण्ड' के रूप में आया है-

(क) अग्निपुराण

(ख) मत्स्य पुराण

(ग) स्कन्दपुराण

(घ) गरूढ़पुराण

2. कपिल एवं सनत्कुमारों का आश्रम कहाँ था?

(क) ऋषिकेश

(ख) हरिद्वार

(ग) केदारनाथ

(घ) कर्णप्रयाग

3. मालिनी नदी के तट पर किसका आश्रम था?

(क) भृगु का

(ख) कण्व का

(ग) गौतम का

(घ) बाल्मीकि

4. पलेठी का शिलालेख किस शताब्दी का है?

(क) चैथी

(ख) पाँचवी

(ग) छठी

(घ) सातवीं

5. आचार्य हरिहर के द्वारा रचित ग्रन्थ है -

(क) श्यैनिकशास्त्रम्

(ख) नक्षत्रसत्र प्रयोग

(ग) पारस्करगृहयसूत्र भाष्य

(घ) त्रैवर्णिक धर्मनिर्णय

6. वृत्तरत्नाकर के रचयिता कौन है-

(क) पिंगल

(ख) केदार पाण्डे

(ग) शिवानन्द पाण्डे

(घ) रूद्रमणि जोशी

रिक्त स्थान पूर्ति

1. उत्तरकाशी के शक्तिस्तम्भ का लेख ..... शताब्दी का है।

2. लाखामण्डल -ईश्वरा के शिलालेख में राजा ..... के शासन का वर्णन है।

3. कालीमठ का शिलालेख ..... से संबंधित है।

4. हरिहर मूलतः ..... के निवासी थे।

5. रूद्रचन्ददेव का ..... ग्रन्थ अनुपलब्ध है।

6. अनन्तदेव के कुल ..... ग्रन्थ प्राप्त होते हैं।

अतिलघुउत्तरीय प्रश्न

1. शिवानन्द पाण्डे का एकमात्र उपलब्ध ग्रन्थ कौन सा है?

2. अनन्तदेव मूलतः कहाँ के रहने वाले थे?

3. कुमाऊँ में संस्कृत भाषा में लिखित सबसे पुराना लेख कहाँ प्राप्त हुआ है।

4. कश्यप और चरक का आश्रम कहाँ पर स्थित था?

5. वाल्मीकि का आश्रम पौड़ी के निकट किस स्थान पर होने के प्रमाण मिलते हैं?

6. आदि शंकराचार्य के गुरू का नाम क्या था?

सत्य/असत्य बताइए

1. वैदिक काल का समस्त साहित्य खड़ी बोली में प्राप्त होता है।

2. गंगा नदी के तट पर व्यास ने पुराणों की रचना की थी।
3. पाराशर का आश्रम यमुनोत्री के पास स्थित था।
4. हरिहर विरचित पारस्करगृहयसूत्र भाष्य में चार काण्ड है।
5. स्मृतिकौस्तुभ अनन्तदेव की रचना है।
6. रूद्रचन्द देव द्वारा दिए गए 6 ताम्रपत्रांकित लेख प्राप्त होने का प्रमाण मिलता है।

1.5 पारिभाषिक शब्द/कठिन शब्द:-

पाण्डुलिपि: हस्तलिखित प्राचीन ग्रन्थ। पुराने जमाने में भूर्जपत्र पर लेख अंकित किये जाते थे। भूर्जापत्र सफेद रंग के होते है। इस पर अंकित प्राचीन ग्रन्थ पाण्डुलिपि के रूप में होते थे। यद्यपि आज लगभग सौ वर्ष पुराने कागज पर अंकित ग्रन्थ यदि अप्रकाशित हो तो वह हस्तलिखित प्रति पाण्डुलिपि कही जाती है।

अभिलेख: ऐसे प्राचीन लेख, जो ताम्रपत्र, शिला, इष्टिका या काष्ठ आदि पर अंकित हो और किसी प्राचीन ऐतिहासिक तथ्य को प्रस्तुत करते हो अभिलेख कहे जाते है।

टीका: किसी सूत्र ग्रन्थ की सरल रूप में की गयी विस्तृत व्याख्या ही टीका कहलाती है।

1.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर:-

टिप्पणी

1. हेतु इकाई की उपखण्ड संख्या 1.3.6 देखें।
2. हेतु इकाई की उपखण्ड संख्या 1.3.4 देखें।
3. हेतु इकाई की उपखण्ड संख्या 1.3.11.7 देखें।

बहुविकल्पीय

1. ग
2. ख
3. ख
4 .घ
5. ग
6. ख

रिक्त स्थान पूर्ति

1. 12 वीं शताब्दी
2. द्विजवर्मन
3. रूद्रसुनू
4. कान्यकुब्ज
5. ययातिचरितम्

6. 15

अतिलघुउत्तरीय

1. कल्याणचन्द्रोदय
2. महाराष्ट्र
3. तालेश्वर में
4. गन्धमादन पर्वत (बदरीनाथ)
5. सीतोन्स्यू
6. गोविन्दपाद

सत्य/असत्य

1. असत्य
2. असत्य
3. सत्य
4. असत्य
5. सत्य
6. सत्य

1.7 सन्दर्भ गन्थ/सहायक सामग्री:-

1. गढ़वाल की संस्कृत साहित्य को देन, डॉ. प्रेमदत्त चमोली
2. कूर्मांचल में संस्कृत साहित्य की परम्परा, बसन्तबल्लभ भट्ट
3. कुमाऊँ का इतिहास, बद्रीदत्त पाण्डे

1.8 निबन्धात्मक प्रश्न:-

1. कुमाऊँ के अभिलेखीय परम्परा का वर्णन कीजिए।
2. गढ़वाल की अभिलेखीय परम्परा पर लेख लिखिए।
3. कुमाऊँ के प्राचीन संस्कृत साहित्यकारों का परिचय दीजिए।

इकाई 2: लोकरत्न गुमानी का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 इकाई की पाठ्यसामग्री

2.3.1 लोकरत्न गुमानी के पूर्वज एवं उनका जन्म

2.3.2 शिक्षा-दीक्षा

2.3.3 मृत्यु

2.3.4 लोकरत्न पन्त का कृतित्व

2.3.4.1 हितोपदेशतकम्

2.3.4.2 समस्यापूर्तिः

2.3.4.3 ज्ञानभैषज्यमंजरी

2.3.4.4 भक्तिविज्ञप्तिसार

2.3.4.5 रामनामपंचाशिका

2.3.4.6 रामनामविज्ञप्तिसारः

2.3.4.7 रामाष्टकम् अथवा रामाष्टपदी

2.3.4.8 विज्ञप्तिसारः

2.3.4.9 राममहिमावर्णनम्

2.3.4.10 पंचपंचाशिका

2.3.4.11 भक्तिविज्ञप्रिसारः

2.3.4.12 दुर्जनदूषणम्

2.3.4.13 जगन्नाथाष्टकम्

2.3.4.14 गंगार्याशतकम्

2.3.4.15 क्रीड़ाविषयक ग्रन्थ

2.3.4.16 देवतास्त्रोत्राणि

2.3.4.17 अन्य ग्रन्थ

2.3.4.18 लोकरत्न गुमानी के व्यक्तितत्व की विशेषताएँ
2.4 सारांश
2.5 पारिभाषिक शब्दावली
2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.7 निबन्धात्मक प्रश्न
2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ/सहायक पुस्तकें

2.1 प्रस्तावना:-

''उत्तराखण्ड में संस्कृत साहित्य की आधुनिक प्रतिभाएँ'' नामक खण्ड एक की यह द्वितीय इकाई है। इससे पहले की इकाई में उत्तराखण्ड में संस्कृत साहित्य की परम्परा के बारे में भलीभाँति जान चुके हैं। इस इकाई में आप 18 वीं सदी के अन्त में अवतरित हुए कूर्मांचल की संस्कृत प्रतिभा लोकरत्न गुमानी जी से परिचति होंगे।

इस इकाई के अध्ययन के बाद लोकरत्न गुमानी जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व अर्थात उनकी रचनाओं के विषय में भलीभाँति जान पाएंगे साथ ही उनके व्यक्तित्व की विशेषताओं को भी जानेंगे।

2.2 उद्देश्य:-

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप–

- बता सकेंगे कि 18 वीं सदी के अन्त में जन्मे लोकरत्न गुमानी के पूर्वज कौन थे ? उनका जन्म कब और कहाँ हुआ।
- भलीभाँति समझा सकेंगे कि लोकरत्न का 'गुमानी' नाम साहित्य जगत में कैसे प्रसिद्ध हुआ? उनकी शिक्षा-दीक्षा तथा मृत्यु आदि के बारे में भी आप अच्छे से समझा सकेंगे।
- आप अच्छी तरह बता पाएंगे कि लोकरत्न पन्त गुमानी ने किस-किस प्रकार के ग्रन्थों की रचना की।
- लोकरत्न गुमानी के रामभक्तिपरक, आयुर्वेद विषयक, समस्यापूर्ति परक तथा अन्यान्य ग्रन्थों की विषयवस्तु के बारे में भलीभाँति बता सकेंगे।
- लोकरत्न गुमानी के व्यक्तित्व की विशेषताओं के बारे में भली प्रकार बता सकेंगे।

2.3 इकाई की पाठ्य सामग्री:-

2.3.1 लोकरत्न पन्त के पूर्वज एवं उनका जन्म:

कवि के पूर्वज महाराष्ट्र के कुलीन ब्राह्मण थे। चन्दवंशी राजाओं के शासनकाल में ये कुमाऊँ में आकर बस गए और फिर यहीं के होकर रह गए। गुमानी का जन्म विक्रम संवत 1847 (ईसवी सन् 1790) को नैनीताल जनपद के काशीपुर नामक स्थान में हुआ था। ये भारद्वाज गोत्री 'पन्त' ब्राह्माण थे। इनके पिता का नाम देवनिधि पन्त तथा माता का नाम देवमंजरी था। कवि का बाल्यकाल पिथौरागढ़ जनपद के उपराड़ा नामक गाँव में व्यतीत हुआ।

2.3.2 शिक्षा-दीक्षा:

इनकी प्रारम्भिक शिक्षा इनके पितृव्य श्रीमन् पंडित राधाकृष्ण वैद्यराज के सान्निध्य में हुई। आगे की शिक्षा इन्होंने कलौन ग्रामवासी पंडित हरिदत्त ज्योतिर्विद से प्राप्त की। गुमानी का वास्तविक नाम लोकरत्न था लेकिन इनके पिता प्रेम से इन्हें गुमानी कहते थे। यह कहावत भी

इनके बारे में प्रचलित है कि काशीपुर नरेश गुमानसिंह देव की राजसभा को अलंकृत करने के कारण ये गुमानी कहलाये और लोक में तथा साहित्य-जगत में इसी नाम से प्रख्यात हुए।कवि गुमानी बाल्यकाल से ही बुद्धिमान किन्तु किंचित चंचल प्रवृत्ति के थे। इन्होंने देश के विभिन्न भागों में देशाटन कर अपने व्यावहारिक ज्ञान की अभिवृद्धि की। राम के अनन्य भक्त लोकरत्न गुमानी का अधिकांश जीवन साहित्य-साधना में ही व्यतीत हुआ। साहित्यादि विषयों में निष्णात ये विद्वान कवि आयुर्वेद के भी मर्मज्ञ थे। ये एक निपुण चित्रकार भी थे।

2.3.3 मृत्यु:

मात्र 56 वर्ष की अवस्था में इस्वी सन् 1846 को इस महान संस्कृत विद्वान एवं साहित्यकार की भौतिक लीला का अवसान हुआ। कवि का जीवनकाल कुमाऊँ-गढ़वाल की पराधीनता का समय था। इन्होंने गोरखा शासन की कठोरता का प्रत्यक्ष अनुभव किया था। पुनः अंग्रेजों द्वारा कुमाऊँ एवं गढ़वाल की स्वतंत्रता का हरण होते तथा उत्तराखण्ड की जनता को पराधीनता की बेड़ियों में छटपटाते हुए उन्होंने देखा था। जन-जन की यह पीड़ा उनके काव्य में यत्र-तत्र मुखर हुई है।

2.3.4 लोकरत्न पन्त का कृतित्त्व:

यद्यपि कविवर गुमानी ने किसी भी बड़े ग्रन्थ की रचना नहीं की, तथापि विद्वानों के बीच ऐसी मान्यता है कि इन्होंने एक लाख से भी अधिक पद्य रचे। इनकी अनेक छिटपुट रचनाएँ है। ये आशुकवि थे। किसी भी परिस्थिति में किसी भी विषय पर तत्काल पद्य रचना कर देना इनके लिए सहज था। यद्यपि चिरकाल तक ये अन्धकार में रहे तथापि एक लम्बी कालावधि तक केवल श्रुतिपरम्परा के माध्यम से किसी कवि की कविताओं का जीवित रहना उसकी लोकप्रियता को प्रकट करता है। कविवर गुमानी के संस्कृत भाषा विषयक काव्य निम्न प्रकार है:

2.3.4.1 हितोपदेशशतकम्:

क्षेमेन्द्र की चारूचर्या से प्रभावित इस नीतिविषयक ग्रन्थ में सौ आर्या छन्द है। इस ग्रन्थ का प्रत्येक पद्य एक-एक उपदेश के साथ दृष्टान्तपूर्वक एक पौराणिक आख्यान को प्रस्तुत करता है। प्रत्येक छन्द के तीन चरणों में किसी पुरा-कथा का उल्लेख करते हुए छन्द के चतुर्थ चरण में कवि तत्सम्बन्धी उपदेश देता है। यथा -

सहधर्मिणीं वनान्ताद् दशरथसूनोर्जहार दशवक्त्रः।
बन्धनमाप समुद्रो 'न दुर्जनस्यान्तिके निवसेत्।।'

कवि ने बड़ी ही सरल संस्कृत भाषा में जन-जन को नीतिविषयक उपदेश दिए है। कतिपय उदाहरण द्रष्टव्य है:

(क) दुष्टे दण्डः प्रयोक्तव्यः।

(दुष्ट व्यक्ति के प्रति दण्ड का प्रयोग करना चाहिए अर्थात् दुष्ट को दण्डित किया जाना उचित है।)

(ख) स्त्रियं विवस्त्रां न वीक्षेत् ।

(स्त्री को वस्त्रहीन अवस्था में नही देखना चाहिए।)

(ग) क्वापि न गच्छदनाहूतं ।

(बिना बुलाए कहीं भी नही जाना चाहिए।)

(घ) दुष्टजनं दूरतः प्रणमेत् ।

(दुष्टजन को दूर से ही प्रणाम करना चाहिए अर्थात् दुष्टजन से दूर ही रहना उचित है।)

(ड.) नैकाकी संचरेद् विपिनं ।

(वन में अकेले घूमना नहीं चाहिए।)

कवि गुमानी ने इन नीति श्लोकों में जैसी सरल एवं सर्वजनग्राह्य संस्कृत का प्रयोग किया है वैसा ही प्रयोग अन्य कवियों एवं विद्वानों द्वारा भी किया गया होता तो आज संभवतः संस्कृत भाषा सामान्य जन के लिए इतनी दुरूह न होती।

2.3.4.2 समस्यापूर्ति:

यह कवि गुमानी की एक सर्वथा विलक्षण कृति है। इसमें सुन्दरतापूर्वक बहुप्रचलित लोकोक्तियों द्वारा समस्यापूर्ति की गई है। इसमें कवि श्लोक के आरम्भ के तीन चरणों में संस्कृत भाषा में समस्या को रखता है और चतुर्थ चरण में हिन्दी की लोकोक्ति को प्रस्तुत कर समस्यापूर्ति कर देता है। यथा:-

नादात्कन्यां बाणो दायी कृष्णध्वस्तो युद्धस्थायी।
पश्चादासीत्कन्यादायी झख मारी फिर खिचड़ी खाई।।

'जिस विधि राखै राम तिस विधि रहना भय्या - इस प्रचलित लोकोक्ति पर कवि की समस्यापूर्ति रमणीय है -

पूर्वमसुप्यत येन खटव्या हाटकमय्या
तेन नलेन प्रापितवने तृणशय्या।
वक्ति गुमानी देवशक्तिरिह नूनमज्य्या
जिस विधि राखै राम तिस विधि रहना भय्या।

कभी-कभी कवि पद्य के आरंभिक तीन चरण संस्कृत में रचकर अंतिम चरण में कुमाऊँनी बोली में समस्यापूर्ति करता है यथा -

शस्त्रपूरितो रथश्चमूभरः
सारथि बृहन्नला स्वयं धनुर्धरः।
कौरवैस्दप्यलं योद्धुमुत्तरः
'काठकि बिरालि करि माउं को कर।।

इसी प्रकार कभी नेपाली में पद्य के तीन चरणों को लिखकर कवि छन्द के चतुर्थ चरण में संस्कृत की लोकोक्ति द्वारा समस्या-पूर्ति करते हुए जन सामान्य के लिए नीतिपरक उपदेश दे देता है यथा -

अपना सबै पाउ वसाखु भाई,
तिन संग दुर्योधन ले अथाको।
गर्यो अचाक्ली फल दुःख पायो
'विनाश काले विपरीत बुद्धिः।।

काव्य मे समस्यापूर्ति एक पुरानी विधा है लेकिन कवि गुमानी ने अपनी इन समस्यापूर्तियों में संस्कृत के साथ-साथ कुमाऊँनी, नेपाली आदि जन प्रचलित बोलियों का प्रयोग करके एक विलक्षणता ला दी है। साथ ही उसे सामान्यजन के लिए ग्राह्य भी बना दिया है।

2.3.4.3 ज्ञानभैषज्यमंजरी:

इस ग्रन्थ में मात्र अस्सी पद्यों में आयुर्वेद की सहायता से वेदान्त की शिक्षा वर्णित है। यहाँ कवि पद्य के पूर्वार्ध में तत्वज्ञान का निर्देश करके उत्तरार्ध में दृष्टान्त के द्वारा किसी रोगनाशक औषधि का वर्णन करता है। यथा -

तत्वंपदैक्यभानं भवप्रवाहन् बहून् निवारयति।
कुटजेन्द्रजाम्बुपानं यद्वद् विविधानतीसारान्।।

अर्थात् 'तत्' पदार्थ ब्रह्म एवं त्वं पदार्थ जीव-इन दोनों का ऐक्य ज्ञान होना नाना प्रकार के भव (संसार) सम्बन्धी जन्म-मरण रूप प्रवाहों को उसी प्रकार नष्ट करता है जिस प्रकार कुटज (क्वेड़ा) की छाल एवं इन्द्र जौ (क्वेड़ा के बीज) का क्वाथ (काढ़ा) अनेक प्रकार के अतिसारों का निवारण करता है।

गुरूशास्त्रजोपदेशः समर्हणीयः सदा भवक्लिष्टैः।
व्रणिभिस्तु माननीयो गुग्गुलनिम्बोद्भवोलेपः।।

अर्थात् संसार से दुखित हुए मनुष्यों के लिए, गुरूमुख से निःसृत् शास्त्रोपदेश सदा ग्रहण किए जाने योग्य है। इसी प्रकार गुग्गुल एवं नीम का लेप भी व्रण (घाव से पीड़ित) रोगियों द्वारा सर्वदा आदरपूर्वक सेवन करना उचित है। संसार के दुःखों से पीड़ित मनुष्य गुरूपदेश को माने तथा व्रण रोगी गुग्गुल एवं नीम को पीसकर व्रण में लगावें।

प्रस्तुत रचना में कवि यत्र-तत्र भगवान राम के प्रति अपनी अटूट आस्था को भी व्यक्त करता है। यथाः -

रामार्चनात्सहार्दान्मिथ्यादृष्टिर्विलीयते यादृक्।
अरूचिर्नश्यति तादृक् समीक्षाकाद्रकस्वरसात।।

अर्थात् जैसे प्रेम सहित राम का पूजन करने से मिथ्या दृष्टि (नास्तिकता) दूर हो जाती है वैसे ही मधु सहित अदरक के रस का सेवन करने से अरूचि (रोगी की भोजनादि के प्रति) दूर हो

जाती है। इस तरह अपने इस ग्रन्थ में कवि ने अपने तत्व ज्ञान तथा आयुर्वेद विषयक चिकित्सकीय ज्ञान को बड़े ही सरल शब्दों में व्यक्त किया है।

2.3.4.4 भक्तिविज्ञप्ति सार:

इस ग्रन्थ के माध्यम से कवि ने अपने आराध्य देव श्री राम के प्रति लगभग सौ पद्यो में आत्म निवेदन किया है। उदाहरणार्थ:

देहं विदेह तनयाधिपते मदीयं
सा संश्रयिष्यति यदा तु जरा वराको।
हा हन्त हन्त मम जर्जरितेन्द्रियस्य
त्वत्तोऽपरः शरणदो भविता कः।।

इन्द्रियों के जर्जरित हो जाने पर राम के अतिरिक्त अन्य कोई शरणदाता कवि को दिखाई नहीं देता है। यह श्रीराम के प्रति उनकी अनन्य आस्था का सूचक है।

2.3.4.5 रामनापंचाशिका:

रामनापंचाशिका में कवि ने राम के प्रति अपनी भक्ति-भावना का परिचय देते हुए रकारादि क्रम से उनका नामसंग्रह किया है। यथा:

रामो रावणमर्दनो रघुवरो रूद्रप्रियो राघवो
राजेन्द्रो रणकर्कशो रविकुलोत्तंसो रमानायकः।
रत्नालंकरणो रहस्यचतुरो रुच्याकृती रूपवान्
रोचिष्णू रूचिराम्बरो रूचिकरो रज्यत्प्रजो राज्यदः।।

कवि गुमानी का चित्त राम में विशेष रूप से रमता है। राम को लक्ष्य करके कतिपय अन्य लघु ग्रन्थों की भी रचना इन्होंने की है।

2.3.4.6 रामनामविज्ञप्तिसारः

यह ग्रन्थ कवि की रामभक्ति का परिचायक है। इस ग्रन्थ में मात्र तैतीस पद्य है, जिनमें कवि स्वयं पर राम-कृपा की याचना करता है।

2.3.4.7 रामाष्टकम् अथवा रामाष्टपदी

यह ग्रन्थ भी श्रीराम के प्रति कवि की अनन्य आस्था को सूचित करता है। जयदेव के गीतगोविन्दम् की शैली का अनुकरण करते हुए गुमानी ने इस ग्रन्थ में ललित गेय पदों में श्रीराम की स्तुति की है। यथा-

भज भज भुवनाधारं स्मर जगदाधारं।
दशरथराजकुमारं धृतमनुजाकारं।।

2.3.4.8 विज्ञप्तिसार:

यह एक लघु कलेवर वाला ग्रन्थ है। इसमें मात्र तीस पद्य है। यहाँ भी कवि अपनी रामभक्ति को ही विज्ञापित करता है। ऐसा प्रतीत होता है कि भगवान श्रीराम के भक्तिभाव में तल्लीन लोकरत्न गुमानी के मुख से जब भी भक्तिमय वाणी निःसृत हुई तब-तब रामभक्ति से परिपूर्ण काव्य की सृष्टि हुई। उपर्युक्त लघु आकृति वाले रामभक्तिपरक ग्रन्थ इसी तथ्य को प्रकाशित करते हैं।

2.3.4.9 राममहिमावर्णनम्:

कविवर लोकरत्न गुमानी ने राम के प्रति अपनी अनन्य आस्था का प्रदर्शन करते हुए इस ग्रन्थ में कुल 127 पद्यों में राम की महिमा का गुणगान किया है।

2.3.4.10 पंचपंचाशिका:

यह वेदान्त विषयक ग्रन्थ है। मात्र पचपन पद्यों में ग्रथित इस ग्रन्थ का दूसरा नाम 'तत्त्वविद्योतिनी' भी है। इसमें उपनिषदों के सारभूत तत्त्वों का सरल संस्कृत भाषा में प्रतिपादन किया गया है। वेदान्त के जीव, ब्रह्म, आत्मा आदि गूढ़ तत्त्वों पर यह ग्रन्थ सहज ही प्रकाश डालता है। वेदान्त शास्त्र के प्रत्येक तथ्य को स्पष्ट करने के लिए यहाँ लौकिक व्यवहार को दृष्टान्त के रूप में उपनिबद्ध किया गया है। यथा -

स्वगुणैः पुरूषमाद्यं वशमानीयानुवर्तिनी माया
आनन्दयति विहारैर्नारी साध्वीव भर्तारम्।।

2.3.4.11 भक्तिविज्ञप्सिारः

एक सौ पद्यो वाला यह ग्रन्थ कविवर गुमानी के हृदय की भक्ति भावना का विज्ञापित करने वाला है।

2.3.4.12 दुर्जनदूषणम्

यह ग्रन्थ कवि को विशेष प्रिय आर्या छन्द में विरचित है। इसमें मात्र बयालिस पद्यों में दुष्टजनों की भत्र्सना तथा सज्जनों को उनसे दूर रहने की सलाह देते हुए लोकवि गुमानी कहते है:

हत्र्तु वयो जनन्याः कत्र्तुमवन्याः सुदूरं भारं।
क्लेशयतुमार्यलोकान् दुर्जन ते केवलं जन्म।।

अर्थात् हे दुर्जन। तेरा जन्म इस लोक में केवल तीन ही काम के लिए है। एक तो माता की युवावस्था का नाश करने के लिए, दूसरा पृथ्वी पर भारस्वरूप और तीसरा सज्जनों को दुःख देने के लिए।

द्विष्टस्य सज्जनेन द्विषंतोऽसज्जन तवोभयथा।
असिकूष्माण्डन्यायात् क्षयमुत्पश्यामि पापात्मन्।।

हे दुर्जन! सज्जन तुमसे द्वेष करें अथवा तू सज्जनों से द्वेष करे; दोनों ही स्थितियों में नाश तेरा ही देखता हूँ जैसा कुम्हड़े पर तलवार गिरे या तलवार पर कुम्हड़ा गिरे, दोनों ही में नाश तो कुम्हड़े का ही है।

2.3.4.13 जगन्नाथाष्टकम्:

इसमें भगवान जगन्नाथ को लक्ष्य कर भावपूर्ण ललित गीत रचे गए हैं। यह लघु कलेवर वाला ग्रन्थ है। इसमें मात्र आठ पद्य है।

2.3.4.14 गंगाआर्याशतकम्

इस ग्रन्थ में कवि ने एक सौ दो पद्यो में पतित पावनी गंगा की स्तुति की है। गंगा की स्तुति करते हुए कवि गुमानी कहते है -

करतलगतं कृपावति कैवल्यं त्वत्पयः समाश्रयताम्।
ज्ञानादेव विमुक्तिं वदतामुक्तिं मुधा मन्ये।।

गंगा से अपना संबन्ध कवि राम के कारण ही मानते है। इसी ग्रन्थ में एक स्थान पर वे कहते है:

रघुराजमात्मनोहं जनकं जानामि जानकीं जननीम्।
तदभिन्नैकतनुं त्वां मातापितरौ समं जाने।।

राम को वे अपना पिता और जानकी को अपनी जननी मानते है। उनसे अभिन्न सम्बन्ध होने के कारण ही हे गंगा! तुम भी कवि के लिए माता-पिता समान हो।

2.3.4.15 क्रीड़ा विषयक ग्रन्थ:

सद्रंजाष्टकम्, चतुःसारिकावर्णनम्, द्यूतवर्णनम् इनमें क्रमशः शतरंज, चैसर एवं द्यूतक्रीड़ा का वर्णन किया गया है। इन रचनाओं द्वारा कवि का फारसी भाषा विषयक ज्ञान प्रकट होता है। फारसी के शब्दों का प्रचुर प्रयोग करके कवि ने तत्कालीन शासकीय वातावरण पर फारसी के प्रभाव को सूचित किया है। यथा -

चड्गो वराचः सुरख किमाचः
सफेदश्म्शेर गुलामताजाः
सन्त्यष्टरंगा इह गञ्जफासु
पृथक् पृथक् द्वारशधा विभिन्ना।।

2.3.4.16 देवतास्तोत्राणि:

इस ग्रन्थ में गुमानी द्वारा गणेश-राम-शिव-सूर्य-सरस्वती-लक्ष्मी-दुर्गा-गंगा- हनुमान आदि देवी-देवताओं की स्तुति करते हुए अंत में पुनः श्रीराम की स्तुति की गई है। इन स्तुति-पद्यों में प्रायः संयुक्त व्यंजनों तथा दीर्घस्वरों का अभाव दिखाई देता है। गंगा की स्तुति दृष्टव्य है -

जय हरमुकुटतुहिनसहचरि, जय हरिपदनखजनितजले,
जय जलनिधिसति विमलवसनवति, जय भगवति करधृतकमले।
जय शतमखपुरविहरणकृतमुखि, जय शतमुखि शशधरधवले
जय जगजननि वृजिनभरविजयिनि, जय सुरधुनि कृतसुकृतफले।।

इन ग्रन्थों के अतिरिक्त लोकरत्न गुमानी द्वारा रचित अनेक ग्रन्थ है जिनमें से कुछ रचनाएँ लुप्त हो चुकी है; उनका केवल नाममात्र सुनाई देता है तथा कुछ ग्रन्थ जीर्ण-शीर्ण या खण्डित रूप में प्राप्त है। यथा - राममहिम्नस्तोत्रम्, कृष्णाष्टकम्, कालिकाष्टकम् ये तीनों ग्रन्थ आज अनुपलब्ध है।

2.3.4.17 अन्य ग्रन्थ:

कवि गुमानी अपने जीवन काल में देशाटन करते हुए जिन-जिन राजाओं के सानिध्य में रहे, उन राजाओं के जीवन-चरित पर इन्होंने ग्रन्थ-रचना की। यथा-

(1) पटियाला नरेश कर्णसिंह का जीवन चरित- यह सात सर्गों में रचित ग्रन्थ है।

(2) नहाणनरेश फतेहशाह जीवन चरित - यह तीन सर्गों में रचित है।

(3) अलवर नरेश वनेसिंह का नीतिविषयक ग्रन्थ - यह पाँच सर्गों में रचित ग्रन्थ है।

दुर्भाग्य से ये तीनों ग्रन्थ काल कवलित हो जाने के कारण आज अप्राप्य है। गुमानी कवि ने धर्मशास्त्र से संबंधित ग्रन्थों की रचना भी की जिनके नाम है - 'निर्णयसारः, 'तिथिनिर्णयः', 'कालनिर्णय', 'अशौचनिर्णयः'। ये ग्रन्थ नष्टप्राय स्थिति में वाराणसी निवासी पंडित जनार्दन पाण्डे के पुस्तकालय में प्राप्य है। लोकरत्न गुमानी प्रतिभा सम्पन्न आशुकवि थे। कवि ने परिस्थिति तथा वातावरण के अनुरूप अनेक विषयों पर स्फुट रूप से पद्य-रचनाएँ की। तत्कालीन अंग्रेजों की भाषानीति को लक्ष्यकर गुमानी कहते हैं- ने वेदकुशलं न स्मृतिविदं न तंत्रोद्धुरम्

न शास्त्रविहितश्रमं न समधीत साहित्यकम्
लिखन् पठति यावनीमपि य आंगरेजीं लिपिम्
तमेव वत् मन्यते बुधजनं फिरंगीजनः।।

इनके द्वारा रचित स्फुट पद्यों का विषय कहीं मनोविनोद है तो कहीं धर्म की कुरीतियों को उजागर करना कवि का लक्ष्य है। कहीं-कहीं अपने स्फुट पद्यों द्वारा कवि गुमानी अंग्रेजी राज्य की भत्र्सना करने से भी नहीं चूकते है। यथा - भारत में अंग्रेजों के आगमन को वे साक्षात् कलि का आगमन मानते है। अंग्रेजी शासन की लूट-खसोट, न्यायालयों में प्रचलित उत्कोच भक्षण (घूसखोरी) और वंचना को देख कवि गुमानी को ऐसा प्रतीत होता है जैसे अंग्रेज और कलि में कोई घनिष्ठ संबन्ध है -

कलि किल फिरंगिणा सकलिना फिरंगीजनो,
नभा इव तडित्वता स नभसा तडित्वानिव।
विभाति सुतरामहो कथयते गुमानी कवि
र्मिथः फलविधायको भवित योग्ययोः संगमः।।

हिन्दी भाषा में भी गुमानी की अनेक फुटकर रचनाएँ प्राप्त होती है। कविवर लोकरत्न गुमानी की ये प्राप्य-अप्राप्य, प्रकाशित-अप्रकाशित कृतियाँ उनकी कवित्व प्रतिभा तथा उनकी

संवेदनशीलता को अभिव्यक्त करती है। कवि की पूर्वोक्त कविताओं से उनके बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न व्यक्तित्व का पता चलता है।

2.3.4.18 लोकरत्न गुमानी के व्यक्तित्व की विशेषताएँ

कविवर गुमानी बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न कवि तथा संवेदनशील हृदय वाले विनोद प्रिय व्यक्ति थे। उनकी रचनाओं से उनके चरित्र की निम्नलिखित विशेषताएं प्रकट होती है:

बहुभाषाविद्: —

लोकरत्न गुमानी की अधिकांश रचनाएँ संस्कृत में हैं। उनकी संस्कृत भाषा सरल-सुगम एवं आलंकारिता आदि आडंबरों से सर्वथा परे जन-जन के लिए सुबोध है। हिन्दी (खड़ी बोली) का तो उन्हें आदि कवि कहना चाहिए। हिन्दी साहित्य के इतिहास में आधुनिक काल का आरम्भ भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (सन् 1850) से माना जाता है जबकि इससे चार वर्ष पूर्व ही सन् 1846 ई0 में ही खड़ी बोली में काव्य रचना करने वाले गुमानी गोलोकवासी हो चुके थे। अतः उन्हें हिन्दी (खड़ी बोली) का आदि कवि मानना चाहिए। संस्कृत एवं हिन्दी के अतिरिक्त वे कुमाऊँनी, नेपाली, अंग्रेजी एवं फारसी भाषा के भी ज्ञाता थे। नेपाली और कुमाऊँनी में उन्होंने पद्य-रचना की। शतरंज तथा चैसर आदि खेलों के वर्णन में उन्होंने अपने फारसी एवं अंग्रेजी विषयक ज्ञान का परिचय दिया है।

भक्तिभावना: —

गुमानी की रचनाओं से भगवान राम के प्रति उनकी अटूट आस्था का दिग्दर्शन होता है। यद्यपि उन्होंने हिन्दू धर्म के अन्यान्य देवी-देवताओं की स्तुति भी अपने काव्यों में की है लेकिन कवि का चित्त राममय है। सभी अवतारों, सभी वैदिक एवं पौराणिक देवी-देवताओं को वे राममय ही देखते है। भक्तिविज्ञप्तिसार, रामाष्टकम्, पंचपंचाशिका, रामनाम विज्ञप्तिसार, राममाहिमावर्णनम् आदि ग्रन्थ स्वतंत्र रूप से राम को ही समर्पित है। अन्य गूढ़ विषयों पर रचना करते समय भी वे राम नाम का स्मरण करना नहीं भूलते। यह सब राम के प्रति कवि की अगाध भक्ति-भावना का परिचायक है।

विनोदप्रिय व्यक्ति:—

लोकरत्न गुमानी स्वभाव से विनोदप्रिय प्रतीत होते है। वे स्थान-स्थान पर वे विभिन्न विषयों पर चुटकियाँ लेते दिखाई देते है। यथा, दानपर्व पर किसी ब्राह्माण को देखकर दान देने के भय से घर में छिपने वाले यजमान बनिए के प्रति वे इस प्रकार व्यंग करते हैं -

पर्वणि दानभिया द्विजं दृष्टवान्तर्वव्रज।
अन्येद्युर्वणिगाह तं पालागन महाराज।

समस्यापूर्तियों में उनकी व्यंग्यप्रियता सहज ही झलकती है। ढोंगी साधुओं पर व्यंग्य के माध्यम से प्रहार करने से वे नहीं चूकते है। किसी नानकपंथी साधु का वर्णन उन्होंने इस प्रकार किया है -

कण्ठे सूत्रं चूडामात्रं किंचिन्मुण्डितमुण्डे।
क्रूरामनवच्छिन्नामसकृद् वाचं विभ्रत्तुण्डे।।
भिक्षामाशु न दत्ते योऽस्मिन् नेत्रे विभ्रत्तुण्डे,
नानकपन्थी सुत्रेसाही खड़ा बजावे दण्डे।।

संवेदनशील: —

कवि स्वभाव से ही संवेदनशील होता है। अतः गुमानी भी इससे परे नहीं है। अंग्रेजो के अत्याचारों से आक्रान्त जनता की पीड़ा से उनका हृदय उद्वेलित हो उठता है; इसीलिए अंग्रेजों के आगमन को वे साक्षात् कलि का आगमन कहते है। आज से लगभग दो सौ वर्ष पूर्व अंगे्रजी राज्य में न्यायालयों की जो दशा कवि ने वर्णित की है लगभग वही दशा आज भी है। अतः इस दृष्टि से कवि गुमानी आज भी प्रासंगिक ठहरते है। अंग्रेजी राज्य के न्यायालयों और अंग्रेजों की भाषा-नीति का कवि ने सम्यक् चित्रण किया है। यह उनकी संवेदनशीलता का परिचायक है।

आशुकवि: —

कवि गुमानी कवित्व-प्रतिभा से सम्पन्न आशुकवि है। आवश्यकतानुसार सद्यः सटीक काव्यरचना करने में वे निष्णात है। गढ़वाल के 'टिहीरी' शहर के नाम की व्युत्पत्ति के विषय में लिखा उनका यह पद्य कवित्व-प्रतिभा के साथ-साथ उनकी आशुकविता करने की शक्ति का परिचायक है -

सुरगड्गतटी रसखानमही धनकोशभरी यहु नाम रह्यो।
पद तीन बनाय रच्यो बहुविस्तर वेग नहीं जब जात कह्यो।।
इन तीन पदो के वसान वस्यो पद अक्षर एकहि एक लह्यो।
जनराज सुदर्शनशाह पुरी टिहीरी इहि कारण नाम रह्यो।।

बहुमुख प्रतिभा सम्पन्न: —

कवि गुमानी बहुज्ञ है। पुराण, इतिहास, रामायण, महाभारतादि के वे अच्छे ज्ञाता है। इन ग्रन्थों के विविध प्रसंगों का उन्होंने समस्यापूत्रि, हितोपदेश आदि में व्यापक प्रयोग किया है। वेदान्त तथा दर्शन के भी वे मर्मज्ञ है। ज्ञानभैषज्यमंजरी उनके आयुर्वेद विषयक ज्ञान को सूचित करने के लिए पर्याप्त है। व्याकरण तथा साहित्यशास्त्र में भी वे पारंगत है।

खेलविषयक ग्रन्थ—

द्यूतवर्णनम्, चतुःसारिकावर्णनम्, सद्रजाष्टकम् कवि गुमानी की मनोरंजनप्रियता तथा खेल-विषयक जानकारी को सूचित करते है। वे अंग्रेजी शासन प्रणाली को भलीभाँति जानते थे।

उनके निर्णय ग्रन्थ (तिथि, आचार एवं अशौच) धर्मशास्त्र एवं ज्योतिष विषय पर उनके आधिपत्य को सूचित करते है।

देशप्रेम की भावना से ओतप्रोत: —

कवि गुमानी ने अपने साहित्य में यत्र-तत्र अंग्रेजी राज्य की कटु आलोचना की है। एक वीर सपूत कर्मणा देशप्रेम का परिचय देता है जबकि एक कवि मनसा-वाचा अपने देशप्रेम को व्यक्त कर दूसरों को भी देशप्रेम की शिक्षा देता है। कवि गुमानी ने बड़ी कुशलतापूर्वक आलंकारिक भाषा में अंग्रेजी राज्य की निन्दा की है। साथ ही पुराण, रामायण और महाभारत आदि से विषय चुनकर उन पर काव्यरचना करके कवि ने अपने देश एवं संस्कृति से प्रेम करने का पाठ पढ़ाया है।

अभ्यास प्रश्न:

टिप्पणी

1. हितोपदेशतकम्
2. समस्यापूर्तिः
3. ज्ञानभैषज्यमंजरी

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. लोकरत्न गुमानी के पूर्वज कहाँ से आकर कुमाऊँ में बस गए थे?

(क) उज्जयिनी (ख) कन्नौज

(ग) कर्नाटक (घ) महाराष्ट्र

2. गुमानी का जन्म हुआ था -

(क) सन्1650 ई. में (ख) सन् 1750 ई. में

(ग) सन् 1790 ई. में (घ) सन् 1820 ई. में

3. गुमानी के किस राजा की राजसभा को सुशोभित किया था-

(क) रूद्रचन्ददेव (ख) गुमानी देव

(ग) बाजबहादुरचन्द (घ) दुलीचन्ददेव

4. कवि गुमानी का नीतिविषयक ग्रन्थ है -

(क) नीतिशतकम् (ख) नीतिसारः

(ग) हितोपदेशशतकम् (घ) नीतिवचनम्

5. कवि गुमानी ने किस देवता से संबंधित सर्वाधिक पद्य लिखे -

(क) कृष्ण (ख) राम

(ग) शिव (घ) इन्द्र

6. कवि गुमानी की शतरंजविषयक रचना है-

(क) सद्रजाष्टकम् (ख) चतुःसारिकावर्णनम्

(ग) द्यूतवर्णनम् (घ) शतरंजवर्णनम्

रिक्त स्थान की पूर्ति

1. स्त्रियं ..... न वीक्षेत्।
2. कवि का पूरा नाम लोकरत्न ..... 'गुमानी' था।
3. गुमानी के चिकित्सकीय ज्ञान को बताने वाला ग्रन्थ है।
4. कवि गुमानी ..... के भी पहले कवि हैं।
5. गुमानी ने सात सर्गों में पटियाला नरेश ..... का जीवन चरित भी लिखा था।
6. गुमानी का काल भारत में ..... से पराधीनता का काल था।

अतिलघु उत्तरीय प्रश्न

1. सुरगंगतटी रसखानमही धनकोशभरी यहु नाम रह्यो।
इस पंक्ति में गढ़वाल के किस नगरी का नाम पिरोया हुआ है।
2. कवि ने मुखर रूप में किसके राज्य (शासन) की निन्दा की है।
3. गुमानी हिन्दी, संस्कृत, नेपाली, कुमाऊँनी एवं गढ़वाली के अलावा अन्य किन-किन भाषाओं को जानने वाले थे।
4. दुर्जनों के दोषों को इंगित करने वाला कवि कौसा सा ग्रन्थ है।
5. गुमानी के पिता का नाम क्या था?
6. कवि का बाल्यकाल कहाँ बीता?

सत्य/असत्य बताइए

1. गुमानी कवि का उपनाम था।
2. गुमानी की मृत्यु सन् 1899 में हुई थी।
3. गुमानी वैद्यकी भी जानते थे।
4. गंगार्याशतकम् गुमानी की कृति नहीं है।
5. कवि गुमानी सीता-राम को माता-पिता तुल्य मानते हैं।
6. कविवर गुमानी श्रीकृष्ण के अनन्य भक्त थे।

नोट - ऊपर दिए गए प्रश्नों के उत्तर पाठ्य सामग्री के अन्त में दिए गए हैं किन्तु हमारा सुझाव है कि आप स्वमूल्यांकन हेतु उनसे अपने उत्तरों का मिलान करके देखें।

2.4 सारांश:-

हिमालय की गोद में स्थित कूर्मांचल की धरती में जनमे लोकरत्न पन्त गुमानी संस्कृत के सुप्रसिद्ध कवि हुए। यद्यपि इनके द्वारा रचित कोई विशाल ग्रन्थ नहीं है तथापि इनकी अनेकों रचनाएँ प्राप्त होती है। इनकी एक दो ही रचनाएँ ही ऐसी है जिनमें सौ या एक सौ पच्चीस पद्य हो अन्य रचनाएँ पचास-पचपन या उससे भी कम पद्यों वाली है। वास्तव में ये प्रतिभा सम्पन्न आशुकवि थे। तत्कालीन परिस्थितियों तथा सामाजिक दशा को देख-सुन कर इनके मन में जो

विचार आते थे उन्हें ये पद्यबद्ध कर देते थे। लगभग 150-200 वर्षों तक इनकी रचनाएँ मौखिक रूप में ही जनमानस में व्याप्त रही। बहुत बाद में (20 वीं शताब्दी) इनकी रचनाओं को संग्रहीत एवं संकलित कर श्री कैलाश चन्द्र लोहनी जी ने 'गुमानी ग्रन्थावली' के नाम से प्रकाशित करवाया। छोटे ग्रन्थ और छोटी-छोटी पद्य रचनाएँ होते हुए भी संस्कृत साहित्य में गुमानी का योगदान अमूल्य है। संस्कृत के साथ-साथ ये हिन्दी, कुमाऊँनी, गढ़वाली तथा नेपाली में भी काव्य रचना किया करते थे। संस्कृत, कुमाऊँनी, संस्कृत-गढ़वाली, संस्कृत नेपाली एवं संस्कृत-हिन्दी मिश्रित इनकी रचनाएँ सरल-सरस, चुटीले व्यंग्य से युक्त तथा सर्वग्राही है। उनकी कृतियों एवं व्यक्तित्व की विशेषताओं से स्पष्ट है कि सच्चे अर्थों में 'लोकरत्न' थे।

2.5 पारिभाषिक शब्दावली/कठिन शब्द

सद्रजाष्टक	- इसका अर्थ है शतरंज का खेल
चतुःसारिका	- इसका अर्थ है चैसर का खेल
फिरंगीराज	- अंग्रेजों का राज (शासन)

2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर:-

1. हेतु टिप्पणी इकाई की उपखण्ड संख्या 4.3.4.1 देखे।
2. हेतु टिप्पणी इकाई की उपखण्ड संख्या 4.3.4.2 देखे।
3. हेतु टिप्पणी इकाई की उपखण्ड संख्या 4.3.4.3 देखे।

बहुविकल्पीय

(1) घ (2) ग
(3) ख (4) ग
(5) राम (6) क

रिक्त स्थानपूर्ति

(1) विवस्त्रं (2) पन्त
(3) ज्ञानभैषज्यमंजरी (4) खड़ी बोली हिन्दी
(5) कर्णसिंह (6) अंग्रेजों

अतिलघुउत्तरीय

(1) टीहीरी (2) अंग्रेजों के
(3) अंग्रेजी-फारसी (4) दुर्जनदूषणम्
(5) देवनिधि पन्त (6) ग्राम-उपराड़ा, पिथौरागढ़

सत्य/असत्य

(1) सम्य (2) असत्य
(3) सत्य (4) असत्य

(5) सत्य (6) असत्य

2.7 संदर्भ ग्रन्थ/सहायक सामग्री:-

1. गुमानी ग्रन्थावली, कैलाश चन्द्र लोहनी, प्रकाशक प्रेम ग्रन्थ भनार, टनकपुर नैनीताल
2. सागरिका पत्रिका, सप्रदशवर्षेतृतीयोगंरू, कूर्मांचलेषु संस्कृत साहित्यसंवर्धनम्, बसन्तबल्लभ भट्ट
3. उत्तरीय पत्रिका, गुमानी स्मृति विशेषांक, गुमानी पन्त और उनका काव्य, भास्कर भट्ट।
4. सुप्रभातम् पत्रिका।
5. काव्यमाला, द्वितीय गुच्छक
6. सागरिका पत्रिका, पृ0सं. 16-17

2.8 निबन्धात्मक प्रश्न:-

1. कविवर गुमानी का जीवन परिचय प्रस्तुत कीजिए।
2. लोकरत्न गुमानी की रचनाओं का परिचय दीजिए।
3. लोकरत्न गुमानी के व्यक्तित्व की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
4. लोकरत्न गुमानी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर एक लेख लिखिए।

इकाई 3. विद्याभूषण श्रीकृष्ण जोशी का जीवन परिचय एवं उनका संस्कृत साहित्य में योगदान

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना
3.2. उद्देश्य
3.3 इकाई की पाठ्य सामग्री
3.3.1 विद्याभूषण श्रीकृष्ण जोशी के पूर्वज
3.3.2 विद्याभूषण श्रीकृष्ण जोशी का जन्म
3.3.3 शिक्षा-दिक्षा
3.3.4 वैवाहिक जीवन
3.3.5 कार्य क्षेत्र
3.3.6 मृत्यु
3.3.7 साहित्यिक कार्य
3.3.7.1 नाटक
3.3.7.2 काव्य
3.3.7.3 भाष्य ग्रन्थ
3.3.7.4 व्याकरण ग्रन्थ
3.3.7.5 दर्शन ग्रन्थ
3.3.7.6 मनोविज्ञान ग्रन्थ
3.3.7.7 खगोल ग्रन्थ
3.3.7.8 ज्योतिष ग्रन्थ
3.3.7.9 कोष ग्रन्थ
3.3.7.10 सामाजिक शास्त्र सम्बन्धी ग्रन्थ
3.3.7.11 कथा ग्रन्थ
3.3.7.12 स्त्रोत ग्रन्थ
3.3.7.13 अन्य रचनाएँ

3.3.8. शोधात्मक कार्य
3.3.9 राजनीतिक कार्य
3.3.10 सामाजिक कार्य
3.3.11 कवि की आर्थिक स्थिति
3.3.12 स्वभाव एवं चरित्र
3.3.13 वेशभूषा
3.4 सारांश
3.5 पारिभाषिक शब्दावली
3.6. अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ/सहायक सामग्री
3.8 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना:-

उत्तराखण्ड में संस्कृत साहित्य की आधुनिक प्रतिभाएँ इस प्रथम खण्ड की यह तृतीय इकाई है। इससे पूर्व की इकाई में आप लोकरत्न गुमानी के बारे में भलीभाँति जान चुके हैं।

उत्तराखण्ड में संस्कृत साहित्य की उत्कृष्ट परम्परा प्राचीन काल से ही सतत् चली आ रही है। प्राचीन काल में संस्कृत यहाँ की राजभाषा थी जिसके प्रमाण गढ़वाल एवं कूर्मांचल में प्राप्त अभिलेखों ताम्रपत्रों तथा उपलब्ध संस्कृत ग्रन्थों के रूप में प्राप्त होते हैं।

इस इकाई में आप उत्तराखण्ड के कूर्मांचल क्षेत्र की संस्कृत की आधुनिक प्रतिभा विद्याभूषण श्रीकृष्ण जोशी के पूर्वज, जन्म, शिक्षा-दीक्षा, वैवाहिक जीवन, कार्यक्षेत्र आदि के बारे में विस्तार से जानेंगे। इसके साथ ही श्रीकृष्ण जोशी की रचनाओं तथा उनके राजनीतिक, सामाजिक कार्यों के बारे में, उनकी आर्थिक स्थिति उनके स्वभाव चरित्र वेशभूषा आदि से भी भलीभाँति अवगत हो सकेंगे।

3.2 उद्देश्य:-

- प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप बता सकेंगे कूर्मांचल के 19वीं 20वीं शताब्दी के संस्कृत के महान साहित्यकार श्रीकृष्ण जोशी के पूर्वज कौन थे? उनके जन्मस्थल के बारे में आप अच्छी तरह बता पाएंगे।
- आप बता पाएंगे कि कवि की शिक्षा-दीक्षा, वैवाहिक जीवन, कार्यक्षेत्र कैसा था तथा उनकी मृत्यु कब हुई।
- समझा पाएंगे कि कि श्रीकृष्ण जोशी साहित्यिक कार्य क्षेत्र कितना विस्तृत था।
- श्रीकृष्ण जी की प्रकाशित एवं अप्रकाशित रचनाओं के बारे में भलीभाँति जानकारी दे सकेंगे।
- भलीभाँति बता सकेंगे कि कवि श्रीकृष्ण जोशी को अपनी विद्वता के कारण किस-किस तरह के सम्मान एवं उपाधियाँ प्राप्त हुई।
- समझा पाएंगे कि श्रीकृष्ण जोशी ने तत्कालीन राजनीति में किस तरह भागीदारी की।
- भलीभाँति बता सकेंगे कि श्रीकृष्ण जोशी ने समाज की भलाई के लिए क्या-क्या किया।
- भलीभाँति बता पाएंगे कि श्रीकृष्ण जोशी का स्वभाव, वेशभूषा आदि तथा उनकी आर्थिक स्थिति कैसी थी।

3.3 इकाई की पाठ्य सामग्री:-

इससे पूर्व की इकाई का अध्ययन करने के बाद आप जान चुके हैं कि उत्तराखण्ड के गढ़वाल क्षेत्र की अपेक्षा कुमाऊँ में संस्कृत भाषा में लिखित साहित्य (काव्य, नाटक, व्याकरण, ज्योतिष आदि से सम्बन्धित ग्रन्थ) प्राचीन काल (लगभग 8 वीं शताब्दी) से ही प्राप्त होता है।

संस्कृत साहित्य की अविरल धारा कुमाऊँ में प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक निरन्तर अविरल रूप से प्रवाहित होती चली आ रही है।

यहाँ संस्कृत में लिखित सर्वप्रथम ग्रन्थ आचार्य हरिहर का पारस्करगृह्यसूत्र पर भाष्य प्राप्त होता है। इनका समय 700-721 ई0 के मध्य माना जाता है। आचार्य हरिहर के बाद लगभग 450 वर्षों का काल अन्धकार पूर्ण है अर्थात् इस काल की कोई कृति आज प्राप्त नहीं होती और न किसी रचना का उल्लेख ही कहीं मिलता है। हरिहर के पश्चात् 12 वीं शताब्दी में केदार पाण्डे हुए जिनका 'वृत्तरत्नाकर' छन्दशास्त्र का सुप्रसिद्ध ग्रन्थ है। इसके बाद 15 वीं शताब्दी में राजा रूद्रचन्ददेव हुए जिनके तीन उपलब्ध ग्रन्थ है- ऊषारागोदया नाटिका, श्यैनिकशास्त्रम् तथा त्रैवर्णिकधर्मानिर्णय। इनकी एक रचना ययातिचरितम् अनुपलब्ध है। उस का उल्लेख मात्र मिलता है। इसके बाद कूर्मांचल में संस्कृत साहित्यकारों की एक दीर्घ परम्परा प्राप्त होती है जिनमें रूद्रमणि, अनन्तदेव, भगीरथ पाण्डे, पण्डित लक्ष्मीपति पाण्डे, पण्डित पद्मदेव पाण्डे, पण्डित शिवानन्द पाण्डेय, त्रिलोचन जोशी, भवानन्द, प्रेमनिधि पन्त, प्राणमंजरी (कवियित्रि), धरणीधर पन्त, हरिदत्त जोशी, विश्वेश्वर पाण्डे, हरिकृष्ण पन्त, हरिवल्लभ उप्रेती, गणितज्ञ लक्ष्मीपति, कृष्णदेव, पण्डित लोकरन्त पन्त गुमानी, सुकृतिदत्त पन्त, दुर्गादत्त पन्त, पण्डित घनानन्द पन्त, रामदत्त पन्त, गुणानन्द, पण्डित गंगादत्त शास्त्री, देवीदत्त पाण्डे, केदारदत्त जोशी, नित्यानन्द पन्त, तारादत्त पन्त, जनार्दन शास्त्री, तारादत्त जोशी, प्रेमवल्लभ शर्मा, तथा भोलादत्त पाण्डे, आदि स्वनाम धन्य संस्कृत साहित्यकारों के नाम उल्लेखनीय हैं।कूर्मांचल के इन्हीं सुप्रसिद्ध, संस्कृत साहित्यकारों की परम्परा की एक मजबूत कड़ी है विद्याभूषा श्रीकृष्ण जोशी। अब आपके समक्ष उनके जीवन-परिचय एवं रचना संसार को प्रस्तुत किया जा रहा है-

3.3.1 श्रीकृष्ण जोशी के पूर्वज:

श्रीकृष्ण जोशी के पूर्वज कन्नौज के निकट असनी गाँव के भारद्वाज गोत्री ब्राह्मण थे। इस वंश के श्री लंकाराज ज्योतिर्विद राजा सोमचन्द के साथ ही तीर्थयात्रार्थ कुमाऊँ आए और यहीं बस गए। यहाँ उन्हें शिलग्राम की जागीर मिली और वे शिल्वाल के जोशी कहे जाने लगें। इनके वंशज पृथ्वीराज बाद में अल्मोड़ा आकर बस गये। प्राप्त जानकारी के अनुसार पृथ्वीराज के पश्चात् इस वंश में क्रमशः कपिलराज, नीलराज, रूद्रदेव, ब्रह्मदेव एवं शिवदेव के तीन पुत्रों में जयाकर शिल्वाल हाट वंश का मूल पुरूष हुआ तथा प्रभाकर के वंशज जोशी खोला के रजांगी जोशी कहलाए। मझले दिवाकर के वंश में आगे क्रमशः रूधाकर, रश्मिदेव एवं देवनिधि हुए। देवनिधि के वंशज मकेड़ी के जोशी कहलाए। आगे इसी वंश में क्रमशः कपिलदेव, यशोधर, श्रीनिवास, श्रीकृष्ण आदि हुए। श्रीनिवास के पश्चात् इस वंश के लोगों का निवास-स्थल चीनाखान, अल्मोड़ा रहा। श्रीकृष्ण के प्रपौत्र गंगादत्त के पौत्र एवं बदरीदत्त जोशी के ज्येष्ठ पुत्र श्रीकृष्ण जोशी हुए।

3.3.2 श्रीकृष्ण जोशी का जन्म:

जोशी जी का जन्म अल्मोड़ा जनपद के चीनाखान नामक स्थान पर अपने पैतृक मकान में हुआ था। उनकी माता का नाम तुलसी देवी था। बह्सिाक्ष्यों के अनुसार उनका जन्म सन् 1882 ई0 तथा सन् 1883 ई0 में हुआ था, किन्तु अन्तर्साक्ष्य के अनुसार उनकी जन्म तिथि का उल्लेख स्वयं कवि की हस्तलिखित जन्मकुण्डली में सन् 1884 ईसवी में उल्लिखित है।

3.3.3 शिक्षा-दीक्षा:

जोशी की प्रारम्भिक शिक्षा नैनीताल में सम्पन्न हुई। एक अन्य साक्ष्य से ज्ञात होता है कि उनकी हाईस्कूल तक की शिक्षा गवर्मेंट कॉलेज, नैनीताल में हुई थी। जोशी जी ने सन् 1899 ई0 में म्योर सेन्ट्रल कॉलेज, इलाहाबाद से मिडिल परीक्षा द्वितीय श्रेणी में उत्तीण की थी। संभवतः उस समय मिडिल परीक्षा का प्रमाण-पत्र म्योर सेन्ट्रल कॉलेज, इलाहाबाद द्वारा दिया जाता था। सन् 1902 ई0 में इन्ट्रैस (हाईस्कूल) की परीक्षा गवर्मेंट कॉलेज, नैनीताल से प्रथम श्रेणी में तथा सन् 1904 ई0 में इन्टरमीडिएट की परीक्षा रामजे इण्टर कॉलेज, अल्मोड़ा से द्वितीय श्रेणी में उत्तीर्ण की थी। जोशी जी के घर का वातावरण संस्कृतमय था। उनके पिता संस्कृत के अच्छे विद्वान् एवं ज्योतिषि थे। यही कारण था कि बाल्यकाल से ही संस्कृत की ओर उनका विशेष रुझान था। जिन दिनों वे इन्टरमीडिएट के विद्यार्थी थे, उन दिनों उन्होंने सायंकालीन निःशुल्क संस्कृत पाठशाला में प्रवेश लेकर धर्म एवं दर्शन का अध्ययन भी किया था। श्री जोशी जी इन्टरमीडिएट की परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद इलाहाबाद चले गये थे। सन् 1906 ई0 में उन्होंने वहाँ के म्योर सेन्ट्रल कॉलेज से बी0ए0 तथा सन् 1909 ई0 में एल0एल0बी0 की उपाधियाँ प्राप्त की।

3.3.4 वैवाहिक जीवन:

विद्याभूषण पण्डित श्रीकृष्ण जोशी के दो विवाह थे। प्रथम विवाह अनूपशहर निवासी श्री देवीबल्लभ की सुपुत्री नन्दी देवी से हुआ था। कुछ समय बाद नन्दी देवी एक कन्या को जन्म देने के बाद ही स्वर्ग सिधार गई। बन्धुजनों के विशेष आग्रह पर बाद में उसी वंश के श्री चन्द्रबल्लभ की पुत्री सुश्री जानकी देवी से जोशी जी का दूसरा विवाह हुआ। द्वितीय पत्नी ने दीर्घकाल तक सुख-दुखः के क्षणों में आपका साथ निभाया। द्वितीय पत्नी से जोशी जी की कुल ग्यारह सन्तानें हुई जिनमें तीन पुत्र तथा 8 पुत्रियाँ हैं।

3.3.5 कार्य क्षेत्र:-

श्री जोशी जी को 12 अगस्त सन् 1992 ई0 को नौर्थ वेस्ट प्राँविन्सेज के हाईकोर्ट के वकील का प्रथम लाइसेन्स प्राप्त हुआ और 21 अगस्त, 1912 ई0 को दूसरा लाइसेन्स कुमाऊँ हाईकोर्ट का प्राप्त हुआ। इसके आधार पर उन्होंने कुमाऊँ हाईकोर्ट, जो उन दिनों नैनीताल में था, में वकालत प्रारम्भ की। बाद में उन्होंने बम्बई हाईकोर्ट में भी वकालत की। सन् 1912 ई0 से लेकर सन् 1926 ई0 तक उनका मुख्य व्यवसाय वकालत ही था। इनकी वकालत उन दिनों बहुत अच्छी चलती थी। श्रीकृष्ण जोशी ने अपने एक पत्र में लिखा है कि 'सन् 1926 में जब महात्मा

गाँधी जी ने कहा कि वकीलों ने ब्रिटिश राज को धर रखा है तो उनके कहने से और सी0आर0 दास के अनुकरण से मैं भी बाँयकाँट आँफ ब्रिटिश कोर्ट में शामिल हो गया तथा अपनी वकालत त्याग दी।' तब वे महामना मदनमोहन मालवीय जी के सम्पर्क में आए। कवि के संस्कृत ज्ञान से प्रभावित होकर मालवीय जी ने उन्हें 200 रूपये प्रतिमाह मानदेय तथा निःशुल्क आवास की सुविधा देकर काशी विश्वविद्यालय के धर्म विभाग में मानद प्रवक्ता पद पर नियुक्ति दे दी। सन् 1937 में उन्हें धार्मिक शिक्षा विभाग का अध्यक्ष बनाया गया। सन् 1944 में उन्हें काशी विश्वविद्यालय से सेवामुक्त कर दिया गया। काशी से लौटने के बाद वे नैनीताल स्थित अपने आवास कृष्णापुर, तल्लीताल में रहते थे

3.3.6 मृत्यु:-

अपने जीवन के अन्तिम दिनों में जोशी जी नैनीताल में ही रहते थे। 8 जून 1965 ई0 को प्रातः नौ बज कर पच्चीस मिनट पर 84 वर्ष की अवस्था में वाणी के इस वरद् पुत्र की जीवन लीला समाप्त हो गई है। मृत्यु के समय उनकी अवस्था 82 वर्ष थी। उनकी मृत्यु पर तत्कालीन राष्ट्रपति सर्वपल्ली डा0 राधाकृष्णन् ने शोक सन्देश भेजकर उनके शोक संतप्त परिवार के प्रति संवेदना व्यक्ति की थी। बहुमुखी प्रतिभा के धनी श्री जोशी जी द्वारा अपने जीवन काल में किए गए विभिन्न साहित्यक, शोधात्मक, राजनीतिक एवं समाजिक कार्य इस प्रकार है-

3.3.7 साहित्यक कार्य:-

विद्याभूषण श्रीकृष्ण जोशी 20 वीं सदी के संस्कृत के उच्च कोटि के विद्वान थे। उन्होंने नाटक, काव्य, दर्शन, मनोविज्ञान, खगोलशास्त्र, व्याकरण, ज्योतिष और भाष्य आदि सभी विषयों पर समान रूप से अपनी लेखनी चलाई। श्रीकृष्ण जोशी के प्रकाशित ग्रन्थ अल्प है। उनके कुछ ग्रन्थों की पाण्डुलिपियाँ नैनीताल (कृष्णापुर) स्थित उनके आवास में तथा कुछ ग्रन्थों की पाण्डुलिपियाँ अखिल भारतीय संस्कृत परिषद, लखनऊ में सुरक्षित है। श्रीकृष्ण जोशी के प्रकाशित एवं अप्रकाशित ग्रन्थां का विवरण इस प्रकार है -

3.3.7.1 नाटक:-

यमराजपराजय—

सावित्री-सत्यवान की कथा पर आधारित यह नाटक सात अंकों में विभाजित है। इसकी एक पाण्डुलिपि अखिल भारतीय संस्कृत परिषद् लखनऊ में तथा दूसरी पाण्डुलिपि नैनीताल में है। यह नाटक लगभग 8'' लम्बी एवं 6'' चैड़ी अभ्यास पुस्तिका में नीली स्याही से कलम द्वारा लिखा गया है। यह एक उच्च कोटि का नाटक है। इसमें सावित्री द्वारा यमराज के पाश से अपने पति सत्यवान को मुक्त कराने हेतु किये गये प्रयासों का सफल चित्रण किया गया है। इससे नारी की इच्छा शक्ति और उसकी दृढ़ भावना का सुस्पष्ट परिचय मिलता है।

श्रीकृतार्थकौशिकम्—

भारत के गौरवमय अतीत की झाँकी प्रस्तुत करने वाला यह नाटक छः अंकों में विभक्त है। इस नाटक का प्रकाशन उत्तर प्रदेश के भूतपूर्व मुख्य मंत्री श्री नारायणदत्त तिवारी जी की अध्यक्षता में संवत् 2032 वि0 (सन् 1975 ई0) में अखिल भारतीय संस्कृत परिषद्, लखनऊ से हुआ। यह नाटक विश्वामित्र जो राजा गाधि के पुत्र विश्वमित्र थे उनकी, युवावस्था के जीवन चरित्र को दर्शाता है। यह श्रृंगाररस प्रधान नाटक है।

3.3.7.2 काव्य:

रामरसायन महाकाव्य—

श्रीकृष्ण जोशी विरचित इस काव्य का दूसरा नाम 'ईष्टसिद्धिः' भी है। राम की महिमाओं का गुणगान करने वाला यह महाकाव्य चैबीस सर्गों में विभक्त है। इसकी पाण्डुलिपि नैनीताल में उपलब्ध है। इस महाकाव्य की एक अपूर्ण पाण्डुलिपि, जिसमें केवल 13 सर्ग हैं, लखनऊ में भी उपलब्ब्ध है। यह गन्थ अप्रकाशित है।

स्यमन्तकनाम् महाकाव्य—

इस अप्रकाशित ग्रन्थ की एक मात्र पाण्डुलिपि नैनीताल में उपलब्ध है। यह महाकाव्य कुल तेरह सर्गों में विभक्त है। इस काव्य ग्रन्थ में पाँच सौ श्लोक है।

वीरभारतकाव्यम्—

इस अप्रकाशित ग्रन्थ की पाण्डुलिपि उपलब्ध नहीं हो पाई। इस काव्य में कुल 9 अध्याय हैं जो विभिन्न शीर्षकों- महासंग्राम वर्णन, प्रतिज्ञात्मक, हेत्वाख्यानात्मक आदि में विभक्त है इस काव्य का उल्लेख मात्र प्राप्त होता है।

संगीतराघवीयम्-

इस ग्रन्थ में कुल 22 गीत हैं और कहीं-कहीं गीतों के अनन्तर श्लोक भी दिये गये हैं। इस ग्रन्थ के द्वारा भी जोशी जी की सीता-राम के प्रति श्रद्धा भक्ति का परिचय मिलता है। यह ग्रन्थ अप्रकाशित है इसकी एक पाण्डुलिपि लखनऊ में सुरक्षित है। दूसरी पाण्डुलिपि नैनीताल में नष्ट प्रायः स्थिति में उपलब्ध है। यह ग्रन्थ जगज्जननी सीता की अर्चना से प्रारम्भ होकर विष्णु के विभिन्न अवतारों, दशरथ के पुत्रेष्टि यज्ञ, राम-विवाह, राम वनवास आदि का वर्णन गीतात्मक पद्यों में करता है।

3.3.7.3 भाष्य ग्रन्थ:-

श्रीमद्भगवतगीता श्लोक व्याख्या—

इस ग्रन्थ में गीता के महात्मय प्रतिपादन के साथ-साथ उसके अष्टादश अध्यायों के समस्त श्लोकों की व्याख्या संस्कृत में की गयी है। यह ग्रथ अप्रकाशित है तथा इसकी पाण्डुलिपि लखनऊ में उपलब्ध है।

श्रीमद्भगवतगीता भाष्यम्—

इस अप्रकाशित ग्रन्थ में सर्वप्रथम 105 श्लोकों में ग्रन्थ की भूमिका लिखी है। तत्पश्चात् गीता के प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय अध्यायों पर भाष्य लिखा गया है। संभवतः कवि गीता के अन्य अध्यायों पर भी भाष्य लिखना चाहता था, लेकिन दुर्भाग्यवश यह ग्रन्थ अपूर्ण रह गया।

3.3.7.4 व्याकरण ग्रन्थ

धातुपाठ—

इस ग्रन्थ में 3600 धातुपाठ वर्णक्रमानुसार अंग्रेजी अनुवाद सहित दिये गए हैं। इस ग्रन्थ में पण्डित जनार्दन ज्योतिर्विद द्वारा संकलित धातुपाठों को समुद्धृत किया गया है। यह बालोपयोगी ग्रन्थ है।

धातुपाठ—

इस ग्रन्थ में भी 3266 धातुओं की वर्णक्रमानुसार अंग्रेजी अनुवाद सहित, गणना की गई है।

धातुकोष—

इस ग्रन्थ में भी 3600 धातुओं की वर्णक्रमानुसार अंग्रेजी अनुवाद सहित गणना की गई है।

क्रियाकलाप—

इस ग्रन्थ में भी 4000 धातुओं का संकलन अंग्रेजी अनुवाद सहित किया गया है।

संस्कृत बोधक—

इस बालोपयोगी व्याकरण ग्रन्थ के प्रथम भाग में लघु एवं सरल वाक्यों में संस्कृत के धातुरूपों एवं उपसर्गों का परिचय दिया गया है। तत्पश्चात् लगभग 25 बालोपयोगी लघु कथाएँ दी गई है। द्वितीय भाग में संस्कृत के शब्द रूपों का परिचय देते हुए अनेक लघु कथाएँ दी गई हैं। तृतीय भाग में पूर्व के दो भागों की अपेक्षा लम्बे एवं समासगर्भित वाक्यों का प्रयोग करके लेख एवं कथाएँ दी गई हैं। उपर्युक्त सभी व्याकरण ग्रन्थ अप्रकाशित है और इनकी पाण्डुलिपियाँ नैनीताल में उपलब्ध है।

3.3.7.5 दर्शन ग्रन्थ-

मतिप्रशिक्षशास्त्र अथवा परमतत्वमीमांसा—

इस ग्रन्थ में अंग्रेजी के 'मैटाफिजिक्स' शब्द का संस्कृत में 'मतिप्रशिक्ष' अनुवाद करने के पाश्चात्य दार्शनिकों के विभिन्न सिद्धान्तों का संग्रह एवं उनकी समालोचना की गई है। यह ग्रन्थ गद्य एवं पद्य में निबद्ध है। इस ग्रन्थ का प्रकाशन हो चुका है।

सर्वदर्शनमंजूषा: —

इस ग्रन्थ में चार्वाक, कापालिक, योगाचार, माध्यमिक, सौत्रान्तिक बौद्ध, वैभाषिक, आर्हतजैन, पाशुपत, जैमिनी, कुमारिल, कपिल, पंचसाख्य, पातंजल, कणाद, न्याय और वेदान्त- इन सोलह दर्शनों के मुख्य-मुख्य सिद्धान्तों का वर्णन किया गया है। इस ग्रन्थ की एक पाण्डुलिपि लखनऊ में तथा दूसरी नैनीताल में उपलब्ध है।

पाश्चात्यदर्यनमंजूषा: —

यह ग्रन्थ लखनऊ से प्रकाशित है। इस ग्रन्थ के प्रारम्भ में भारतीय तत्व ज्ञान की विशिष्टता का प्रतिपादन किया गया है। तत्पश्चात् पाश्चात्य दर्शन के विभिन्न तत्वों की विवेचना की गई है।

कालमीमांसा—

काल की विवेचना प्रस्तुत करने वाला यह एक अप्रकाशित ग्रन्थ है। इसकी एक पाण्डुलिपि नैनीताल में तथा दूसरी लखनऊ में उपलब्ध है। इसमें 54 शीर्षकों में वेद, पुराण एवं ब्राह्मण ग्रन्थों तथा विभिन्न दर्शनों के काल संबंधी मतों का विवेचन किया गया है। विशिष्टाद्वैतदर्शन, वेदान्तशास्त्र, परमार्थसार, पाश्चात्य तत्वदर्शनानि, योगकारिका एवं अद्वैतवेदान्तदर्शन- दर्शन संबंधी ये ग्रन्थ अप्रकाशित है। इनकी पाण्डुलिपियां भी उपलब्ध नहीं हो पाई। इनका उल्लेख मात्र मिलता है।

3.3.7.6 मनोविज्ञान सम्बन्धी ग्रन्थ:

अंतरंगमीमांसा: —

यह ग्रन्थ चार खण्डों में विभक्त है। प्रथम खण्ड में 30 शीर्षकों के अन्तर्गत अंतरंगमीमांसा के सूत्र, मन का लक्षण, मनोविज्ञान की शाखाओं तथा उसका महत्व आदि विषयों पर प्रकाश डाला गया है। द्वितीय खण्ड में बाल मनोविज्ञान से सम्बन्धित विषयों का 38 शीर्षकों के अन्तर्गत विवेचन किया गया है। तृतीय खण्ड में 25 शीर्षकों में चेतना के अनेक प्रकारों का वर्णन किया गया है। चतुर्थ खण्ड धृति भाग है। इसमें 29 शीर्षक है। यह ग्रन्थ अप्रकाशित है।

3.3.7.7 खगोल ग्रन्थ:

खगोलज्ञानम् इस अप्रकाशित ग्रन्थ की दो पाण्डुलिपियाँ लखनऊ में सुरक्षित है। एक पद्य में है और दूसरी गद्य में। पद्यात्मक ग्रन्थ में पृथ्वी के आकार व गति, ऋतुओं, राशियों आदि का उल्लेख मिलता है। ग्रहों एवं महाग्रहों की पारस्परिक दूरी और विभिन्न ग्रहों की सूर्य से दूरी चित्रों की सहायता से मीलों में दिखाई गयी है। गद्यात्मक ग्रन्थ संभवतः अपूर्ण रह गया है। इसमें खगोल ज्ञान के महत्व, वेद-वेदांग में खगोल विषयक ज्ञान आदि को उद्धृत किया गया है और ग्रहों की स्थिति का सचित्र वर्णन किया गया है।

खगोलज्ञान मंजूषा:—

इस अप्रकाशित ग्रन्थ की पाण्डुलिपि नैनीताल में उपलब्ध है। इसमें भी पृथ्वी, आकाश आदि का विस्तार से वर्णन करते हुए विभिन्न ग्रहों की स्थिति, उनकी पारस्परिक दूरी, सूर्य से दूरी एवं गति आदि का वर्णन किया गया है।

3.3.7.8 ज्योतिष ग्रन्थ:

सर्वार्थ चिन्तामणि: —

ज्योतिष से सम्बन्धित यह अप्रकाशित ग्रन्थ जातक प्रधान है। इस ग्रन्थ की एक पाण्डुलिपि नैनीताल में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ पुराने कागज पर काली स्याही से कलम द्वारा लिखा गया है।

ज्योतिर्विद कंठभूषण एवं यन्त्रविद्या:—

यह दोनों ज्योतिष संबंधी ग्रन्थ अप्रकाशित है और इनकी पाण्डुलिपि भी उपलब्ध नही हो पायी। इनका उल्लेख 'उत्तराखण्ड भारती' में प्रकाशित लेख में मिलता है।

3.3.7.9 कोष ग्रन्थ:

बहुभाषा क्रियाकोष: यह ग्रन्थ अप्रकाशित है। इस ग्रन्थ में वर्णक्रमानुसार लगभग बीस हजार क्रियाओं के हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत और कहीं-कहीं पर उर्दू पर्याय दिए गये है। इसमें कुल 123 पृष्ठ है।

3.3.7.10 सामाजिकशास्त्र सम्बन्धी ग्रन्थ:

सामाजिक शास्त्र मंजुषा: इस अप्रकाशित ग्रन्थ की पाण्डुलिपि लखनऊ में उपलब्ध है। इस ग्रन्थ में व्यक्ति के लिए समाज एवं समाज के लिए व्यक्ति के महत्व पर प्रकाश डाला गया है। समाज के विकास के लिए बालकों के शैक्षिक विकास, कर्म शिक्षा तथा नारी शिक्षा पर विशेष बल दिया गया है। यह ग्रन्थ गद्य में है और इसमें कुल 35 पृष्ठ है।

3.3.7.11 कथा ग्रन्थ:

श्रीकृष्ण जोशी जी ने प्रह्लाद कथा, युधिष्ठिर कथ, पृथु चरित्रम, नारद कथा, श्री भागवत कथा एवं सप्ताध्यायी सत्यनारायण कथा नामक ग्रन्थों की रचना की है। ये सभी अप्रकाशित है। इनकी पाण्डुलिपियाँ नैनीताल में उपलब्ध है। ये ग्रन्थ 8 इंच लम्बी और 6 इंच चौड़ी अभ्यास पुस्तिका में नीली स्याही से कलम द्वारा लिखे गये हैं। श्री भागवत कथा और सप्ताध्यायी सत्य नारायण कथा में लगभ 30-35 पृष्ठ है और अन्य कथा ग्रन्थ मात्र 10-15 पृष्ठों में विरचित हैं।

3.3.7.12 स्तोत्र ग्रन्थ:

श्री गंगामहिम्न स्तोत्रम्: —

इस ग्रन्थ में कवि ने 73 श्लोको में गंगा की पवित्र महिमा का गुणगान किया है। ग्रन्थ में कुल 116 पृष्ठ है।

श्रीकृष्णमहिम्न स्तोत्रम्: —

इस ग्रन्थ में कवि ने 56 श्लोकों में भगवान कृष्ण के विभिन्न रूपों की स्तुति की है। इस ग्रन्थ में ही प्रत्येक श्लोक का आंग्ल एवं हिन्दी अनुवाद भी प्रस्तुत किया गया है।

श्रीराममहिम्नस्त्रोतम्:—

इस ग्रन्थ में श्रीकृष्ण जोशी ने 72 श्लोंकों में मर्यादा पुरूषोत्तम भगवान श्रीराम के चरित्र का मनमोहन चित्रण किया गया है। उपर्युक्त तीनों ग्रन्थों का प्रकाशन स्वयं श्रीकृण जोशी ने हिन्दू विश्वविद्यालय काशी में धर्माध्यक्ष के पद पर कार्य करते हुए करवाया था।

3.3.7.13 अन्य रचनाएँ:

चरित्रमीमांसा: —

संस्कृत गद्य शैली में विरचित इस ग्रन्थ में लेखक ने चरित्र से सम्बन्धित अनेक वादों यथा - विलासवाद, सुखवाद, सुखैकान्तवाद आदि का उल्लेख करते हुए मानव चरित्र की सम्यक् विवेचना की है। इस अप्रकाशित ग्रन्थ की पाण्डुलिपि लखनऊ में सुरक्षित है।

राष्ट्रीय रामचरितम्:—

इस ग्रन्थ में मर्यादापुरूषोत्तम राम के प्रजा पालक रूप की आराधना मात्र 54 श्लोकों में की गई है। इस अप्रकाशित ग्रन्थ की पाण्डुलिपि नैनीताल में उपलब्ध है।

विज्ञानगीता:—

इस अप्रकाशित ग्रन्थ की पाण्डुलिपि उपलब्ध नही हो सकी। इसका उल्लेख मात्र मिलता है।

हिमालयमहिमा वर्णनम्:—

इस अप्रकाशित ग्रन्थ में नगाधिराज हिमालय की महिमा का वर्णन हुआ है। इस ग्रन्थ की पाण्डुलिपि नैनीताल में उपलब्ध है।

अपथ्यापथ्यम्:—

चिकित्सा संबंधी यह अप्रकाशित ग्रन्थ भी उपलब्ध नही हो सका। इसका उल्लेख मात्र मिलता है।

वृत्तदर्शनविज्ञानम्: —

इस ग्रन्थ का भी उल्लेख मात्र मिलता है। इसकी पाण्डुलिपि उपलब्ध नही हो सकी। जोशी जी के परिजनों से जानकारी मिली कि इस ग्रन्थ की पाण्डुलिपि स्वयं श्रीकृष्ण जोशी ने 7 जनवरी सन् 1957 ई0 को राजकीय संस्कृत विद्यालय काशी में प्रकाशनार्थ भेजी थी, लेकिन काशी से न तो इसका प्रकाशन हुआ और न ही इसकी पाण्डुलिपि को वापस किया गया।

3.3.8 शोधात्मक कार्य:

श्री जोशी जी ने कुमाऊँ की अनेक वंशों की वंशावलियाँ बनाई थीं, जिनमें चन्दवंशी राजाओं की वंशावली के अतिरिक्त, कुमाऊँ के पाण्डे, पंत, जोशी, तिवारी आदि अनेक वंशों की वंशावलियाँ है। ऐसी लगभग 40-42 वंशावलियाँ नैनीताल में उनके आवास में उपलब्ध हैं। यह भी ज्ञात होता है कि जोशी जी ने अल्मोड़ा एवं नैनीताल जिले के अनेक साहित्यकारों एवं उनकी साहित्यिक कृतियों की विवरणिका भी बनाई थी, जो अब तक प्रकाश में नही आ सके थे परन्तु आज यह विवरणिका उलपब्ध नही है।

3.3.9 राजनीतिक कार्य:

भारत के स्वाधीनता आन्दोलनों ने जोशी जी की जीवनधारा को भी प्रभावित किया बाल्यकाल से ही वे राष्ट्रीय भावना से ओत-प्रोत थे। यह भी ज्ञात होता है कि वे रंग बिरंगे

कागजों पर राष्ट्रीय भावना से परिपूर्ण गीत-कविता आदि रचकर गुप्त रूप से जनता में वितरित किया करते थे। जब ब्रिटिश सरकार ऐसे साहित्य का विनाश करने पर लगी तो जोशी जी के परिवार वालों ने राष्ट्रीय भावना से परिपूर्ण उनके सम्पूर्ण साहित्य को नष्ट कर दिया ताकि वे तथा उनका परिवार ब्रिटिश सरकार की कोपदृष्टि से बच सके। अपने विद्यार्थी जीवन काल में (सन् 1904 ई0 में)कवि ने बंग-भंग आन्दोलन में सक्रिय रूप से भाग लिया। सन् 1904 से सन् 1943 ई0 तक इन्होंने भारत के राजनीतिक आन्दोलनों में स्वार्थत्याग पूर्वक भाग लिया था। सन् 1904 से 1919 ई0 तक वे कांग्रेस के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करते रहे। सन् 1926 ई0 में महात्मा गाँधी के कहने पर उन्होंने अंग्रेजी न्यायालयों के बहिष्कार में शामिल होकर अपनी अच्छी खासी चलती हुयी वकालत त्याग दी। वकालत के दिनों में भी गुप्त रूप से धन आदि के द्वारा कांग्रेस तथा अन्य राजनीतिक संस्थाओं की सहायता किया करते थे। भारत के राष्ट्रीय आन्दोलनों में भाग लेते हुए उन्हें कुछ समय तक सर्वश्री सुन्दर लाल, पुरूषोत्तमदास टंडन तथा मन्सूर अली सोख्ते आदि के साथ गुप्तवास भी करना पड़ा था।सन् 1920 ई0 के पश्चात् उन्होंने राजनीति में सक्रिय भागीदारी कम कर दी थी, किन्तु राजनीति से पूर्ण रूपेण पृथक नहीं हुए। उन दिनों वे पर्दे के पीछे रहकर अपने सहयोगियों का मार्ग दर्शन करते थे। स्व0 श्री अम्बादत्त भट्ट, श्री घनानन्द जोशी तथा श्री के0 एन0 गैरोला उनके मार्गदर्शन से कार्य किया करते थे। उस समय उनकी राजनीति दो तरफा थी। एक ओर तो ब्रिटिश सरकार को भ्रम में रखकर, उनकी सरकारी चालों को जान लेते थे तथा दूसरी ओर गुप्त रूप से जनता को राष्ट्रीय हित के मार्ग पर आगे बढ़ने के लिए प्रेरित भी करते थे। देश के बड़े-बड़े राष्ट्रीय नेता; यथा- श्री गोविन्द बल्लभ पन्त एवं हरगोविन्द पन्त आदि राजनैतिक विषयों पर उनसे गुप्त मन्त्राणाएँ किया करते थे।

3.3.10 सामाजिक कार्य:

जोशी जी ने साहित्यिक एवं राजनीतिक क्षेत्रों में तो सक्रिय योगदान दिया ही, इसके साथ-साथ सामाजिक कार्यों में भी सदा आगे रहे। सन् 1926 ई0 से वे महामना मदनमोहन मालवी के साथ जुटकर काशी विश्वविद्यालय के नक्शे बनाते थे। काशी विश्वविद्यालय की स्थापना के बाद भी चन्दा एकत्रित करने के लिए उन्होंने अनेक स्थानों का भ्रमण किया था। उनकी इसी सेवा से प्रभावित होकर ही मालवीयजी ने उन्हें काशी विश्वविद्यालय में ही संस्कृत के धर्म विभाग में नियुक्त कर दिया था।

नैनीताल बैंक की स्थापना में भी उनका प्रमुख हाथ था। सन् 1910 ई0 में उन्होंने हरिद्वार में ऋषिकुल ब्रह्मचर्य आश्रम बनाने में अपना सर्वस्व लगा दिया था। हरिद्वार में पर्वतीय धर्मशाला की स्थापना में भी उन्होंने सक्रिय योगदान दिया। सन् 1919 ई0 से सन् 1926 ई0 तक कुमाऊँ परिषद के अध्यक्ष पद को भी वे सुशोभित करते रहे। भगवानदास आयोग के सदस्य के रूप में उन्होंने वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय की मूलभूत भावनाओं को प्रोत्साहित करने में सहयोग दिया। इसी काल में वे 'अखिल भारतीय सनातन धर्म महामण्डल' के सचिव भी रहे।

भारतीय पंचाग संशोधन के निमित्त गठित 'चुलैट कमेटी' के सदस्य रहकर उन्होंने भारतीय ज्योतिष विज्ञान के सूत्रपात में योगदान दिया था। इसी चुलैट कमीशन की सिफारिशों के आधार पर ही नैनीताल में वेधशाला की स्थापना की गई थी।

अपने विद्यार्थी जीवन से ही, वे छात्रों को किसी न किसी रूप में सहायता दिया करते थे। जब वे काशी पढ़ने गये तब धनाभाव होने पर उन्होंने अध्ययन के साथ-साथ ट्यूशन भी पढ़ाए। इससे जो भी आय होती थी, उससे अपना खर्च चलाने के साथ ही वे कई अन्य छात्रों को भी आर्थिक सहायता दिया करते थे। जब वे काशी विश्वविद्यालय में कार्यरत थे तब सदैव छात्रों को आवास, भोजन एवं पुस्तकों के रूप में भी सहायता देते थे। वस्तुतः 'विद्या उनका व्यसन था तो विद्यार्थी उनके प्राण थे।' काशी से वापस आने के पश्चात् उन्होंने अपने नैनीताल स्थित आवास में ही एक संस्कृत पाठशाला स्थापित की थी, जिसमें छात्रों को निःशुल्क शिक्षा देने की व्यवस्था थी। उन्होंने नैनीताल में पौराणिक साहित्य एवं दर्शन ग्रन्थों का एक विशाल पुस्तकालय भी स्थापित किया था। इस पुस्तकालय की समस्त पुस्तकें उन्होंने बाद में ताड़ीखेत में स्थापित एक आश्रम को दे दी थी। उनका एक निजी पुस्तकालय भी था, जिसकी अधिकांश पुस्तकें मृत्यु से पूर्व वे अखिल भारतीय संस्कृत परिषद, लखनऊ को समर्पित कर गऐ थे।

श्रीकृष्ण जोशी को प्राप्त पुरस्कार एवं सम्मान: —

श्रीकृष्ण जोशी को अपने वैदुष्य के कारण अपने जीवन काल में पर्याप्त सम्मान मिला था। कानून के विद्यार्थी तथा एक सफल अधिवक्ता होते हुए भी मालवीय जी ने पहले सन् 1927 ई0 में उन्हें सम्मानपूर्वक हिन्दू धर्म विभग में मानद प्रवक्ता और बाद में धर्माचार्य के पद पर अधिष्ठित किया। उनके संस्कृत ज्ञान के कारण सन् 1917 ई0 में भारत धर्म महामण्डल ने उन्हें 'विद्याभूषण' की उपाधि प्रदान की थी। काशी के विद्वत्समाज ने इन्हें 'कवि सुधाशु' की उपाधि से सुशोभित किया था। काशी विश्वविद्यालय से अवकाश प्राप्त कर नैनीताल आने के कुछ समय पश्चात् वे मध्य भारत में राजस्थान की ओर चले गये। वहाँ उन्होंने महाराजा आरनोद के पुत्रों को पढ़ाया था। आरनोद के महाराजा ने उनकी विद्वता से प्रसन्न होकर उन्हें एक छोटी सी जागीर प्रदान की थी, किन्तु वे उसका मोह त्याग कर नैनीताल लौट आये।

जोशी जी के मित्र वर्ग में महामना पंडित मदन मोहन मालवीय का नाम सर्वप्रथम उल्लेखनीय है। मालवीय जी भी उनके प्रति विशेष स्नेह तथा आदर भाव रखते थे। जब श्रीकृष्ण जोशी वहाँ से सेवानिवृत्त हुए तब मालवीय जी को अत्यधिक दुःख हुआ था। पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त तथा हरगोविन्द पंत भी जोशी जी के अच्छे मित्रों में थे। चतुरानन जोशी जी के संस्मरण से यह जानकारी मिलती है कि गोविन्द बल्लभ पंत म्योर सेन्ट्रल कॉलेज, इलाहाबाद में उनके सहपाठी रह चुके थे।

उत्तरप्रदेश के भूतपूर्व राज्यपाल श्री के0एम0 मुंशी जी से भी जोशी जी की अच्छी मित्रता थी। उनके नैनीताल प्रवास के समय श्रीकृष्ण उन्हें संस्कृत पढ़ाया करते थे। आरनोद के

महाराजा भी आपके प्रति मैत्रीभाव रखते थे और आर्थिक विषमता के दिनों में यदा-कदा आपकी सहायता भी करते थे। आनन्द शंकर बापूभाई ध्रुव जी तथा श्यामचरण पाण्डे आदि प्रतिष्ठित पंडित आपके मित्र थे। इसके अतिरिक्त प्रौद्योगिकी संस्थान, नैनीताल के संस्थापक श्री गंगादत्त पाण्डे, श्री घनानन्द जोशी और श्री अम्बादत्त भट्ट भी आपके मित्रों में थे। श्री चतुरानन जोशी आपके बन्धु एवं अभिन्न मित्र थे।

3.3.11 कवि की आर्थिक स्थिति:

श्रीकृष्ण जोशी का जन्म संयुक्त परिवार में हुआ था। उनके पिता सार्वजनिक निर्माण विभाग में लिपिक पद पर मात्र पचहत्तर रूपये मासिक वेतन पर कार्य करते थे। अतः आर्थिक कठिनाईयों के कारण पिता श्री बद्रीदत्त जोशी दसवी कक्षा के पश्चात उन्हें आगे पढ़ा सकने में असमर्थ थे। जैसे-तैसे उन्होंने इन्टर की परीक्षा उत्तीर्ण की। बी0ए0 तथा एल0एल0बी0 की शिक्षा भी ट्यूशन करते हुए स्वयं धन जुटाकर प्राप्त की थी। वकालत प्रारम्भ करने के बाद उनकी आर्थिक स्थिति सुधर गयी। इसी बीच दुर्भाग्य से उनके पिता की मृत्यु हो गई। परिवार के साथ ही कर्ज का भारी बोझ भी श्रीकृष्ण के कन्धों पर आ पड़ा। जोशी जी ने इस कर्ज को चुकाने के अतिरिक्त अपने तीन छोटे भाइयों को कानून की शिक्षा भी दिलवाई। इन दिनों वे स्वतंत्रता संग्राम के आन्दोलनकारियों को भी गुप्त रूप से आर्थिक सहायता देते थे। पंडित गोविन्द बल्लभ पंत तथा हरगोविन्द पंत भी यदा-कदा उनसे आर्थिक सहायता लेते थे। सन् 1926 ई0 में उन्होंने कृष्णापुर नैनीताल में भूमि खरीदी तथा वही पर मकान भी बनवाया।

सन् 1926 ई0 में उन्होंने वकालत त्याग दी तथा मालवीय जी के पास काशी चले गये। वहाँ धर्म विभाग में कार्य करते हुए उन्हें निःशुल्क आवास तथा दो सौ रूपे मानदेय प्राप्त था। उन दिनों परिवार काफी बड़ा था। अतः दो सौ रूपये मिलने पर आर्थिक स्थिति सन्तोषजनक तो नही कही जा सकती, किन्तु गृहस्थी की गाड़ी जैसे-तैसे चलती रही। आर्थिक विषमताएँ संभवतः उनके भाग्य में लिखी हुई थी। सन् 1944 ई0 में उन्हें धर्माध्यक्ष पद त्यागना पड़ा। तब वे नैनीताल आ गये और पुनः कचहरी जाने की दिनचर्या प्रारम्भ की, किन्तु वकालत का कार्य पूर्ववत् नहीं चल सका। आर्थिक उतार-चढ़ाव के कारण उन्हें वृद्धावस्था में अत्यधिक कष्ट झेलने पड़े।

3.3.12 स्वभाव एवं चरित्र:

श्रीकृष्ण जोशी अत्यन्त मृदु, सहनशील एवं शान्तिप्रिय थे। विषम से विषम परिस्थितियों में भी उनके मुख पर वही चिर परिचित मुस्कान खेला करती थी। हताश होना तो उन्होंने जाना ही न था। वे अत्यन्त वाक्पटु थे। ब्रिटिश काल में जब अंग्रेज न्यायाधीश न्यायालय में उनसे यह कहते कि आप ब्राह्माण पंडित होकर भी कोर्ट में झूठ बोलते है, तब वे बड़े सहज भाव से उत्तर देते थे- ब्राह्मण अथवा पंडित होकर झूठ नहीं बोलता अपितु वही कहता हूँ जो कोर्ट के कागज कहते है। कोर्ट समाप्त होने पर अंग्रेज न्यायाधीश उन्हें 'पंडित जी कागजी झूठ' कहकर एक बार

अवश्य संबोधित करते थे, किन्तु जोशी जी इस व्यंग का कभी भी बुरा नहीं मानते थे। परोपकार की भावना उनमें कूट-कूट कर भरी थी।

अतिथि सत्कार में आपको विशेष सुख मिलता था। अतिथि को देवता तुल्य मानते थे। कृतज्ञता की भावना से भी जोशी जी ओत-प्रोत थे। श्री जनार्दन जोशी जी ने जोशी जी को विद्यार्थी जीवन में आर्थिक सहाया दी थी। वे निःसन्तान थे अतः उनके दिवंगत होने पर जोशी जी 12 वर्ष तक निरन्तर पितृपक्ष में गया जाकर अपने पितरों के साथ ही उन्हें भी पिण्डदान देते थे। लोभ ने जोशी जी का स्पर्श भी नहीं किया था। आरनोद मे महाराजा ने उन्हें एक छोटी सी जागीर दी, किन्तु उन्होंने उसे स्वीकार नही किया।

जोशी जी नित्य ब्राह्म मूहुर्त में उठकर पूजा पाठ करते थे। वैश्वदेव यज्ञ करके तथा किसी अतिथि को भोजन कराने के बाद ही स्वयं भोजन ग्रहण करना उनका नित्य का नियम था। अध्ययन और अध्यापन में उनकी विशेष रूचि थी। वृद्धावस्था में तो पुस्तकें ही उनकी बन्धु एवं मित्र थी। उन्होंने पुस्तकों का विशाल संग्रह किया था। तत्कालीन राजनीति एवं स्वतन्त्रता आन्दोलनों में भी वे रूचि लेते थे। यदा-कदा वे मृदंग बजाकर अपना तथा दूसरों का मनोरंजन करते थे। शतरंज में भी उनकी विशेष रूचि थी।

3.3.13 वेशभूषा:

विद्यार्थी जीवन काल में जोशी जी की वेशभूषा विशुद्ध भारतीय थी। उन दिनों वे धोती, कुर्ता और ऊपर से चादर धारण करते थे तथा सिर पर टोपी पहनते थे। यदा-कदा कुत्ते के ऊपर वास्कट भी पहनते थे। वकालत के दिनों में वे न्यायालय जाते वक्त पैण्ट, कमीज, कोट, पैरों में जूते तथा सिर पर पगड़ी धारण करते थे। उनके हाथ में छड़ी रहती थी।। नाटककार के पुत्र ने बताया कि वे पैण्ट के अन्दर धोती भी अवश्य पहनते थे। अपनी विशेष योग्यताओं के लिए उन्हें अनेक पदक मिले थे। जिन्हें धारण कर वह न्यायालय जाते थे। आँखों पर वे सुनहरे तार की कमानी वाला चश्मा पहनते थे तथा सदैव छोटे रूद्राक्ष की माला धारण करते थे। वे हृष्ट पुष्ट शरीर वाले थे। उनका ललाट चैड़ा, आँखें तेजस्वी, कपोल कुछ अन्दर धँसे हुए, नासिका ऊँची तथा चिबुक छोटी थी। वे बड़ी-बड़ी मूँछें भी रखते थे।

3.4 सारांश:-

हिमालय की गोद में स्थित कूर्मांचल की पवित्र धरती में जन्म लेने वाले विद्याभूषण श्रीकृष्ण जोशी संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान एवं महान साहित्यकार थे। उन्होंने संस्कृत साहित्य की विभिन्न विधाओं में ग्रन्थ रचना करके उसकी अभिवृद्धि में अमूल्य योगदान दिया। नाटक, महाकाव्य, खण्डकाव्य, गीतिकाव्य, व्याकरण, दर्शन, गीता-भाष्य, मनोविज्ञान, खगोल, ज्योतिष, कोषग्रन्थ, सामाजिक शास्त्र, स्तोत्र ग्रन्थ आदि सभी विषयों में अपनी लेखनी का चमत्कार प्रदर्शित किया। इसके साथ-साथ श्रीकृष्ण जोशी ने तत्कालीन राजनीति में स्वयं भी प्रतिभाग किया तथा अन्य क्रान्तिकारियों का मार्गदर्शन भी किया। वे एक सक्रिय सामाजिक तथा

राजनैतिक कार्यकत्ता तथा संस्कृत के अनन्य सेवक थे। संस्कृत साहित्य को 20 वीं शताब्दी के इस साहित्यकार की देन अनमोल है।

अभ्यास प्रश्न

टिप्पणी

(1) श्रीकृतार्थकौशिकम् नाटक

(2) रामरसायन महाकाव्य

(3) श्रीकृष्ण जोशी के पूर्वज

बहुविकल्पीय प्रश्न

निर्देश: यहाँ प्रत्येक प्रश्न के चार वैकल्पिक उत्तर दिए गए है, जिनमें से एक सही है। उस सही उत्तर को चुनिए।

1. श्रीकृष्ण जोशी ने कितने नाटकों की रचना की।

(क) तीन (ख) चार

(ग) पाँच (घ) छः

2. श्रीकृष्ण जोशी का जन्म कहाँ हुआ -

(क) नैनीताल (ख) लोहाघाट

(ग) चकराता (घ) अल्मोड़ा

3. श्रीकृष्ण जोशी के पिता का नाम क्या था ?

(क) गंगादत्त (ख) विष्णुवल्लभ

(ग) बदरीदत्त (घ) रूद्रदत्त

4. श्रीकृष्ण जोशी ने इन्टरमीडिएट की परीक्षा कहाँ से पास की -

(क) राजकीय इन्टर कॉलेज, नैनीताल (ख) रैमजे इन्टर कॉलेज अल्मोड़ा

(ग) राजकीय इन्टर कॉलेज, अल्मोड़ा (घ) म्योर सेन्ट्रल कॉलेज इलाहाबाद

5. किसके आग्रह पर श्रीकृष्ण जोशी ने वकालत छोड़ी -

(क) मदन मोहन मालवीय जी के (ख) महात्मा गाँधी जी के

(ग) अपनी पत्नी के (घ) अपने पिता के

6. वकालत छोड़ने के बाद श्रीकृष्ण जोशी ने कहाँ अध्यापन कार्य किया

(क) जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय (ख) अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय

(ग) काशी विश्वविद्यालय (घ) काशी विद्यापीठ

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. श्रीकृष्ण जोशी का प्रकाशित नाटक ..... है।

2. ..... कवि का सामाजिक शास्त्र विषयक ग्रन्थ है।

3. श्रीकृष्ण जोशी को काशी विश्वविद्यालय ले जाने वाले ..... थे।

4. काशी के भारत धर्म महामण्डल ने उन्हें ..... की उपाधि प्रदान की थी।
5. श्रीकृष्ण जोशी का देहान्त 8 जून सन् ..... को हुआ था।
6. इनका दर्शन विषयक प्रकाशित ग्रन्थ ..... है।

अतिलघुउत्तरीय प्रश्न

1. श्रीकृष्ण जोशी का श्रीकृतार्थकौशिक नाटक कब प्रकाशित हुआ?
2. श्रीकृष्ण जोशी ने किससे प्रेरणा पाकर वकालत छोड़ी?
3. जोशी जी का संगीत संबंधी ग्रन्थ कौन सा है?
4. श्रीकृष्ण जोशी का बालोपयोगी संस्कृत व्याकरण ग्रन्थ का नाम बताइए।
5. श्रीकृष्ण जोशी के स्त्रोत ग्रन्थों के नाम बताइए।
6. कौन से प्रसिद्ध स्वतंत्रता संग्राम सेनानी श्रीकृष्ण जोशी के मित्र थे।

सत्य/असत्य बताइए

1. श्रीकृष्ण जोशी उत्तराखण्ड के गढ़वाल क्षेत्र से थे।
2. श्रीकृष्ण जोशी भारतीय पंचाग संशोधन हेतु गठित ''चुलैट कमेटी'' के अध्यक्ष थे।
3. विद्याभूषण इनकी उपाधि थी।
4. 'सर्वार्थ चिन्तामणि' श्रीकृष्ण जोशी की कृति नहीं है।
5. 'अन्तरंगमीमांसा' एक ज्योतिष ग्रन्थ है।
6. काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से सेवानिवृत्त होकर ये नैनीताल बस गए।

नोट: ऊपर दिए गए प्रश्नों के उत्तर इकाई के अन्त में दिए गये हैं किन्तु हमारा सुझाव है कि आप स्वमूल्यांकन हेतु उनसे अपने उत्तरों का मिलान करके देखें।

3.5 पारिभाषिक शब्दावली:

म्योर सेन्ट्रल कॉलेज: आजकल के माध्यमिक शिक्षा परिषद उत्तर प्रदेश या उत्तराखण्ड माध्यमिक शिक्षा परिषद की तरह उस समय मिडिल परीक्षा का प्रमाण पत्र ''म्योर सेन्ट्रल कॉलेज इलाहाबाद द्वारा दिया जाता था।

चुलैट कमेटी: भारतीय पंचाग संशोधन के निमित्त गठित समिति का नाम। श्रीकृष्ण जोशी भी इसके सदस्य थे।

मतिप्रशिक्ष: अंग्रेजी के 'मैटाफिजिक्स' शब्द का मतिप्रशिक्ष अनुवाद करके श्रीकृष्ण जोशी ने अपने ग्रन्थ 'मतिप्रशिक्षशास्त्र' में पाश्चात्य दर्शनों का संग्रह एवं समालोचना की।

3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर:-

टिप्पणी:

1. 'श्रीकृतार्थकौशिकम् नाटक' के लिए उपखण्ड संख्या 1.3.7.1 देंखे।
2. 'रामरसायन महाकाव्य' के लिए उपखण्ड संख्या 1.3.7.2 देंखे।

3. 'श्रीकृष्ण जोशी के पूर्वज' के लिए उपखण्ड संख्या 1.3.1 देखे।

बहुविकल्पीय

(1) क (2) घ

(3) ग (4) ग

(5) क (6) ग

रिक्त स्थान पूर्ति

1.श्रीकृतार्थकौशिकम् 2.सामाजिकशास्त्रमंजूषा

3. महामना पण्डित मदन मोहन मालवीय 4. विद्याभूषण

5. 1965 ईसवी 6. मतिप्रशिक्षास्त्र अथवा परमतत्त्वमीमांसा

अतिलघूउत्तरीय

1. सन् 1975 ईसवी में 2. महात्मा गाँधी से

3. संगीतराघवीयम् 4. संस्कृतबोधक

5. श्रीराममहिम्न, श्री गंगा महिम्न एवं श्रीकृष्णमहिम्न स्तोत्र

6. गोविन्दवल्लभ पन्त एवं हरगोविन्द पन्त

सत्य/असत्य

1. असत्य 2. असत्य 3. सत्य

4. असत्य 5. असत्य 6. सत्य

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ/सहायक सामग्री:-

1. कुमाऊँ का इतिहास, बद्रीदत्त पाण्डे

2. श्रीकृष्ण जोशी के संस्कृत नाटक, डा0 पुष्पा अवस्थी

3. परशुरामचरितम् नाटक, डा0 जगन्नाथ जोशी

4. श्रीकृतार्थकौशिकम् नाटक की भूमिका, डा0 उषा सत्यव्रत

5. श्रीकृष्ण जोशी के परिजनों से प्राप्त जानकारी के आधार पर।

6. अखिल भारतीय संस्कृत परिषद्, लखनऊ के सहयोग से।

3.8 निबन्धात्मक प्रश्न:-

1. श्रीकृष्ण जोशी पूर्वज, जन्म, शिक्षा-दिक्षा आदि का विस्तृत वर्णन कीजिए।

2. जोशी जी की रचनाओं का परिचय दीजिए।

3. श्रीकृष्ण जोशी के सामाजिक एवं राजनीतिक क्रियाकलापों पर प्रकाश डालिए।

4. श्रीकृष्ण जोशी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का परिचय दीजिए।

इकाई 4. श्री हरिनारायण दीक्षित का जीवन परिचय एवं उनका रचना संसार

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 इकाई की पाठ्य सामग्री
4.3.1 श्री हरिनारायण दीक्षित का जन्म एवं माता पिता
4.3.2 शिक्षा-दीक्षा
4.3.3 आजीविका
4.3.4 दीक्षित जी का रचना संसार
4.3.4.1 महाकाव्य
4.3.4.2 खण्डकाव्य
4.3.4.3 मुक्तक काव्य
4.3.4.4 सन्देश काव्य
4.3.4.5 कथाकाव्य
4.3.4.6 संस्कृत नाटक
4.3.4.7 गद्यकाव्य
4.3.4.8 शोधपरक ग्रन्थ
4.3.4.9 छात्रोपयोगी ग्रन्थ
4.3.4.10 नीतिविषयक ग्रन्थ
4.3.4.11 श्री हरिनारायण दीक्षित के व्यक्तित्व की विशेषताएँ
4.3.4.12 श्री हरिनारायण को प्राप्त पुरस्कार एवं सम्मान
4.4 सारांश
4.5 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
4.6 सन्दर्भ ग्रन्थ/सहायक सामग्री
4.7 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावाना:-

उत्तराखण्ड में संस्कृत साहित्य की आधुनिक प्रतिभाएँ नामक प्रथम खण्ड की चतुर्थ इकाई का नाम है 'श्री हरि नारायण दीक्षित का जीवन परिचय एवं उनका रचना संसार' है। इससे पूर्व की इकाई में उत्तराखण्ड के संस्कृत के सुप्रसिद्ध कवि एवं साहित्यकार लोकरत्न गुमानी एवं विद्याभूषण, श्रीकृष्ण जोशी द्वारा संस्कृत साहित्य को दिए गए योगदान के विषय में जान चुके है।

इस इकाई में आप 20 वीं 21 वीं सदी के संस्कृत साहित्यकार श्री हरिनारायण दीक्षित के बारे में विस्तार से जानेंगे। यद्यपि इनका जन्म, शिक्षा-दीक्षा एवं प्रारंभिक कार्यक्षेत्र उत्तर प्रदेश रहा किन्तु इनकी समस्त संस्कृत सारस्वत-साधना उत्तराखंड के नैनीताल नगर में ही सम्पन्न हुई। इस इकाई में आप कवि के जीवन परिचय के साथ-साथ उनके रचना संसार से भी परिचित हो पाएंगे।

4.2 उद्देश्य:-

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप—

- बता पाऐंगे कि श्री हरिनारायण का जन्म कब तथा कहाँ हुआ।
- भलीभाँति समझा सकेंगे कि उनके माता-पिता कौन थे तथा उनकी शिक्षा-दीक्षा कहाँ सम्पन्न हुई।
- श्री हरिनारायण दीक्षित के प्रारम्भिक कार्यक्षेत्र के बारे में अच्छी तरह बता पाऐंगे।
- श्री दीक्षित द्वारा कुमाँऊ विश्वविद्यालय को दी गई सेवाओं के विषय में भली भाँति बता सकेंगे।
- कवि के द्वारा रचित महाकाव्य, खण्डकाव्य, नाटक आदि के बारे में भली भाँति बता सकेंगे।
- कवि के द्वारा रचित कथा काव्य के विषय में अच्छी प्रकार से जानकारी दे सकेंगे।
- कवि को उनकी विभिन्न कृतियों के लिए मिले सम्मान एवं पुरस्कारों के बारे में अच्छी प्रकार से बता पाएंगे।

4.3 इकाई की पाठ्य सामग्री:-

उत्तराखण्ड की पावन धरती और उस पर रमणीय झील से युक्त नैनीताल नगरी यदि संवेदनशील, संस्कृत के प्रति समर्पित विद्वान् की कवित्व प्रतिभा को प्रस्फुटित कर दे तो इसमें कैसा आश्चर्य ? कुछ ऐसा ही हुआ श्री हरि नारायण दीक्षित के साथ उनकी कवित्व प्रतिभा और विद्वता ने नैनीताल की रमणीयता के संयोग से उनसे अनेकानेक संस्कृत ग्रन्थों एवं समालोचनात्मक ग्रन्थों की रचना करवा दी। हरिनारायण दीक्षित जी की सम्पूर्ण सारस्वत-साधना

नैनीताल नगरी में ही सम्पन्न हुई। संस्कृत की इस आधुनिक प्रतिभा के जन्म आदि का विवरण इस प्रकार है-

4.3.1 श्री हरिनारायण दीक्षित का जन्म एवं माता-पिता:-

संस्कृत की महान विभूति श्री हरिनारायण दीक्षित का जन्म भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति से लगभग 11 (ग्यारह) वर्ष पूर्व 13 जनवरी, 1936 ईसवी में कृष्ण पक्ष की माघी चतुर्थी को हुआ था। ये मूल रूप से उत्तर प्रदेश के जालौन जिले के समीप स्थित सरावन के 'पड़कुला' नामक गाँव के रहने वाले हैं। इनके पिता का नाम श्री रघुवीर सहाय तथा माता का नाम श्रीमती सुदामा देवी है। ये कान्यकुब्ज गोत्रोत्पन्न ब्राह्मण हैं।

4.3.2 शिक्षा-दिक्षा:-

दीक्षित जी की प्रारंभिक शिक्षा-दिक्षा अपने जन्म स्थान के आस-पास ही सम्पन्न हुई। बचपन से ही ये अत्यन्त प्रतिभावान तथा शिक्षा के प्रति जागरूक थे। इनके घर का वातावरण संस्कृतमय तथा भारतीय संस्कृति से परिपूर्ण था। इनके पिता अनुशासन प्रिय तथा संस्कृतानुरागी थे। कवि श्री हरिनारायण की शिक्षा दीक्षा प्राच्य तथा आधुनिक दोनों पद्धतियों से हुई।

उन्होंने संस्कृत की उच्च शिक्षा, वाराणसेय विश्वविद्यालय, वाराणसी से प्राप्त की थी। यह शिक्षा संस्थान अब सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालयए वाराणसी के नाम से विख्यात है। यहाँ से दीक्षित जी ने व्याकरण सांख्ययोग एवं साहित्य में आचार्य की उपाधि प्राप्त की। बाद में इन्होंने आगरा विश्वविद्याल से स्नातक, स्नातकोत्तर (संस्कृत) तथा शोधोपाधि (पी-एच0डी0) प्राप्त की। इन्होंने ''संस्कृत साहित्य में राष्ट्रीय भावना'' विषय पर डी0लिट0 की उपाधि भी प्राप्त की।

4.3.3 आजीविका:-

संस्कृतानुरागी तथा संस्कृत के प्रति समर्पित कविवर दीक्षित जी के बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न वयक्तित्व से अनेकानेक लोग प्रभावित हुए। फलस्वरूप संस्कृत ही उनकी आजीविका का साधन बनी। अनके शिक्षण संस्थानों से इन्हें अध्यापन कार्य के लिए आमन्त्रित किया जाने लगा। दीक्षित जी ने अनेक संस्कृत विद्यालयों, विश्वविद्यालयों में अध्यापन का कार्य किया। जिनका विवरण इस प्रकार है—

(क) आदर्श संस्कृत विद्यालय, उरई, जालौन, उत्तर प्रदेश

(ख) सीताराम जयराम आदर्श संस्कृत महाविद्यालय

(ग) बरेली कॉलेज, बरेली

(घ) के0एन0 राजकीय महाविद्यालय, ज्ञानपुर, वाराणसी

(ड.) राजकीय महाविद्यालय, टिहरी, गढ़वाल

(च) कुमाँऊ विश्वविद्यालय, नैनीताल

इस प्रकार विभिन्न संस्थानों में अध्यापन कार्य करते हुए दीक्षित जी 9 नवम्बर, 1979 को डी0एस0बी0 राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यायल, नैनीताल में टिहरी गढ़वाल से स्थानान्तरित

होकर आए। तब तक वे लोक सेवा आयोग से चयनित होकर प्रवक्ता पद पर नियुक्ति प्राप्त कर चुके थे। कालान्तर में वे कुमाँऊ विश्वविद्यालय में वरिष्ठ प्रवक्ता, रीडर तथा प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, संस्कृत विभाग के रूप में भी कार्यरत् रहे। सन् 1996 में वे कुमाँऊ विश्वविद्यालय के प्रोफेसर एवं अध्यक्ष संस्कृत विभाग के पद से सेवानिवृत्त हुए। इस प्रकार इन्होंने लगभग 17 वर्षों तक कुमाँऊ विश्वविद्यालय को अपने सेवाएँ दी। नैनीताल नगरी ने कवि को कुछ ऐसा लुभाया कि सेवानिवृत्ति के बाद भी वे यहीं रहकर काव्य साधना एवं संस्कृत के संरक्षण सवंर्धन हुत कार्य करते रहे। आज भी इनका अधिकांश समय नैनीताल में ही संस्कृत-साधना में व्यतीत होता है।

4.3.4 दीक्षित जी का रचना संसार:-

संस्कृत के अध्ययन-अध्यापन के साथ ही संस्कृत के अनन्य सेवक दीक्षित जी ने संस्कृत साहित्य को अनेक ग्रन्थ-रत्न प्रदान किए। ये निरन्तर अपने कविकर्म को समाज कल्याण का हेतु मानकर साहित्य सृजन करते रहे। इन्होंने संस्कृत साहित्य की विभिन्न विधाओं में ग्रन्थ रचना की जिनमें महाकाव्य, खण्ड काव्य, नाटक आदि हैं। समालोचनात्मक ग्रन्थों की भी इन्होंने रचना की। संस्कृत भाषा कवि की प्रिया थी तो संस्कृत लेखन इनका प्रेम था। संस्कृत के प्रति अपने इसी अनुराग के कारण ये सतत् संस्कृत भाषा में ग्रन्थ रचना करते चले गए। इनके संस्कृत भाषा में लिखित ग्रन्थ इस प्रकार है-

4.3.4.1 महाकाव्य:-

1. भीष्मचरितम्—

महाभारत के प्रमुख पात्र देवव्रत (भीष्म) के जीवन-चरित को आधार बनाकर लिखा गया श्री दीक्षित जी का यह महाकाव्य 20 सर्गों में निबद्ध है। शान्तनु पुत्र भीष्म के जन्म से लेकर महाभारत की लड़ाई के बाद सूर्य के उत्तरायण में आने पर भीष्मपितामह के शरीर त्याग तक की समस्त कथा को कवि ने भीष्मचरितम् महाकाव्य की कथावस्तु बनाया है। इस महाकाव्य का प्रकाशन सन् 1991 में ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली से हो चुका है। अपने ''भीष्मचरितम्'' महाकाव्य पर श्री दीक्षित जी को उत्तर प्रदेश संस्कृत अकादमी द्वारा सन् 1992 में साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

2. ग्वल्लदेवचरितम्—

कुमाँऊ की जनता के आस्था के केन्द्र यहाँ के प्रख्यात लोक देवता गोलू देव (ग्वल्ल देव) की महिमा का गुणगान करने वाले इस महाकाव्य में गोलू देव की उत्पत्ति से लेकर जनमानस में देवता के रूप में प्रतिष्ठित होने के हेतुभूत उनके समस्त क्रियाकलापों का वर्णन किया गया है। कुमाँऊ में कहाँ-कहाँ इनके मन्दिर हैं ? तथा लोगों में इनके प्रति कैसी आस्था है? इसका विस्तृत वर्णन महाकाव्य में किया। कुमाँऊ में गोलू देव न्याय के देवता के रूप में प्रख्यात है। अतः उनकी न्यायप्रियता का वर्णन भी इस महाकाव्य में किया गया है। इस महाकाव्य का प्रकाशन भी ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली से हुआ है।

3. भारतमाता ब्रूते—

श्री हरिनारायण दीक्षित द्वारा रचित यह महाकाव्य सन् 2003 ईसवी में ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली से प्रकाशित है। इस महाकाव्य में कुल 22 सर्ग है। इसमें वर्तमान की भोगवादी संस्कृति में भारतीय संस्कृति के मूल तत्वों के ह्रास का वर्णन करते हुए कवि के द्वारा उसके संरक्षण के उपायों का विस्तार से उल्लेख किया गया है। कवि का यह ग्रन्थ भारतीय संस्कृति के प्रति उनकी अटूट आस्था को दर्शाता है। पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव के कारण भारतीय संस्कृति का क्षय कवि को पीड़ित कर देता है। अतः भरतीय संस्कृति के प्रहरी के रूप में उनके विचार इस काव्य में अभिव्यक्त हुए।

4. राधाचरित्—

इस महाकाव्य में कवि ने कृष्ण कथा की एक उपेक्षित नायिका राधा के अभिनव रूप को प्रस्तुत किया है। श्री कृष्ण से अनन्य प्रेम करने वाली राधा कभी कृष्ण का सान्निध्य नहीं पा सकी। यद्यपि कृष्ण भी राधा से प्रेम करते थे तथापि वे राधा को वो स्थान नहीं दे पाए जो उसे मिलना चाहिए था। राधा-कृष्ण के जीवन से सम्बन्धित इस सारे इतिवृत्त को कवि ने इस महाकाव्य में पिरोया है। 22 सर्गों में विभक्त कवि के इस ग्रन्थ का प्रकाशन सन् 2008 ईसवी में ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली से हुआ है। उत्कृष्टता, वैचित्रय एवं सुन्दर वर्णन की दृष्टि से प्रस्तुत महाकाव्य अत्यन्त सजीव, सौम्य एवं नूतन है।

4.3.4.2 खण्डकाव्य:-

1. अजमोहः भंगम्—

यह खण्डकाव्य रघुवंशी नरेश अज के मोहभंग से सम्बन्धित है। इस ग्रन्थ का प्रकाशन भी ईस्टर्न बुक लिंकर्स से सन् 2009 में हुआ है। इस ग्रन्थ में अपनी रानी इन्दुमती की मृत्यु से शोकाकुल हो अपने कत्र्तव्यपथ से विमुख राजा अज किस प्रकार ब्रह्मर्षि वशिष्ठ के उपदेश से मोहासक्ति से मुक्त होते है, इसी घटनाक्रम का वर्णन किया गया है।

2. पशुपक्षीविचिन्तनम्—

पशु पक्षियों के प्रति कवि की संवेदनशीलता को दर्शाने वाला श्री दीक्षित जी का यह खण्डकाव्य ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली से सन् 2008 में प्रकाशित है। प्रस्तुत खण्डकाव्य आज के युग में हिंसक वृत्ति वाले लोगों द्वारा पशु-पक्षियों पर होने वाले अत्याचारों से द्रवीभूत कवि की इन प्राणियों के प्रति करूणा, दया और ममता का प्रतिरूप है। इस काव्य का कवि ने स्वयं हिन्दी अनुवाद भी प्रस्तुत किया है।

3. गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालीयम्—

उत्तराखण्ड राज्य की पावन नगरी, पतितपावनी गंगा की अविरल धारा से आप्लावित हरिद्वार में स्वामी श्रद्धानंद आदि के प्रयासों के परिणामस्वरूप फलीभूत गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का विस्तृत परिचयात्मक यशोगान करने वाला श्री दीक्षित जी का यह खण्डकाव्य

प्रशंसनीय है। इस ग्रन्थ का प्रकाशन श्री स्वामी श्रद्धानन्द अनुसन्धान प्रकाशन केन्द्र गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार से ही सन् 2002 ईसवी में हुआ।

4.3.4.3 मुक्तक काव्य

1. देशोऽयं कुरुते प्रोन्नतिम्—

भारतवर्ष की वर्तमान दशा को देखकर द्रवीभूत हृदय वाले संवेदनशील कवि श्री दीक्षित जी ने अपने इस मुक्तक काव्य में भारत देश की दुर्दशा को व्यंग्यपूर्ण शैली में वर्णन करते हुए देश की उन्नति की कामना को अभिव्यक्त किया है। इस मुक्तक काव्य का प्रकाशन सन् 1993 ईसवी में ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली से हुआ है।

2. मनुजाश्रुणुत गिरं मे—

मानव मात्र के प्रति अपने हृदयगत भावों-विचारों को व्यक्त करते हुए कवि ने इस मुक्तक काव्य को हिन्दी अनुवाद सहित लिखा है। इस ग्रन्थ का प्रकाशन भी ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली से सन् 2008 में हुआ है। भारतीय सभ्यता एवं मानवीय मूल्यों की रक्षा की भावना को व्यक्त करने वाला यह एक प्रशंसनीय मुक्तक काव्य है।

3. दुर्जनाचरितम्—

दुष्ट एवं दुर्जन व्यक्तियों के आचरण के विषय में बताकर सामान्य जनों को उनसे दूर रहने का उपदेश देने वाला यह मुक्तक काव्य समाज को सन्मार्ग पर चलने की प्रेरणा देता है। इस काव्य का प्रकाशन भी ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली से सन् 2011 में हुआ है।

4. सज्जनाचरितम्—

सज्जनों के आचरण के विषय में बताने वाला यह एक प्रशंसनीय मुक्तक काव्य है। इसमें सज्जनों के आचरण-व्यवहार का वर्णन सरल शब्दों में किया गया है। सज्जनों के व्यवहार की विशेषताओं का वर्णन करके कवि समाज को सज्जनों के मार्ग पर चलने की प्रेरणा देते हैं। यह ग्रन्थ ईस्टर्न बुक लिंकर्स से सन् 2012 में प्रकाशित है।

4.3.4.4 सन्देश काव्य/दूतकाव्य:-

1. श्रीहनुमद्दूतम्

यह दीक्षित जी द्वारा रचित एक सन्देश काव्य है। यह रामायणीकथा पर आश्रित काव्य है। इसमें श्रीराम की वियोग जन्य व्यथा से दुःखी सीता के पास श्रीराम के दूत के रूप में हनुमान के पहुँचने की घटना का मनमोहक वर्णन किया गया है। इसका प्रकाशन भी सन् 1987 ईसवीं में ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली से हुआ है। मेघदूतम् की तर्ज पर लिखित अपने श्रीहनुमद्दूतम् काव्य पर कवि को 'उत्तर प्रदेश संस्कृत अकादमी' द्वारा 'विशिष्ट पुरस्कार' से सम्मानित भी किया जा चुका है।

4.3.4.5 कथाकाव्य:-

1. गोपालबन्धुः—

संस्कृत गद्यकाव्य की एक प्रसिद्ध विद्या है कथाकाव्य। कवि की 'गोपालबन्धुः' कृति कथाकाव्य की श्रेणी में आती है। इसका प्रकाशन भी ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली से सन् 1988 में किया गया। अपने इस ग्रन्थ पर कविवर दीक्षित जी को उत्तर प्रदेश संस्कृत अकादमी से 'बाणभट्ट पुरस्कार' प्राप्त हुआ है।

2. निर्वेदनिर्झरिणी—

यह भी दीक्षित जी का एक कथाकाव्य हे। इसका प्रकाशन ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली से सन् 2010 में हो चुका है। इसमें कवि ने कथा के नायक विद्याधर के माध्यम से निर्वेद के चैदह निर्झरों को परस्पर सम्बद्ध करके निर्वेद की सुन्दर निर्झरिणी अर्थात् नदी का रूप दे दिया है।

4.3.4.6 संस्कृत नाटक:-

1. मेनकाविश्वामित्रम्—

यह कवि श्री दीक्षित जी द्वारा प्रणीत 8 अंकों वाला संस्कृत नाटक है। यह नाटक एक तरह से अभिज्ञानशाकुन्तलम् का पूर्वभाग है। इसमें अनन्य सुंदरी अप्सरा मेनका तथा ऋषि विश्वामित्र के अलौकिक प्रणय तथा उस प्रेम से उत्पन्न उनकी पुत्री शकुन्तला के जन्म की कथा का अद्भुत वर्णन है। शकुन्तला को माता-पिता के द्वारा क्यों त्याग दिया गया? किस प्रकार वह ऋषि कण्व को प्राप्त हुई? तथा वह उनकी पालिंता पुत्री वनगई-यह सारा वृत्तान्त इस नाटक में वर्णित है। इसका प्रकाशन सन् 1984 ई0 में ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली से हो चुका है।

2. वाल्मीकिसंभवम्—

कवि दीक्षित प्रणीत यह नाटक आदिकवि वाल्मीकि पर आधारित है। आदिकवि के रत्नाकर (जो उनका मूल नाम था) से कवि वाल्मीकि बनने आदि का वृत्तान्त मनमोहक रूप में इसमें वर्णित है। इस नाटक का प्रकाशन भी ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली से हुआ है।

4.3.4.7 गद्यकाव्य:-

श्रीमदप्पयदीक्षित चरितम्: —

दक्षिण भारत के महान साहित्यशास्त्री श्रीमदप्पयदीक्षित के जीवन पर आधारित यह कविश्रेष्ठ दीक्षित जी का प्रथम गद्यकाव्य है। यद्यपि यह गद्यकाव्य बाणभट्ट के हर्षचरितम् से प्रभावित प्रतीत होता है तथापि इसमें वाणभट्ट जैसी अत्यधिक समास बहुलता नहीं है। इसका प्रकाशन सन् 1981 में देववाणी परिषद, वाणी विहार-दिल्ली से हो चुका है।

4.3.4.8 शोधपरक ग्रन्थ:-

1. तिलकम्जरी एक समीक्षात्मक अध्ययन—

यह श्री हरिनाराण दीक्षित जी द्वारा अपनी पी-एच0डी0 की उपाधि के लिए लिखा गया शोध ग्रन्थ है। इसमें संस्कृत साहित्य के महान कथाकाव्य के रचयिता धनपाल की 'तिलकमंजरी' पर प्रशंसनीय समीक्षा प्रस्तुत की गई है। इसका प्रकाशन भारतीय विद्या प्रकाशन, दिल्ली से सन् 1982 ईसवीं में हुआ।

2. संस्कृत साहित्य में राष्ट्रीय भावना—

श्री दीक्षित जी ने अपनी डी0लिट0 उपाधि हेतु 'संस्कृत साहित्य में राष्ट्रीय भावना' इस नाम से शोध ग्रन्थ लिखा। इसमें वेदों से लेकर वर्तमान काल पर्यन्त संस्कृत वाड्.मय में वयक्त राष्ट्रीय भावना को उदाहरण सहित प्रस्तुत किया गया है। यह शोध ग्रन्थ कवि की राष्ट्रीय भावना एवं देशप्रेम को अभिव्यक्त करता है। इस ग्रन्थ का प्रकाशन देववाणी परिषद, वाणी विहार, दिल्ली द्वारा सन् 1983 ईसवीं में हुआ।

3. राष्ट्रीय सूक्ति संग्रह—

इसमें राष्ट्रीय भाषा की 1000 से अधिक सूक्तियों का अनुवाद सहित संग्रह किया गया है। इस ग्रन्थ का प्रकाशन सन् 1987 में अक्षयवट प्रकाशन, बलरामपुर हाउस, इलाहाबाद से किया गया है। इसमें वेदों से लेकर वर्तमान काल तक के ग्रन्थों से देशभक्ति परक सूक्तियों का संग्रह है।

4.3.4.9 छात्रोपयोगी ग्रन्थ:-

1. संस्कृतानुवाद कलिका—

यह कविवर दीक्षित जी की पहली रचना है। छात्रों को सरलतापूर्वक संस्कृत भाषा में विधिवत् अनुवाद सिखाने के लिए उन्होंने इस ग्रन्थ की रचना की। इसका प्रकाशन सन् 1965 ईसवीं में नया प्रेस, रामनगर, उरई जालौन से हुआ है।

2. संस्कृत निबन्ध रश्मि—

इस ग्रन्थ की रचना दीक्षित जी ने इण्टरमीडिएट तथा बी0ए0 के विद्यार्थियों को संस्कृत निबन्ध लेखन की शिक्षा देने के लिए किया। इसमें सरल संस्कृत भाषा में संस्कृत साहित्य के विभिन्न कवियों एवं विषयों से संबन्धित निबन्ध लिखे गए हैं। इसका प्रकाशन सन् 1968 में जनता प्रेस, ज्ञानपुर-वाराणसी से हुआ है।

3. संस्कृत निबन्धावलि—

श्री दीक्षित जी द्वारा लिखित यह ग्रन्थ एम0ए0 तथा आचार्य की उपाधि हेतु अध्ययनरत् विद्यार्थियों के लिए अत्यन्त अपयोगी तथा महत्वपूर्ण है। इसमें प्राचीन विषयों के साथ-साथ अर्वाचीन सभी विषयों (नारी शिक्षा, पर्यावरण, परोपकार, देशभक्ति आदि) पर निबन्ध प्रस्तुत किए गए हैं। इस ग्रन्थ का प्रकाशन सन् 1985 ईसवीं में ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली से हुआ है।

4. शोध लेखावलि—

भारतवर्ष की विभिन्न प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में समय-समय पर प्रकाशित हुए कविवर हरिनारायण दीक्षित के शोध लेखों का एकत्र संग्रह इस ग्रन्थ में प्रस्तुत किया गया है। इसका प्रकाशन सन् 1988 ईसवीं में ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली

5. गद्यकाव्य समीक्षा—

इस ग्रन्थ में दीक्षित जी ने संस्कृत गद्यकाव्य की विशेषओं को विस्तारपूर्वक प्रस्तुत किया है। यह ग्रन्थ शोधकार्यरत् विद्यार्थियों के लिए अत्यन्त उपयोग एवं महत्वपूर्ण है। इसका प्रकाशन भी ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली से सन् 1991 में हुआ है।

6. भारतीय काव्यशास्त्र मीमांसा—

इसमें दीक्षित जी ने भारतवर्ष के विभिन्न विद्वानों के काव्यशास्त्र विषयक लेखों का सम्पादन किया है। इसका प्रकाशन सन् 1995 ईसवीं में ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली से हुआ है।

7. पण्डितराज जगन्नाथ ग्रन्थावाली—

इस ग्रन्थ में दीक्षित जी ने महान साहित्य शास्त्री एवं साहित्यकार पण्डितराज जगन्नाथ की सम्पूर्ण काव्यसम्पदा का तदनुरूप ही हिन्दी अनुवाद पूर्वक सम्पादन किया है। इसका प्रकाशन सन् 1996 ईसवीं में ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली से हुआ है।

8. बुन्देलखण्डी कवि पण्डित राजराम मिश्र काव्य संग्रह—

इस ग्रन्थ में उत्तर प्रदेश के जालौन जिले के रहने वाले केशवदास के वंशज पण्डित राजाराम मिश्र (जो बुन्देलखण्डी कवि हैं) के द्वारा विचरित कविताओं का संकलन एवं सम्पादन श्री हरिनारायण दीक्षित द्वारा किया गया हे। इस ग्रन्थ का प्रकाशन भी ईस्टर्न लिंकर्स, दिल्ली द्वारा सन् 2005 ईसवीं में किया गया।

4.3.4.10 नीति विषयक ग्रन्थ:-

1. उपदेशशती—

भर्तृहरि के नीतिशतकम् से प्रेरणा प्राप्त कर कविवर दीक्षित जी ने नीतिविषयक उपदेशशती ग्रन्थ की रचना की है। इसकी अन्योक्तियाँ कवि के अपने जीवन काल के अनुभवों का साररूप हैं। इसका प्रकाशन सन् 1995 में ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली से किया गया है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि संस्कृत के आधुनिक कवि श्री हरिनारायण दीक्षित ने अब तक विभिन्न विषयों पर आधारित कुल 29 ग्रन्थों की रचना करके संस्कृत वाड्.मय की अभिवृद्धि में अपना अमूल्य योगदान दिया है। 20वीं एवं 21वीं सदी की इस महान विभूति की लेखनी अभी तक विराम को प्राप्त नहीं हुई है। अभी भी ये सतत् ग्रन्थ रचना में संलग्न है। सारस्वत साधना में रत यह साधक प्रशंसनीय है।

4.3.4.11 श्री हरिनारायण दीक्षित के व्यक्तित्व की विशेषताएँ:-

बहुमुखी प्रतिभा के धनी श्री हरिनारायण दीक्षित जी अपने जीवन का अधिकांश समय उत्तराखण्ड की सरोवर नगरी के नाम से विख्यात 'नैनीताल' में बिताया। उनकी अधिकांश सारस्वत साधना नैनीताल में हुई। आज भी सरस्वती के ये साधक संस्कृत की साधना में सतत् लीन है। कागज-कलम और लेखन ही इनके परम मित्र एवं चिर सम्बन्धी है। श्री दीक्षित जी के व्यक्तित्व की कतिपय विशेषताएँ इस प्रकार है—

सुदर्शन वयक्तित्व—

लगभग छः फीट लम्बे श्री दीक्षित जी सुदर्शन व्यक्तित्व के स्वामी हैं। गोरा रंग, उन्नत नासिका, ऊँचा कद और सुपुष्ट देहयष्टि उन्हें आकर्षक बनाती। वे अधिकांशतः पैण्ट कमीज, पैरों में पाँलिश किए हुए लकदक काले जूते, हाथ में घड़ी एवं अँगूठी, आँखों पर काला चैड़े फ्रेम का चश्मा पहनते हैं। सामान्य से कुछ बड़े केश अनके व्यक्तित्व को और भी आकर्षक बना देते है।

सादा जीवन उच्च विचार—

श्री दीक्षित जी 'सादा जीवन उच्च विचार' के पक्षधर हैं। नैनीताल के बड़ा बाजार स्थित उनके छोटे से किराए के आवास में किसी प्रकार के भौतिक सुख साधनों का संचय देखने को नहीं मिलता। अत्यन्त सँकरी घुमावदार सीढ़ीयों पर चढ़कर घर के प्रथम तल पर वे रहते है। उनके घर में सुखसुविधा के साधन भले ही न हो पर एक से एक उत्कृष्ट ग्रन्थ अवश्य देखने को मिल जाएंगे। उनके घर में आप इधर-उधर चारों ओर लेखन-पठन की सामग्री को बिखरा हुआ देखेंगे। उनका खान-पान अत्यन्त सादा शाकाहारी तथा रहन-सहन भी सामान्य है, किन्तु उनकी देववाणी की साधना अपार है। आज लगभग 77 वर्ष की उम्र में भी पुस्तकें उनकी प्रिय साथी है।

अनुशासन प्रिय—

श्री दीक्षित जी ने अपना सारा जीवन अनुशासित रहकर बिताया। अतः अपने विद्यार्थियों से भी वे सदैव यही उम्मीद रखते थे कि वे अनुशासन मे रहे। उनके अनुशासन का ही भय था कि जब वे कुमाऊँ विश्वविद्यालय के डी.एस.बी. परिसर में संस्कृत विभागाध्यक्ष थे तब सभी शोधार्थी नित्य अपनी उपस्थिति ही नहीं देते थे अपितु प्रातः 10 बजे से सायं 4.00 बजे तक अनुसन्धित्सु कक्ष में बैठकर अपने शोध संबन्धी कार्य मे लगे रहते थे। उनका अनुशासन इतना तगड़ा था कि कोई विद्यार्थी या शोधार्थी उनके कक्ष में जाने से पहले दस बार सोचता था।

मृदुभाषी—

श्री दीक्षित जी अत्यन्त मृदुभाषी है। कुपित होने पर भी कभी उन्हें कठोर वचन बोलते नहीं देखा गया। अपने सहयोगी प्राध्यापकों, मित्रों यहाँ तक कि शोधार्थियों और बी.ए. और एम.ए के विद्यार्थियों से भी वे अत्यन्त मृदुता से बात करते थे। यही कारण था कि जहाँ उनकी अनुशासन प्रियता के कारण विद्यार्थी उनसे डरते थे वहीं उनकी मृदुभाषिता के कारण उनका आदर करते थे और उनसे प्रेम भी करते थे। वे हर समय विद्यार्थियों की सहायता करने के लिए तत्पर रहते थे।

संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान—

श्री हरिनारायण दीक्षित जी संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान हैं। वे संस्कृत व्याकरण, सांख्य एवं साहित्य के अच्छे जानकार हैं। उनका रचना संसार उनके अगाध संस्कृत ज्ञान को दर्शाता है। उन्होंने संस्कृत साहित्य की विविध विधाओं यथा महाकाव्य, खण्डकाव्य, मुक्तककाव्य, गद्यकाव्य, कथाकाव्य, चरितकाव्य, नीतिकाव्य, सभी पर अपनी लेखनी का कौशल प्रदर्शित

किया है। 77 वर्ष की उम्र मे आज भी वे सतत् संस्कृत की सेवा को समर्पित। आज भी पुस्तकें उनकी प्रियमित्र और लेखन उनका शौक है।

इतिहास पुराण के ज्ञाता—

श्री हरिनारायण दीक्षित को इतिहास (रामायण महाभारत) तथा पुराणादि का विशद ज्ञान है। इनका भीष्मचरितम् काव्य इनके महाभारत विषयक ज्ञान की परिपक्वता को व्यक्त करता है। श्रीहनुमद्दूतम् काव्य कवि के रामकथविषयक ज्ञान का परिचायक है। इसी प्रकार बाल्मीकिसम्भवम् नाटक भी आदिकवि बाल्मीकि के जीवन-चरित के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डालता है। राधाचरितम् महाकाव्य कवि की नारियों के प्रति संवेदनशीलता को दर्शाता है। श्रीकृष्ण के साथ सतत् उच्चरित नाम वाली होते हुए भी राधा महाभारत में उपेक्षित पात्र है। अतः राधा को अपने महाकाव्य का केन्द्र बन्दु बनाकर सहदयजनों के हृदय में उसके प्रति संवेदना पैदा कर दी है।

4.3.4.12 श्री हरिनारायण दीक्षित को प्राप्त पुरस्कार एवं सम्मान:-

श्री हरिनारायण दीक्षित को अपनी संस्कृत साधना के लिए समय-समय पर विभिन्न प्रतिष्ठित पुरस्कार एवं सम्मान प्राप्त हुए हैं जो संस्कृत जगत में व्याप्त उनकी कीर्ति में चार चाँद लगा देते हैं। उन्हें विभिन्न संस्थानों से प्राप्त सम्मानों एवं पुरस्कारों का विवरण इस प्रकार है-

1. साहित्य अकादमी, दिल्ली —

श्री दीक्षित जी को अपने 'भीष्मचरितम् महाकाव्य' के लिए साहित्य अकादमी दिल्ली द्वारा सन् 1991 का विशेष पुरस्कार प्रदान किया गया।

2. श्री वाणी न्यास, नई दिल्ली —

सन् 2006 में ही कवि को उनके 'भीष्मचरितम् महाकाव्य हेतु 'रामकृष्ण जयदयाल डालमिया श्री वाणी न्यास' द्वारा सम्मानित किया गया।

3. भारतीय भाषा परिषद्, कलकत्ता—

श्री हरिनारायण दीक्षित जी की आरंभ से लेकर सन् 1991 ईसवी तक की सांरस्वत साधना के लिए उन्हें 'भारतीय भाषा परिषद्, कलकत्ता' द्वारा विशिष्ट सम्मान प्रदान किया गया।

4. राष्ट्रपति पुरस्कार—

संस्कृत साहित्य में श्री दीक्षित जी के विशिष्ट योगदान के लिए उन्हें सन् 2008 में भारत के राष्ट्रपति द्वारा पुरस्कृत किया गया

5. लोकसंस्कृति सेवानिधिमण्डपम्—

श्री दीक्षित जी को उनकी संस्कृत सेवा को देखते हुए लोकसंस्कृति सेवानिधिमण्डपम् द्वारा पंडित गौरीशंकर द्विवेदी शंकर अलंकरण देकर पुरस्कृत किया गया।

6. गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार—

सन् 2007 में इस विश्वविद्यालय द्वारा श्री दीक्षित जी को 'विद्यारत्नाकर सारस्वत सम्मान' से सम्मानित किया गया।

अभ्यास प्रश्न

टिप्पणी

(क) भीष्मचरितम् महाकाव्य

(ख) ग्वल्लदेवचरितम्

(ग) दीक्षित जी के छात्रोपयोगी ग्रन्थ

बहुविकल्पीय प्रश्न

नीचे दिये गये प्रश्नों के उत्तर रूप में चार विकल्प दिए गए हैं। जिनमें एक विकल्प सही है। उस सही विकल्प को चुनिए—

1. श्री हरिनारायण दीक्षित मूलतः कहाँ के रहने वाले है-
   (क) हरिद्वार
   (ख) इलाहाबाद
   (ग) बनारस
   (घ) जालौन, उत्तर प्रदेश
2. श्री दीक्षित जी की माता का नाम है-
   (क) शान्ता देवी
   (ख) रूक्मिणी देवी
   (ग) सुदामा देवी
   (घ) नारायणी देवी
3. श्री दीक्षित जी द्वारा लिखित महाकाव्यों की संख्या है-
   (क) दो
   (ख) तीन
   (ग) चार
   (घ) एक
4. दीक्षित जी का नीतिसम्बन्धी ग्रन्थ है-
   (क) उपदेशशती
   (ख) नीतिशतकम्
   (ग) हितोपदेश
   (घ) उपदेशशतकम्
5. दीक्षित जी का पी-एच.डी. उपाधि हेतु लिखा गया तिलकमंजरी एक समीक्षात्मक अध्ययन कब प्रकाशित हुआ-

(क) सन् 1980 ई0 में
(ख) सन् 1982 ई0 में
(ग) सन् 1984 ई0 में
(घ) सन् 1986 ई0 में

6. राष्ट्रीय सूक्ति संग्रह का प्रकाशन कहाँ से हुआ है-
(क) ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली
(ख) चैखम्बा प्रकाशन, वाराणसी
(ग) भारतीय विद्या प्रकाशन, दिल्ली
(घ) अंकित प्रकाशन, हल्द्वानी

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए

1. दीक्षित जी के पिता का नाम ..... था।
2. दीक्षित जी ने उच्च शिक्षा ..... वाराणसी से प्राप्त की।
3. कवि दीक्षित साहित्याचार्य, सांख्ययोगाचार्य के साथ ही ..... भी थे।
4. दीक्षित जी की डी. लिट. (शोधपाधि) का विषय ..... था।
5. गोपालबन्धु एक ..... काव्य है।
6. दीक्षित जी के अधिकांश ग्रन्थ ..... दिल्ली से प्रकाशित हैं।

अतिलघुउत्तरीय प्रश्न

1. श्री हरिनारायण का जन्म कब हुआ ?
2. संस्कृत निबन्धावलि, किय स्तर क विद्यार्थियों हेतु लिखा गया है ?
3. देशोऽयं कुरूते प्रोन्नतिम् किस प्रकार का काव्य है ?
4. कवि के भारतमाता ब्रूते महाकाव्य में कितने सर्ग हैं ?
5. कवि ने कुमाऊँ के किस लोक देवता को आधार बनाकर ग्रन्थ रचना की है ?

सत्य/असत्य बताइए

1. श्री हरिनारायण दीक्षित उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद शहर से थे।
2. बी.ए, एम.ए. तथा पी-एच.डी. की उपाधि दीक्षित जी ने आगरा विश्वविद्यालय से प्राप्त की थी।
3. श्री दीक्षित जी ने रूहेलखण्ड विश्वविद्यालय में अध्यापन कार्य किया
4. राजकीय महाविद्यालय कोटद्वार में भी इन्होंने अध्यापन कार्य किया।
5. दीक्षित जी सन् 1995 ईसवी में कुमाऊँ विश्वविद्यालय से आचार्य एवं अध्यक्ष, संस्कृत विभाग से सेवानितृत्त हुए।

6. दीक्षित जी ने दक्षिण के संस्कृत साहित्यकार रामास्वामी अय्यर के जीवन पर गद्यकाव्य लिखा।

नोट: ऊपर दिए गए प्रश्नों के उत्तर इसी इकाई में दिए जा रहें हैं परन्तु हमारा सुझाव है कि आप स्वमूल्यांकन हेतु उनसे अपने उत्तरों का मिलान करके देखें।

4.4 सारांश:-

उत्तर प्रदेश के मूल निवासी श्री हरिनारायण दीक्षित जी ने सन् 1970 से 1996 ई. (लगभग 26 वर्षो) तक संस्कृत विभाग कुमाऊँ विश्वद्यियालय के डी.एस.बी. परिसर नैनीताल में अपनी सेवाएँ दी। नैनीताल उन्हें कुछ ऐसा भाया कि वे वही के होकर रह गये। सेवानिवृत्ति के 16 वर्ष बाद ये आज भी नैनीताल को छोड़कर नहीं जा पाये। नैनीताल नगरी उनकी साधना स्थली है। यहीं पर उन्होंने अपने श्रेष्ठ संस्कृत ग्रन्थों का प्रणयन किया, जिनके कारण वे आज संस्कृत साहित्य जगत के ख्यातिप्राप्त साहित्यकार हैं। इनका रचना संसार विस्तृत है। अब तक कवि की 29 कृतियाँ देश के विभिन्न प्रतिष्ठित प्रकाशन संस्थानों से प्रकाशित हो चुकी है। अभी भी उनकी लेखनी की यात्रा समाप्त नहीं हुई है। वे निरन्तर संस्कृत की सेवा के प्रति समर्पित हैं। निश्चय ही शीघ्र ही उनका अगला ग्रन्थ भी प्रकाशित होगा और संस्कृत काव्यसम्पदा की अभिवृद्धि करेगा।

4.5 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

(क) टिप्पणी उत्तर देने हेतु इकाई की उपखण्ड संख्या 3.3.4.1 के 1. को देखें।

(ख) उत्तर देने हेतु इकाई की उपखण्ड संख्या 3.3.4.2 के 2. को देखें।

(ग) उत्तर हेतु इकाई की उपखण्ड संख्या 3.3.4.9 के 3. को देखें।

बहुविकल्पीय

1. घ
2. ग
3. ग
4. क
5. ख
6. क

रिक्त स्थान पूर्ति

1. रघुवीर सहाय दीक्षित
2. वाराणसेय विश्वविद्यालय
3. व्याकरणाचार्य
4. संस्कृत साहित्य में राष्ट्रिय भावना

5. कथा
6. इस्टर्न बुक लिंकर्स

अतिलघुत्तरीय

1. 13 जनवरी सन् 1936 ईसवी में
2. एम.ए. तथा आचार्य स्तर के
3. मुक्तक काव्य
4. 22
5. गोलू देवता
6. संस्कृतानुवादकालिका

सत्य/असत्य

1. असत्य
2. सत्य
3. असत्य
4. असत्य
5. सत्य
6. असत्य

4.6 सन्दर्भ ग्रन्थ/ सहायक सामग्री:-

1. संस्कृत साहित्य में राष्ट्रीय भावना डा. हरिनारायण दीक्षित, ईस्टर्न बुक लिंकर्स दिल्ली।
2. मेनकाविश्वामित्रम् डा. हरिनारायण दीक्षित, ईस्टर्न बुक लिंकर्स दिल्ली।
3. डा. हरिनारायण दीक्षित प्रणीत भीष्मचरितम् महाकाव्य का समीक्षात्मक अध्ययन, हस्तलिखित शोध प्रबन्ध, शोधार्थी पद्मा देवी, हेमवती नन्दन बहुगुणा गढ़वाल विश्व विद्यालय की पी-एच.डी. उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध प्रबन्ध।

4.7 निबन्धात्मक प्रश्न:-

1. श्री हरिनारायण दीक्षित के जीवन-चरित तथा उनके व्यक्तित्व की विशेषताओं पर प्रकाश डालिये।
2. श्री हरिनारायण दीक्षित के रचना संसार पर प्रकाश डालिए।
3. श्री दीक्षित जी के द्वारा रचित महाकाव्य, खण्डकाव्य एवं मुक्तक काव्यों का परिचय दीजिये।

तृतीय सेमेस्टर/SEMESTER-III
खण्ड–द्वितीय
उत्तराखण्ड के संस्कृत साहित्यकार

इकाई 1 - डॉ. अशोक कुमार डबराल का व्यक्तित्व एवं कृत्तित्व

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना

1.2. उद्देश्य

1.3 डॉ० अशोक कुमार डबराल का व्यक्तित्व एवं कृत्तित्व

- 1.3.1 जन्म परिचय
- 1.3.2 जन्म-स्थल एवं शिक्षा-दीक्षा
- 1.3.3 कार्य क्षेत्र एवं व्यवसाय
- 1.3.4 साहित्यक कार्य (कृतित्व)
- 1.3.5 काव्य ग्रन्थ (महाकाव्यों का परिचय)

1.4 सारांश

1.5 पारिभाषिक शब्दावली

1.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ/सहायक सामग्री

1.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना:-

उत्तराखण्ड के संस्कृत साहित्यकार नामक पाठ्यक्रम के द्वितीय खण्ड की यह प्रथम इकाई है। इससे पूर्व की इकाई में आप जान चुके हैं कि उत्तराखण्ड में संस्कृत साहित्य की उत्कृष्ट परम्परा प्राचीन काल से ही सतत् चली आ रही है। प्राचीन काल में संस्कृत यहाँ की राजभाषा थी जिसके प्रमाण प्राप्त अभिलेखों ताम्रपत्रों तथा उपलब्ध संस्कृत ग्रन्थों के रूप में प्राप्त होते हैं।

इस इकाई में आप डॉ०अशोक कुमार डबराल का व्यक्तित्व एवं कृत्तित्व आदि के बारे में विस्तार से जानेंगे। इसके साथ ही डॉ० डबराल की रचनाओं तथा उनके अन्य कार्यों के बारे में, उनकी आर्थिक स्थिति उनके स्वभाव चरित्र वेशभूषा आदि से भी भलीभाँति अवगत हो सकेंगे।

1.2 उद्देश्य

- प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप बता सकेंगे गढ़वाल में 20 वीं शताब्दी के संस्कृत के महान साहित्यकार डॉ० अशोक कुमार डबराल कौन थे ? उनके जन्मस्थल के बारे में आप अच्छी तरह बता पाएंगे।
- आप बता पाएंगे कि कवि की शिक्षा-दीक्षा, कार्यक्षेत्र कैसा था।
- समझा पाएंगे कि कि डॉ० डबराल साहित्यिक कार्य क्षेत्र कितना विस्तृत था।
- डॉ०अशोक कुमार डबराल की प्रकाशित एवं अप्रकाशित रचनाओं के बारे में भलीभाँति जानकारी दे सकेंगे।
- भलीभाँति बता सकेंगे कि कवि डॉ० अशोक कुमार डबराल को अपनी विद्वता के कारण किस-किस तरह के सम्मान एवं उपाधियाँ प्राप्त हुई।

1.3 डॉ० अशोक कुमार डबराल का व्यक्तित्व एवं कृत्तित्व

1.3.1 डॉ० अशोक कुमार डबराल का जन्म—

डॉ० अशोक कुमार डबराल का जन्म 14 अप्रैल सन् 1943 को वैशाखी के पावन पर्व के दिन ऐसे परिवार में हुआ, जिनकी वंश परम्परा देववाणी (संस्कृत भाषा) की साधना तल्लीन रहा। इनके पितातह सिद्धकवि प० सदानन्द थे। इनके चार पुत्र थे- धर्मानन्द, वाणीविलास, हीरामणि और विद्यादत्त। कनिष्ठ पुत्र विद्यादत्त के चार पुत्र हुए— अशोक कुमार, सुधाकर, मेघाकर और विभाकर। इस वंश पर विद्यादत्त सरस्वती की अनन्य कृपा रही है। उसी का प्रतिफल है कि आचार्य विद्यादत्त संस्कृत साहित्य के मूर्द्धन्य विद्वान्, दार्शनिक, कवि और शिक्षक थे। आशीर्वाद के फलस्वरूप डॉ० अशोक कुमार डबराल आज संस्कृत के मूर्द्धन्य कवियों, लेखकों में अग्रगण्य हैं। डॉ० डबराल हिन्दी कविता एवं लेखन में भी समान गति रखते है।

1.3.2 डॉ० डबराल का जन्म-स्थल एवं शिक्षा-दीक्षा—

डॉ० डबराल का जन्म ग्राम तिमली, पट्टी-डबरालस्यूं, जनपद-पौड़ी गढ़वाल में हुआ। प्रारम्भिक शिक्षा, प्राइमरी स्कूल देवीखेत एवं आदर्श संस्कृत पाठशाला तिमली में प्राप्त की। इनके पिता स्वयं इनके गुरु भी रहे। 1956 से 1960 के मध्य उत्तर मध्यमा तक शिक्षा ग्रहण कर, काशी जाकर वाराणसेय संस्कृत विद्यालय में प्रवेश पाकर 1967 में साहित्य-शास्त्री अंग्रेजी सहित उत्तीर्ण की एवं साहित्यरत्न परीक्षा। सन् 1968 में आगरा वि०वि० आगरा से एम०ए० (संस्कृत), सन् 1974 में मेरठ वि०वि० मेरठ से एम०ए० हिन्दी और सन् 1999 में चौधरी चरणसिंह वि०वि० मेरठ से पी-एच०डी० की उपाधि प्राप्त की। शोधकार्य हिन्दी में किया, जिसका विषय था- "नारायण स्वामी जीवन और साहित्य"।

1.3.3 कार्य क्षेत्र एवं व्यवसाय—

सन् 1962 से सन् 2001 तक अध्ययन-अध्यापन में जीवन व्यतीत हुआ। इसी मध्य काव्य साधना एवं लेखन कार्य में भी पूर्ण मनोयोग के साथ मां शारदा के कीर्तन में तल्लीन रहे।

1.3.4 साहित्यक कार्य (कृतित्व)—

अशोक डबराल की कवित्व शक्ति का उद्बोधन यद्यपि सन् 1960 से हो गया था, किन्तु काशी में जाकर- डॉ० शम्भुनाथ सिंह, पं० द्विजेन्द्र नाथ मिश्र, पं० वटुकनाथ शास्त्री खिस्ते, पं० मुकुन्द शास्त्री खिस्ते प्रभृति अप्रतिम प्रतिभा सम्पन्न गुरुओं के सान्निध्य में यथार्थता में पहुँच चुकी थी। उसी का प्रतिफल है, कि संस्कृत-काव्य धारा की प्राचीनता के साथ नवीनता को भी सामयिक महत्त्व दिया गया है। आपकी रचनायें हैं-

1. देवतात्मा हिमालय-संस्कृत महाकाव्य-प्रकाशित-2004।
2. धुक्षते हा धरित्री-संस्कृत महाकाव्य-प्रकाशित-2004।
3. चन्द्रसिंहस्य गर्जितम्-संस्कृत लघुनाटक-संस्कृत मञ्जरी में प्रकाशित
4. दायाद्यम्-संस्कृत लघुनाटक-संस्कृत मञ्जरी में प्रकाशित
5. प्रतिज्ञानम्-संस्कृत लघुनाटक - संस्कृत मञ्जरी में प्रकाशित

इनके अतिरिक्त संस्कृत-शोधपत्र एवं हिन्दी में अप्रकाशित ग्रन्थ—

1. अथ इति (हिन्दी-महाकाव्य)
2. लिप्टस (हिन्दी कहानी संग्रह)
३. मधुमास (हिन्दी कविता संग्रह)
4. एक हमाम में सब नंगे (हिन्दी ललित निबन्ध)
5. चलते-चलते (आत्मकथा) आदि लेखन कार्य हुआ है। सम्प्रति-काव्य साधना एवं योग साधना में संलग्न हैं।

1.3.5 काव्य ग्रन्थ—

डॉ० डबराल के दो प्रमुख महाकाव्य हैं। जिनका परिचय यहां दिया जा रहा है।

1. देवतात्मा-हिमालय (संस्कृत महाकाव्य)—

"देवतात्मा हिमालय" के प्रारम्भ में हिमालय की गरिमा का वैदिक एवं पौराणिक प्रमाणों के साथ कवि ने व्यापक वर्णन किया है। काव्य के नामकरण से ही विदित होता है, कि काव्य में देवतात्मा हिमालय के महत्त्व को व्यापकता दी है। वस्तुतः यह काव्य किसी अन्य का उल्लेख ही नहीं करता, अपितु एकमात्र मानव की आन्तरिक विविध भावनाओं के द्वारा हिमालय की गौरव-गाथा को प्रतिविम्बित करता है। 11 (ग्यारह) सर्गों में विभक्त काव्य में 211 श्लोक मात्र हैं, जो कलेवर की दृष्टि से लघुतम होता हुआ साहित्यिक दृष्टि से नवीनता का द्योतक है।

काव्य का प्रारम्भ परम्परागत काव्य-शास्त्रीय पद्धति को सामयिक-भावना के अनुरूप ढालकर कवि ने काव्य लिखने से पूर्व उस भावना का परिचय पूछा, जिसके कारण काव्य लिखने की उत्कण्ठा उत्पन्न हुई और प्रार्थना की गई, कि स्थावर-जंगम सृष्टि से सुसज्जित अथवा संयुक्त प्रकृति वाले हिमालय की शोभा का वर्णन करो। "प्रेरणा" के माध्यम से पूर्वजों की कीर्तिमाला को गूंथते हुए, हिमालय गुणवर्णन का निश्चय कर "प्रेरणा" के अन्तिम पद्य में हिमालय की वन्दना कर शास्त्रीय-परम्परा का निर्वाह किया गया है। "वन्दना" प्रकरण के अवसर पर विविध नामों से अलंकृत दुर्गा जी का वन्दन कर शिवजी की वन्दना के अनन्तर हिमालय को ही अपना सर्वस्व घोषित करते हैं कवि। अनुकूल परिस्थितियों की इच्छा के साथ मंगलमय वातावरण 'बन्दन' को साहित्य जगत् में नवीनता प्रदान की गई है।

महाकाव्य का कथानक—

काव्य ग्यारह सर्गों में विभक्त होते हुए भी छोटे-छोटे स्वरूपों में विषय की गरिमा को व्यक्त करता है। नवां सर्ग सबसे छोटा मात्र 8 पद्यों का है और बड़ा आठवां सर्ग 34 श्लोकों का है। सर्गों को क्रमशः भावना, प्रेरणा, वेदना, विचारणा, कल्पना, करुणा, चेतना, कीर्तना, रोचना, पर्यावरण कारणा और कामना की भावना से विभक्त किया है।

देवतात्मा-हिमालय महाकाव्य का शास्त्रीय-दृष्टिकोण एवं महत्त्व—

काव्य के नामकरण से ही स्पष्ट है कि कवि ने "देवतात्मा हिमालय" नामक काव्य के अन्तर्गत हिमालय के महत्त्व, गरिमा अलौकिकता, शिवरूपता, प्राकृतिक सौन्दर्यता प्रभृति विषयों को महत्त्व दिया है। यह तो शिव-स्वरूप है। धरणीधर है। श्रीकृष्ण तो गिरिधर थे, किन्तु पौराणिक दृष्टि से यह तो उनसे भी अधिक विशेषता रखता है। हिमालय के प्राकृतिक सौन्दर्य का स्वाभाविक उल्लेख है। ग्यारह सर्गों में विभक्त काव्य भावना, प्रेरणा, वेदना, प्रभृति मनोभावों पर आधृत है।

महाकाव्य का नायक—

काव्य-नायक हिमालय है, जो धीर-गम्भीर है। हिमालय में देवत्व का आरोप कर, कहा गया है-अनाथों के नाथ, अनाश्रितों के आश्रय हे हिमालय! तुम निःसन्देह महान् हो। तुम शिव-पार्वती के आश्रयी हो। कालजयी हो। भूधर और भूपति यही है। यह स्थावर-जंगम का नियामक

है। तपस्वियों की तपः स्थली है। काव्य को विविध उपभागों, उठोक्षाओं के आधार मानकर हिमालय-गुनगान का एक मात्र आधार बनाया गया है। जिसमें काव्य सौन्दर्य का सर्वत्र समावेश है। वह तो देवताओं के भी देवता हैं-

गणेश गौरी शिववन्दितो गुरुः कुमार भृङ्गी प्रमथैश्च सेवितः।
विलासभूरप्सरसां दिवौकसां स देवदेवोऽस्ति नगो हिमालयः॥ देवतात्मा-हिमालय 4/1

महाकाव्य का चरित्र-चित्रण—

डॉ० डबराल ने हिमालय के चरित्र को धीरोदात्त गुणों का समन्वयक माना है। हिमालय का चरित्र अद्भुत एवं रोमाञ्चकारी है। हिमालय का गौरव तो उसकी भव्यता से है। वह भारत का दिव्य स्वरूप है। सिद्धिदायक है। शिव का लिङ्गात्मक स्वरूप है। हिमालय असामान्य नायक है। नायक को करुणामय स्वरूप के कारण मानों जड़त्व प्राप्त हुआ।

कथं मदीया जननी जराऽऽतुरा, मया बिना नेष्यति शेषजीवनम्।
विलायमाकर्ण्य नवोद्या कृतं जडत्वभावं गतवान् हिमालयः॥ देवतात्मा-हिमालय 6/9

मेरी बूढ़ी माता मेरे बिना सहायक के अभाव में जीवन एकाकी कैसे व्यतीत करेगी? ऐसी सोचती हुई ससुराल जाती हुई दुलहन के रोदनयुक्त वचनों को सुनकर दयावान् हिमालय भी जड़ हो गया है।

महाकाव्य में रस-छन्द-अलंकार योजना—

काव्य में रस, छन्द, अलंकार योजना प्रसंगानुसार हुई है। शृंगार, करुण, शान्त, अद्भुत, वीर रसों का प्रसंगानुसार उपयोग है। छन्दों में वर्णिक छन्दों को विशेष महत्त्व दिया है। अलंकारों में अनुप्रास, यमक, श्लेष, वक्रोक्ति, उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, प्रतीप, अतिशयोक्ति आदि अलंकारों का समायोजन वर्ण्य विषय के अनुरूप स्वाभाविकता लिये हुए है। उत्प्रेक्षा, उपमा, अतिशयोक्ति, वक्रोक्ति कवि का प्रिय अलंकार प्रतीत होते हैं।

महाकाव्य का प्रकृति-चित्रण—

हिमालय तो प्रकृतिमय है। हिमालय का जो चित्रण है, उसमें प्रकृतिनटी का नर्तन हो रहा है। जो स्वच्छता, विशालता, महानता प्रकृतिक सम्पदा का प्रतीक बनी हुई है। प्रकृति के दर्शन हेतु मानों सूर्य-चन्द्र दिन-रात हिमालय के चारों ओर भ्रमण में तल्लीन हैं। वर्षाकालीन बादल हों, या नदियों के कल-कल करती हुई ध्वनि हो, या हिमाच्छादित विविध शिखर हों, या प्रातः सायंकालीन रक्तवर्ण की सूर्यकिरणों से आच्छादित वर्फ की चट्टाने हों, सब प्रकृतिमय हैं। इन्हें काव्य में चित्रण करने में कवि का उदार हृदय स्पष्ट लक्षित है। वस्तुतः काव्य प्रकृक्तिमय ही है।

महाकाव्य की वर्णन-शैली—

काव्यशास्त्रियों से परिभाषित काव्य परम्परा से हटकर "काव्य" को नये ढंग से प्रस्तुत किया है। यह एक ओर तो महाकाव्य को स्पर्श करता है और दूसरी ओर युगीन सन्दभों को। सर्गों के नाम विषय वस्तु के अनुरूप रखा है। इसका नायक धीर-गम्भीर उदात्त है। यह रस, व्यंग, ध्वनि,

प्रतीक, विम्ब, उपमान, अलंकार आदि से पुष्ट होने के कारण ही नहीं, चरित्र-चित्रण, देश-काल का वर्णन, प्रकृत्तिचित्रण, स्वभाव वर्णन, धर्म, नीति दर्शन आदि महाकाव्य जैसी उदारता से भी परिपूर्ण है।" जैसा कि महाकवि की स्वयं उद्घोषणा है कि वर्णन-शैली में प्राचीनता के साथ नवीनता को भी महत्त्व दिया गया है। शैली प्रसाद एवं माधुर्य गुण बहुला है। भाषा में प्रवाह है। सामयिक भावनाओं को महत्त्व दिया है। रस-छन्द-अलंकार विषयानुवर्ती हैं। सूक्तियों का रोचक एवं आकर्षक प्रयोग हुआ है।

सर्गों का कथानक—

प्रथम-सर्ग का कथानक —

यह सर्ग 26 श्लोकों में निबद्ध है। "भावना" इस सर्ग का प्रारम्भ भावना से पूछ रहे हैं कवि कि तुम कौन हो ? क्या दमित मन में उमड़ने वाली उत्कट अभिलाषा, या विषयी जन के मन की अभिलाषा या स्त्रियों के हृदय की हर्षोल्लास की लहर अथवा मन में छुपी हुई रोमांच भावना हो, या पथिकों के हृदय की लालसा हो। भावना के विविध स्वरूपों का चित्रण है। अन्त में हिमालय की स्तुति एवं उसका गुणगान का आह्वान है। ऐसी भावना को कवि अपने हृदय में निवास करने का आह्वान करते है।

द्वितीय-सर्ग का कथानक —

यह सर्ग 12 श्लोकों में निबद्ध है। "प्रेरणा" हिमालय एवं पार्वती द्वारा प्रेषित पवन ने कवि से देववाणी में कविता करने की प्रेरणा दी। जिसमें पिता विद्यादत्त और पितामह सदानन्द, प्रपितामह दामोदर की कीर्तिलता को आगे बढ़ाने का संकेत है। हिमालय के पवन ने कहा, हे कवि तुम हिमालय की गरिमा का वर्णन करो। हिमालय से गुणग्राही कवि रचना करने की प्रेरणा लेते हैं।

तृतीय-सर्ग का कथानक —

यह सर्ग 17 श्लोकों में निबद्ध है। "वन्दना" - विविध नामों से सुशोभित दुर्गा जी का वन्दन करता हुआ कवि शिवजी की वन्दना करते हैं। देवतात्मा हिमालय की शिवाज्ञा को प्रणाम करते हुए हिमालय के प्रति अपनी अटूट आस्था व्यक्त करते हैं कवि, क्योंकि कवि का घर और मन महोत्सव भी हिमालय है। हिमालयस्थ प्रकृति के विविध स्वरूप से मंगल और अनुकूल की कामना है कवि को। अपने माता-पिता का स्मरण करते हैं। काव्य-रचना की सूचना पूर्वजों को देकर, उनसे कवि तृप्ति की कामना करते हैं।

चतुर्थ-सर्ग का कथानक —

यह सर्ग 20 श्लोकों में निबद्ध है। 'विचारणा' में हिमालय को देवताओं का देवता कहा है। जो ऐसा नहीं मानते, वे तो अन्ध विश्वास में डूबे हैं। वास्तव में हिमालय ही वास्तविक शिवालय है। प्रलयकाल में तो "देवतात्मा हिमालय" ही शेष रह जायेगा। अतिपुण्य कर्मों के फलस्वरूप स्वर्ग की प्राप्ति तो हो जाती है, किन्तु पुण्यक्षीण होने पर फिर यहीं आना पड़ता है,

किन्तु भूलोक का स्वर्ग हिमालय का आनन्द तो बन्धु-बान्धवों के साथ यहीं लिया जा सकता है। हिमालय में यदि हिम नहीं होता, तो न नदियां, न प्रयाग, न योग, न यज्ञ, न तीर्थयात्री, न कथायें, न यह भारत भूमि शस्य-श्यामला, सुजला होती, हिम पर्वत तो मत्स्याकार है। मेरी उस देवतात्मा हिमालय की गौरवगाथा का वर्णन करने में कल्पना कैसे समर्थ हो सकती है?

पञ्चम-सर्ग का कथानक —

इस सर्ग में 21 श्लोक हैं। कल्पना हिमालय के अद्भुत सौन्दर्य के कारण शिव ने वहाँ अपना निवास बनाया। विविध उपमानों से हिमालय के सौन्दर्य का वर्णन है। भारतवर्ष श्रेष्ठ, पूज्य और ज्ञानगुरु है। मानो हिमालय को इसलिये भारत वर्ष में स्थापित किया है विधि ने। हिमालय तो ताप भंजक है। महाकवि कालिदास धन्य है, जिसने हिमालय को पृथिवी का मानदण्ड से सम्मानित किया। हिमालय के ऊपर स्थित बालचन्द्रमा की प्रतीति बालसूर्यवत् हो रही है। आश्चर्य है हिमालय करुणामय हो गया है।

षष्ठ-सर्ग का कथानक —

इसमें 16 श्लोक हैं। "करुणा' - गुणवान् हिमालय ने गरिमा के कारण मौनव्रत धारण कर लिया है। इन्द्र से क्षत-विक्षत होने पर भी शान्त है। हिमालय का दर्शन ही जीवन की सफलता है। विकृत वेष में शिव स्वरूप को देखकर मानों झरनों के बहाने रो रहा हो। हिमालय को नग और जड़ कहना, उसकी कीर्ति को दूषित करना है, वह तो ऐसा नहीं है। हिमालय की करुणा का मापन वर्षाकालीन बादलों की ठंडी-ठंडी बून्दों में किया जा सकता है। शिव का लिङ्गात्मक स्वरूप ही हिमालय है।

सप्तम-सर्ग का कथानक —

इस सर्ग में 24 श्लोक हैं। "चेतना" - पर्वतराज के पक्षी भी ग्रीष्मकालीन फलों के पकने की सूचना देने में सक्षम हैं। पृथिवी और पर्वतों के परस्पर विवाद में ये एक-दूसरे के आधार और आधेय बन गये हैं। वर्षा ऋतु के सफेद और काले बादल मानों हिमालय की दाढ़ी हैं। प्रातःकालीन सूर्य की रक्त-किरणों से आवृत्त शिखरों की बर्फ ने हिमालय की जटा का रूप धारण कर लिया है। हिमालय की शोभा का वर्णन करते हुए कवि का कथन है कि सायंकालीन सूर्य किरणों के कारण मानों हिमालय रक्त चन्दन का टीका लगाकर तपस्वी बन गया है। भगीरथ की गंगा ने तो मात्र सगर-पुत्रों का उद्धार किया, किन्तु हिमालय से निःसृत गंगा तो सबका कल्याण करती है। हिमालय के कारण ही बादल वर्षा कर पाते हैं।

अष्टम-सर्ग का कथानक —

यह सर्ग 34 श्लोकों का है। "कीर्तना" - हिमालय की स्थिरता को उसकी गम्भीरता को माना जा रहा है। वैदिक विराट पुरुष की कल्पना, सम्भवतः ऋषियों द्वारा हिमालय की कोटिशः घाटियों और पादप्रदेशों के अवलोकन से की होगी। हिम-निर्मित शिला ब्रह्मा की मानों संसार को देखने का आसन है। शिव तो मुक्तिदाता हैं, वे मुक्ति जिज्ञासुओं की प्रतीक्षा में हैं। हिमालय की

अप्रतिम-स्वरूपता के कारण शिवजी ने वहाँ अपना शिवालय बनाया हुआ है। कामदेव के भस्म होने के कारण मानों प्रतिशोध की भावना से वहाँ रति और वसन्त रहते हैं। हिमालयस्थ पर्वतीय नारियां अपने गुणों के कारण, पूज्य हैं। उनका जीवन सादगी का प्रतीक है। पाण्डवों ने हिमालय में ही मुक्ति पाई। सन्यासियों का मुक्ति-स्थल कैलाश ही है।

नवम-सर्ग का कथानक —

नवम सर्ग 8 श्लोकों का है। "रोचना" - भारत-वर्ष की सेवा में हिमालयीय सर्वविध नर-नारियों का योगदान प्रेरणा का प्रतीक है। श्रीकृष्ण ने गोवर्द्धन पर्वत धारण किया, श्रीकृष्ण को पृथिवी ने धारण किया और पृथिवी को हिमालय ने धारण किया। वे अच्युत अच्युत नहीं हुए, सम्भवतया हिमालय ही अच्युत हुआ। हिमालय ही सबका धारक एवं सहायक है। फिर भी लोक कृष्ण को प्रणाम करते हैं, हिमालय को नहीं।

दशम-सर्ग का कथानक —

इस सर्ग में 15 श्लोक हैं। "पर्यावरण-कारणा" पर्वतीयों के पाले गए पेड़ काट दिये। हिमालय के सारे वनबान्धव प्राणिगण मारे गये। जंगली प्राणियों का वंश मिटाया जा रहा है। वनों के अंधाधुन्ध दोहन से हिमालय लूट लिया है। वन बिना जल सम्भव नहीं और जल के बिना जीवन नहीं। वनाग्नि से हिमालय नग्न हो गया है। पर्वतारोहियों से पर्यावरण दूषित हो रहा है। हिमालय पर्वत की वर्तमान दशा से कवि का मन दुःखी है। पर्यावरण की रक्षा करना हम-सब का कर्त्तव्य है।

एकादश-सर्ग का कथानक —

इसमें 14 श्लोक हैं। "कामना" की जा रही है, कि पार्वती ने जैसे सुदर्शन पति "शिव" को प्राप्त किया, उसी तरह अविवाहित पुत्रियाँ सुन्दर पति प्राप्त कर सुखी रहें। स्वामी कार्तिकेय और गणेश जी समस्त बच्चों की रक्षा करें। शिव-पार्वती की तरह गृहस्थी सन्तति नियमन कर सुखी रहें। हिमालय में पहुँचकर मुमुक्षु मुक्ति को प्राप्त करें। अनाचारी राष्ट्र से निष्कासित हों। हिमालय अजर-अमर रहकर हमारी रक्षा करे। कवि का कथन हैं कि मेरा काव्य, जो हिमालय पर लिखा गया है, सबके लिए कल्याणकारी एवं मोक्षदायक हो। यह सर्वविध सहायक बने। हिमालय में स्थित नृत्य-मग्न सदा-शिव संसार की रक्षा करे।

2. धुक्षते हा धरित्री–

महाकाव्य का परिचय–

प्रकृति अथवा धरित्री का समग्र दोहन और प्रयोग, प्राचीन भारतीय परम्पराओं पर कुठाराघात, सामाजिक सम्बन्धों का परित्याग, विकृत संस्कृतियों का फलना-फूलना, कौटम्बीय सम्बन्धों का बलिदान, माता-पिता के प्रति सन्तान की उपेक्षा, श्रुति-स्मृति की विचारधारा को साम्प्रदायिक-कारागार की सीकों में वन्द करना, मानवता पर दानवता की विजय से संत्रस्त धरित्री आज इन असह्य वेदनाओं से पीड़ित है। महाकवि ने उस वेदना को उसी धरती माता के

मुख से सुनने और समझने का प्रयास "धुक्षते हा धरित्री" काव्य में किया है।" विषम वस्तु के अन्तर्गत यह भूमि, इसके निवासी जन और उनकी संस्कृति के साथ-साथ समस्त जड़-जङ्गम भी समष्टि रूप से ग्रहण हैं। इसी सत्य को पौराणिक कथा-रूपक अथवा बिम्ब-विधान से प्रकट करते हुए प्रतीक के द्वारा किया है। । कवि डॉ० अशोक कुमार डबराल द्वारा आधुनिक परिवेशीक है इस काव्य में ग्यारह सर्ग एवं 375 श्लोक हैं। काव्य का हिन्दी अनुवाद, डॉ० डबराल की विदुषी धर्मपत्नी श्रीमती सुशीला डबराल ने किया है।

काव्य का नामकरण यथार्थता पर आधारित है, क्योंकि समग्र काव्य में "धरित्री" के हृदय की वेदना कहीं उद्वेलित हो जाती हैं और कहीं अन्धाधुन्ध दोहन, प्रदूषण, हत्या, अपहरण, युद्ध, रक्तपात, स्वार्थ, क्रोध, शोषण, आतङ्कवाद, भ्रष्टाचार, व्यभिचार से त्रस्त होकर प्रस्फुटित हो जाती है। अतः "घुक्षते हा धरित्री" सार्थक नामकरण हैं। पृथिवी इस महाकाव्य में शोषित जड़-जङ्गम की प्रतीक बनकर गोरूप में प्रकट हुई है।

काव्य का प्रारम्भ "दिङ्-मोहः" प्रतीक अन्तर्गत भारतमाता की पवित्र माटी को "प्रणाम" कर, शास्त्रीय परम्परा के अनुरूप हुआ है। नमस्कारात्मक मङ्गलाचरण हैं।

दिव्यां विश्वम्भरां देवीं धरित्री सुप्रियां वराम्।
मातरं सर्वलोकानां मृत्स्नामेतां नमाम्यहम्॥1-1

महाकाव्य का शास्त्रीय-दृष्टिकोण एवं महत्त्व—

काव्य का उद्देश्य धरती के कुशल-क्षेम के लिए पक्षान्तर में समस्त जड़-जङ्गम की अशिव से रक्षा का है। धरती के साथ मानवमात्र के आहत हृदय का शुभ कर्मों के माध्यम से पीड़ा मुक्त करना इसका प्रयोजन है। जन-जन के मन में "माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः" अर्थात् पृथिवी हमारी माता है और में पृथिवी का पुत्र हूँ। यही कृतज्ञता प्रत्येक जन के हृदय में रचते-बसने वाली देश भक्ति है। जन्म-भूमि, भूमि के जन और जन की संस्कृति के कुशल-क्षेम के बिना राष्ट्र और राष्ट्रीयता के सम्बन्ध में चर्चा करना निरर्थक है। महाकवि डॉ० डबराल का इस तरफ का प्रयोग आधुनिकता की विसंगतियों के प्रति जहाँ एक ओर जनता का ध्यान आकर्षित करना है, वहीं परम्परागत भारतीय वैदिक, पौराणिक संस्कृति को सुरक्षित रखने का अनुरोध जन-जन के प्रति है।

संस्कृति का सम्बन्ध धर्म के समस्त एवं व्यापक रूप से है। काव्य को प्रतीक रूप में आगे बढ़ाया गया है। धरित्री की वेदना भारतीय समाज की वह वेदना है, जिसके लिये स्वतन्त्रता के लिये असंख्य स्वतन्त्रता सेनानियों ने असह्य वेदनाओं, ताडनाओं को सहन करते हुए अपना सहर्ष बलिदान किया। आज का जन समुदाय स्वार्थलोलुप हो गया। उससे मुक्ति की कामना ब्रह्मा जी के माध्यम से भगवान् विष्णु से की जाती है। अन्त में समस्त कामनाओं का उपहार प्राप्त कराना कवि की आशावादी दृष्टिकोण की प्रतीति होती है। कहीं काकूक्ति, वक्रोति, व्यङ्कयोक्ति से विषय को सम्पादित किया है, तो कहीं स्पष्ट संकेत देकर अपनी निर्भीक्ता दिखाते हुए समाज

का यथार्थ स्वरूप प्रकट किया है। "साहित्य समाज का दर्पण होता है।" इस उक्ति के अनुरूप सामाजिक-तथ्य को व्यक्त करने में काव्य सफल हुआ, जो अति महत्त्वपूर्ण है।

भाषा, भाव, रस, छन्द, अलंकार आदि की दृष्टि से काव्य महाकाव्य के लक्षणान्वित हैं। साहित्यकार युगीन चेतना का संदेशवाहक होता है। वह युगबोध और आत्म स्पन्दन का गहन अन्तर्मिश्रण होता है। केवल विषमता, कुरूपता एवं अशिव को ही वह प्रकट नहीं करता, अपितु सत्यं, शिवं, सुन्दरं की स्थापना भी करता है। प्रस्तुत काव्य इसका ज्वलन्त उदाहरण है। धर्म की बुझती चिंगारी पर जमी अन्धविश्वासों की राख हटाकर उसे प्रज्वलित करने का सार्थक प्रयास हुआ है। काव्य का कलेवर वर्तमान कालीन समस्याओं से आछन्न है। युगवाणी और युगचेतना स्पन्दित हुई है। संस्कृत साहित्य को नवीनता की ओर चलने-चलाने का प्रयास सार्थक है।

महाकाव्य का चरित्र-चित्रण—

डॉ० डबराल ने धरित्री के चरित्र को उदान्त गुणों से युक्त चित्रित किया है। धरित्री तो मां है। मां असह्य दुर्गुणों को सहन करने में सक्षम है। काव्य में मानव-चेतना साध्य है। धरित्री के माध्यम से विराट-पुरुष की उपलब्धि की है। सम्पूर्ण जड़-जङ्गम ही उस विराट् पुरुष का शरीर है। सम्पूर्ण जगत् में प्रत्यक्ष-परोक्ष-रूप में विराट है। वहीं ब्रहमा है, वही विष्णु है। घुक्षते हा धरित्री की सूक्ष्म-चेतना इससे से अनुप्राणित होकर समस्त का कल्याण करना इसका लक्ष्य है। दैवीय शक्तियों का प्रतीक धरित्री है। उसके चरित्र में सर्वत्र उदारता, करुणा भरी हुई है। समष्टि रूप से विश्व का कल्याण चाहती है।

महाकाव्य में रस-छन्द-अलंकार योजना—

"धुक्षते हा धरित्री" काव्य वर्तमान कालीन विरोधाभासों से विडम्बना को प्राप्त मानव को आनन्द का सन्देश देकर "वाक्यं रसात्मकं काव्यम्" को चरितार्थ करता है। वीर, करुण, भयानक, वीभत्स, शान्त, वात्सल्य आदि रसों का यथा-स्थान समीचीन परिपाक हुआ है। 'रसा' पर काव्य लिखने से यह एक ओर 'रसा काव्य' है, वहीं दूसरी और 'रस-काव्य' है। काव्य में भावपक्ष की प्रधानता है। भावपक्ष की तरह कलापक्ष भी समृद्ध है। प्रतीक, विम्ब, उपमा, काकुवक्रोक्ति आदि के द्वारा विषय को गरिमा प्रदान की है। विषयानुसार छन्दों की स्वाभाविकता दर्शनीय है।

महाकाव्य की वर्णन-शैली—

धरित्री जिस असह्य पीड़ा से दुःखी है, उस पीड़ा को उसी धरती माता के मुख से सुनने और समझने का प्रयास "धुक्षते हा धरित्री" है। काव्य के विषय वस्तु के अन्तर्गत यह भूमि, इसके निवासी जन, और उनकी संस्कृति के साथ-साथ समस्त जड़-जङ्गम भी समष्टि के रूप में ग्रहण किये गये हैं। सामाजिक व्यथाओं से व्यक्ति पृथिवी इस" धुक्षते हा धरित्री "महाकाव्य में समस्त शोषित, जड़-जङ्गम की प्रतीक बनकर गोरूप में उपस्थित हुई है। ब्रह्मा-विष्णु प्रतीक बने हैं। काव्य में-हलो ब्रह्मन्, हलो ब्रह्मन्, कहकर, तू कौन है, जो मुझे 'हला, हलो' से पुकार रही है? मैं

तो तुम्हारा पूर्व पुरुष ब्रह्मा हूँ। इसी सम्वाद के साथ कथोपकथन शैली या नाट्यशैली में पृथ्वी और ब्रह्मा के मध्य वार्ता महाकाव्य क्रम से आरम्भ होता है। काव्य के नाम से कथ्य या विषय वस्तु प्रकट हो जाती है।

कथा की व्यथा और कथा की कहानी ही वर्ण्य विषय है। विषय को विभिन्न प्रतीक स्वरूप सर्गों में सामाजिक दृष्टिकोण को व्यक्त करने में काव्य सफल है। भाषा सरल, स्वाभाविक, किन्तु प्रवाह पूर्ण है। "प्रजातन्त्रवाद" शीर्षक के अन्तर्गत आज के नेताओं का स्वाभाविक चित्र-चित्रित है-

सेवा पाणिग्रहं कृत्वा हत्यापहरणदूषिताः ।
पापिनः निर्भयं यान्ति सभ्यां लोकसभामपि ॥1

आज के गृहस्थाश्रम का क्या स्वरूप हो गया है। वक्रोक्ति से स्पष्ट है-

पितरौ च त्वया त्यक्तौ स्त्री ते कार्यालयं गता।
शिशुः धात्री गृहे चास्ति धन्योऽयं ते गृहाश्रमः ॥2

कवि का सामाजिक दृष्टिकोण परिपक्व और प्रौढ़ है। घर की दुर्दशा गृहभङ्ग सर्ग में है। स्वतन्त्रता का लक्ष्य तो सामाजिक, राजनैतिक एवं आर्थिक प्रगति जन-जीवन सुखमय बनाना था, किन्तु पल्लवित, पुष्पित होने से पूर्व नेताओं की स्वार्थ-परता तथा दलबन्दी के दल-दल में फँसी जनता त्राहि-त्राहि मचा रही है। "आतङ्क-दंश" में स्पष्ट है। देश-काल, परिस्थिति, पात्र आदि के अनुरूप काव्यभाषा का प्रवाह है। वर्णन शैली महाकाव्य की उत्तम है।

महाकाव्य का नायक—

काव्य 11 सर्गों में विभक्त है। प्रति सर्ग विभिन्न प्रतीकों में विभक्त है। क्रमशः प्रतीक हैं- दिङ्-मोहः, संवादः, स्वतन्त्रता-संरम्भः, प्रजातन्त्रवादं, संस्कृति-भ्रंशः, गृह-भङ्गः, विसंवादः, आतङ्क दंशः, गोवंश, पर्यावरण-क्षयः और उपहारः। अन्त में श्लोक-वद्ध अपना सामान्य परिचय उपसंहार के रूप में है। काव्य का 'नायक' धरित्री है, जो स्वतन्त्रता के बाद समाज की बिडम्बना के कारण जीती-जागती धरित्री आज कंकड़-पत्थर, लोहा, कोयला, तेल, पानी, अन्न आदि की जड़मूर्ति बन गई है। स्वतन्त्रता से पूँजीवादी देशों में भ्रष्टाचार व्यभिचार, घूंस, अन्यायादि का ताण्डव होता था। सत्य, अहिंसा, विश्वास, न्याय, प्रेम आदि मानवीय मूल्य लुप्त हो गये। जिसका प्रभाव भारत भूमि पर स्पष्ट लक्षित है। संवेदना समाप्त हो गई। मानव मूल्य पुस्तकों के पन्नों में रह गये। समाज विकृत हो गया। संस्कृति पर वैदेशिक संस्कृति का प्रहार है। गन्धमयी पृथिवी दुर्गन्धमयी हो गई। ऐसी परिस्थिति में धरित्री के उद्धार के लिए किससे आशा करें। धरती को तो संवेदना की आवश्यकता है।

कवि ने "धरित्री" को नायकत्व देकर स्वयं पौराणिक मान्यताओं के आधार पर ब्रह्मा के द्वारा विष्णु से पृथिवी ने अपना दुःख दूर करने की प्रार्थना की है, क्योंकि दिङ्गमोह से व्याप्त एवं दुःखी धरित्री स्वयं इस दुःख से हल्के-भूकम्प आदि प्राकृतिक साधनों से मुक्ति तो पा सकती है,

किन्तु वह तो 'मां' है। सुनामी की एक लहर से सबको सद्मार्ग पर ला सकती है, किन्तु "मैं मां जो ठहरी" मां होने के कारण स्वयं विनाश का मार्ग नहीं अपना सकती। फिर क्या करूं? कैसे मार्ग भ्रष्ट को रास्ते पर लाऊं। फिर धरित्री को याद आया-मैं जैसे पहले गौ का रूप धारण कर ब्रह्मा जी के पास गई थी, आज वही मार्ग अपनाती हूँ। फिर सोचती है, कि आज गौवंश-विध्वंसक मुझे मार देंगे, कृतघ्न तो मां को भी नहीं छोड़ता है। हाँ स्मरण हुआ। मेरी छाती में जो यन्त्र गढ़े हुए हैं सूचना-प्रौद्योगिकी के। उन्हीं का सहारा लेती हूँ। ब्रह्मा जी के माध्यम से विष्णु से अपने अत्याचारों को-प्रतीकों के द्वारा व्यक्त करती है।

नायक के माध्यम से कवि ने वर्तमान कालीन विसंगतियों का चित्र प्रस्तुत किया। नायक में धैर्य है, करुणा है, सामाजिक कुरीतियों के प्रति घृणा है। न केवल मानवमात्र को, अपितु जड़ जङ्गम सबको सद्मार्ग पर चलाने का प्रयत्न किया है। धरित्री के माध्यम से विराट् की उपलब्धि कराई है। अपनी बात को सिद्ध करने में नायक सफल है। तभी तो काव्य के अन्त में विष्णु का स्पष्ट आशीर्वाद होता है।

शुभं भवतु सर्वत्र मङ्गलं चास्तु सर्वदा।
हृदये हृदये वास्तु सौमनस्यं गृहे गृहे ॥

हे धरित्री! अब सर्वत्र और सर्वदा सुख, समृद्धि, सौभाग्य एवं उल्लास के साथ-साथ घर-घर और हृदय-हृदय में सन्तोष और सद्भावना हो।

महाकाव्य का कथानक—

प्रथम सर्ग का कथानक—

यह सर्ग 23 श्लोकों में निबद्ध हैं। "दिङ्-मोह" नामक इस सर्ग का प्रारम्भ भारतमाता की वन्दना से कर, उसकी गौरव गाथा का स्मरण कर कवि का हृदय वेदना से व्यथित था, वही वेदना काव्य की रचना भी कर रही है। स्वतन्त्रता स्वच्छन्दता में बदल गई। ज्ञान का प्रकाश फैलाने वाली क्षमा भी अधीर हो गई। समाज भ्रान्त, अशान्त, भयाक्रान्त है। ईतिभय, गृहकलह एवं विध्वंसक प्रवृतियों से भारतमाता भयभीत है, कुमार्गी जनता से कैसे त्राण पाऊँ। यदि मैं (भारत माता) पौराणिक काल की तरह गाय-स्वरूप में ब्रह्मा जी के पास जाती हूँ, तो गौ हत्यारे मुझे मार डालेंगे, क्योंकि ये आकाशमार्गी भी हैं। अच्छा! मैं दूरसंचार के उपग्रह का प्रयोग करती हूँ।

द्वितीय-सर्ग का कथानक—

इस सर्ग में 26 श्लोक हैं। 'सम्बाद' के माध्यम से धरित्री प्रथम पितामह को प्रणाम कर अपना 'सन्देश' ब्रह्मा जी के कर्ण विवरों में पहुँचाती है। हल्लो-हल्लो का शब्द हलाहल बोध कराने से नीलकण्ठ महादेव के प्रति आग्रह जाता है। प्रतिकार करते हुए धरित्री आत्मकथा का ज्ञान ब्रह्मा को कराती है, यद्यपि उन्हें सब कुछ ज्ञात है। ब्रह्मा ने क्षत-विक्षत, भयभीत, अस्त्रयुक्त पृथिवी को यन्त्र में देखा। ब्रह्मा ने पूछा-दुःखी किसने किया? शत्रु नहीं, पुत्र ने ही दुःखी किया है।

तुम्हें स्वतन्त्रता दी है विष्णु ने। वह कहाँ गई। वराहकल्प में जो स्वतन्त्रता मिली थी, वह तो आपकी छींक ही वरदायिनी हुई। ब्रह्मा जी के द्वारा आश्वस्त करने पर भी धरित्री ने कहा-पहले मेरी सुनो, तब निर्णय करो।

तृतीय-सर्ग का कथानक—

इस सर्ग में 47 श्लोक हैं। "स्वतंत्रता संरम्भ" नामक इस सर्ग में धरित्री ने कहा-तब हिरण्याक्ष का वध कर, पुनः आने की प्रतिज्ञा के साथ विष्णु चले गये। कलियुग के आरम्भ में पाण्डव परीक्षित् ने कलियुग को सोने में रहने की आज्ञा दी थी, तब से पूँजीवादी मेरा निरन्तर दोहन कर रहे हैं। मुझे यवनों ने अपमानित किया। पुनः नास्तिक, लोभी, लुटेरे विदेशी मुझे लूटते रहे। स्वतन्त्रता आई, तो स्वतन्त्रता के शत्रुओं ने मुझे बन्धक बना दिया। पूर्ववत् मैं परतन्त्र रह गई। ब्रह्मा-विष्णु-महेश भी स्वतन्त्रता का स्वरूप नहीं समझते। जगत् में कौन स्वतन्त्र है? सब परतन्त्र हैं। जन-जन के बलिदान से स्वतन्त्रता मिली, परतन्त्रता चली गई। सबने प्रार्थना महाकाव्य की-सर्व सुख प्रदायिनी स्वतन्त्रता भारतभूमि में निवास करे। अब जिन वीरों का वरण यह स्वतन्त्रता करना चाहती थी, वे वीर तो वीर गति को प्राप्त हो गये। अब किसका वरण करे? दासता समाप्त हो गई, किन्तु दुर्जनों, स्वछन्दचारियों, लुटेरों, परपीकसका समाज को देखकर स्वतन्त्रता दुःखी है। स्वतन्त्रता के दिन मिलकर सबने मेरा अभिनन्दन किया, स्वागत किया, किन्तु आज मैं निष्प्रभ एवं मलिन हो गई हूँ। यदि यही स्थिति बनी रही, तो स्वतन्त्रता जाने में स्वतन्त्र है।

चतुर्थ-सर्ग का कथानक—

"प्रजातन्त्रवाद" नामक शीर्षक से युक्त इस सर्ग में प्रजातन्त्रात्मक राज्य में परतन्त्रता की पीड़ा और स्वतन्त्रता का उपहास विषय विवेच्य है। असंख्य देशभक्तों के बलिदानों के फल-स्वरूप प्राप्त स्वतन्त्रता बिना युद्ध के प्राप्त होने के कारण आज का शासक, कर्मचारी, जननेता भ्रष्टाचार के माध्यम से धनोपार्जन में व्यस्त है, कर्तव्य के प्रति उदासीन। मद्य-मांस, लूट-खसोट ही जीवन का उद्देश्य हो गया है। बहुमत प्राप्त नेता जनमत को ठुकराकर व्यक्तिवाद को महत्त्व दे रहा है। याचना से स्वाभिमान की हानि होती है, यह सिद्धान्त व्यर्थ हो गया है। मत मांगने से ही मान बढ़ा है। हे विधाता ! या प्रजातन्त्र ऐसा चलता है, जो मतदाता को ही याचक बना दे? सांसद का दायित्व छोड़कर सांसद संसद से बाहर ही घूम रहा है। निरक्षर मंत्री पद को शोभित कर रहे हैं। क्या ऐसा ही प्रजातन्त्र होता है ?

हे ब्रह्मन् ! सरस, विमल, अम्लान छवि वाली मेरी पूर्व परिचित छवि कहाँ चली गई। चल-चित्रों में नग्नता का प्रतीक बनी अभिनेत्रियों ने संसद पटल पर अपना स्थान बना लिया। स्वार्थ ने समाज का गला घोट दिया है। जन सेवा के नाम पर पृथ्वीपति बन गये हैं। क्या यही युग धर्म बन गया है। अहा! नेताओं और प्रजा के पापाचरण का ही कारण तो हैं-अकाल, महामारी, भूकम्प, बाढ़, सुनामी, रेल, मोटर एवं वायुयान दुर्घटनायें।

पञ्चम-सर्ग का कथानक—

प्रस्तुत सर्ग में 61 श्लोकों हैं। पांचवाँ सर्ग "संस्कृति-भ्रंश" से सम्बन्धित है। धरित्री की वार्ता-ब्रह्मा से हो रही है। हे ब्रह्मन् ! जो भारतीय संस्कृति कभी विश्व-वंद्य थी, वह आज कहाँ चली गई? दुराचार और कलह संयुक्त पाश्चात्य संस्कृति के उपासक हो गये हैं भारतीय। भारतीय संस्कृति तो अब केवल संस्कृत-काव्यग्रन्थों में ही पढ़ने तक ही रह गई है। स्वच्छ जल नदियां आज गन्दगी के कारण शोचनीय बन गई हैं। तीर्थों की गरिमा दुराचारियों से नष्ट हो गई है। मेरा हितैषी श्रीकृष्ण के गोलोक में जाने पर मैं अनाथ हो गई हूँ।

पिता की आज्ञा से राज्य-त्याग कर वन में जाने वाले राम अब पृथ्वी पर दिखाई नहीं देते हैं। वर्ण व्यवस्था भंग हो गई। वर्णसंकर पूज्य हो गये। विद्याभवन कुरीतियों के सम्बर्धक हो गये। जनता जघन्य अपराधों में लिप्त है। जनता के इस राज में पाखण्ड ने आक्रमण कर दिया है। हे ब्रह्मन् ऐसे वातावरण में आप ही मेरे रक्षक हो।

षष्ठ-सर्ग का कथानक—

"गृह-भङ्ग" - शीर्षक का यह सर्ग स्वसंस्कृति का परित्याग और पाश्चात्य संस्कृति का आत्मसात् का विषाद व्यक्त कर रहा है। यही तो पराधीनता है। भारत माता दुःखी है। भारतीय स्वार्थपूर्ति में संलग्न है। आत्मचिन्तन, दर्शन-ज्ञान से दूर ज्ञानमुगुका खाई में पर ही ज्ञान के जमात में संलग्न है। असवारित पत्नी के कारण पतिदेव के दर्शन रसोई में बर्तन मलते हुए, खाना बनाते हुए अथवा सांयकाल दरवाजे पर बच्चे को कन्धे पर बैठाकर पत्नी-प्रतीक्षा के अवसर पर ही हो सकते हैं। वह घर तो अब रैन बसेरा मात्र रह गया है। घर-घर नहीं रह गया। स्वार्थलीन जन बूढ़े माता-पिता, अनाथ, विकलांग, रोगी-पारिवारिक व्यक्तियों का अनादर करने में सम्मान समझते हैं। धनोपार्जन ही व्यक्ति का धर्म हो गया है। स्त्रियों की नग्नता ही कुलीनता हो गई है। बालिकाओं की अनाचारित स्वछन्दता पर आक्षेप किया गया है। दहेज लोभियों को भी प्रताड़ित किया गया है। भ्रूण हत्या कलंक है। कन्या जन्म तो लक्ष्मी का आगमन है। उससे भय क्यों ?

सप्तम-सर्ग का कथानक—

इस सर्ग में 30 श्लोक हैं। 'विसंवाद' से सम्बन्धित चर्चायें सप्तमसर्ग में है। धरित्री का सन्देश ब्रह्मा जी को जा रहा है कि यन्त्रों के युग में स्थावर चल रहे हैं और चर (मनुष्य) यन्त्रों पर आश्रित होने के कारण अचल हो गये हैं। मनुष्य का व्यायाम भी यन्त्राधीन हो गया है। कभी गीता परतप अर्जुन के लिये थी, आज न्यायालय में शपथ के लिये हो गई है। व्यक्ति सुन्दर आचरण से दूसरे का धन छीनना चाहता है। वस्तुतः वह सोने के बदले कांच ले रहा है। वैसे मुक्ति ज्ञान से मिलती है, किन्तु यहाँ विज्ञान से मुक्ति (मृत्यु) कदम-कदम पर है। अकिंचन गृहस्थी पर्णकुटी में रह रहा है, किन्तु सन्यासी महलों में सन्यासिनियों का स्वामी बना हुआ है। अद्य विद्यार्थी चरित्र भ्रष्ट कराने वाली शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं। विज्ञान के दोष गिन दिये, अब वचने का उपाय बताइये? विष्णु ने कहा, हे धरित्री! संसार हितकर तुम्हारे प्रश्न हैं। पदार्थों पर आधारित ज्ञान, उनके बिना स्वयं ही निरर्थक हो जायेगा। धरित्री-विज्ञान प्रयोगकर्ता इसका कुप्रयोग कर रहे हैं। अतः पृथिवी

पर सभी प्राणियों के प्राण संकट ग्रस्त हैं। विष्णु-मृत्यु पूर्व चींटियों के पंख की तरह विज्ञान की ऊँची-ऊँची उड़ानें पतनोन्मुखी हैं। संहारक इस विज्ञान रूपी जल्लाद से मैत्री मत करो। देखो मानवबमवादी स्वयं भी मरता है और दूसरों को भी मारता है। हे ब्रह्मन्! ऐसी स्थिति में मैं क्या करूं ?

अष्टम-सर्ग का कथानक—

प्रस्तुत सर्ग में 28 श्लोक हैं। "आतङ्क-दंश" नामक इस सर्ग में आतङ्क से संत्रस्त पृथिवी का करुण-क्रन्दन है। अब सज्जनों की निवास भूमि में आतङ्कवादियों का प्रवेश हो चुका है। भौतिकवादी वैज्ञानिक सर्वविध यन्त्रों से सज्जित होकर सृष्टि का विनाशक वन चुका है। शान्तिवार्ता के नाम पर भ्रमित कर रहे हैं, क्योंकि विवेकहीन समाज सदा भ्रान्ति का शिकार हो ही जाता है। कश्मीर का हो अथवा आसाम का निवासी जिसे भारतमाता ने बड़े स्नेह से पाला, वे ही बंटवारे के नाम पर उसका खून का प्यासा हो गया है। आतंकवादी कब, कहाँ, क्या अनिष्ट कर दें? नागरिक भय से म्लान है। भू-माता जीवन की इन विघटनकारी वृत्तियों से कंपायमान है। आज का वैज्ञानिक दूर सञ्चार का प्रचार-प्रसार कर भी अदूरदर्शी है, क्योंकि अपना विनाश देखने में असमर्थ हैं। अहो! प्रक्षेपास्त्र, राकेट, रडार, दूरबीन आदि उपकरणों से संयुक्त पृथिवी का स्वरूप ऐसा हो गया है, मानो विपत्ति की चमकदार दुकान हो। समस्त बुराइयों से आक्रान्त माता पृथिवी ने किसी प्रकार ब्रह्मा जी को देखने की इच्छा की।

नवम-सर्ग का कथानक—

इस सर्ग में 16 श्लोक हैं "गो-वंश" शीर्षक से इसमें गो वंश का महत्त्व एवं उस पर नृशंस अत्याचारों का वर्णन है। जिस पूछ से गोपियों ने श्रीकृष्ण की झाड़-फूंक कर रक्षा की। मनुष्य तयाते का वर्णन अवसागर पार कर लेता है, अरे पापियों। तुमने उसे काटकर कूड़े में फेंक दिया। गाएक भूमि समाप्त कर दी है। उसका मांस विदेशों में भेजा जा रहा है। सरकार को भी उसात गोचर भूमि प्राप्त हो रहा है। स्वदेशी की अपेक्षा, विदेशी गाय का महत्त्व बढ़ गया है। मनुष्य कोशी धन मृत्यु-उपरान्त तक गोमाता सहायक होती है। जो गोमाता भुक्ति और मुक्ति प्रदान करतो उसे लो याचक तो कर दिया है। निदोष एवं जानका हेतु रही, किन्तु बधिक तो उसे मृत्युदण्ड देने में कुशल-क्षेम समझता ही रहा। गौ रक्षा ही संकारती एवं सौभाग्यदायक है। गौ रक्षा से ही भारत सुरक्षित रहेगा।

दशम-सर्ग का कथानक—

इस सर्ग में 36 श्लोक हैं। "पर्यावरण-क्षयः" शीर्षक के माध्यम से कवि ने प्रकृति के विनाश पर होने वाली क्षति का काव्यरूप में वर्णन किया है। धनलोभी ठेकेदारों एवं वनरक्षकों के द्वारा जल और फल का उपभोग कराने वाले वृक्षों को काटा और जलाया जा रहा है। पत्र, पुष्प, फल, मूल, शाखा, कली, बीज, जड़, अंकुर, छाया, बल्कल और जल मानव को देने वाले वृक्षों का विनाश वही मानव कर रहा है। अब कहाँ जावें वनजन्तु? पृथिवी उजाड़ और वीरान हो गई

हैं। वृक्षों के अभाव से वर्षा का अभाव हो गया है। वर्षा के बिना किसानों की खेती व्यर्थ हो गई है। वृक्ष तो पुत्र सदृश हैं। लतायें पुत्री तुल्य हैं। पथिक छाया बिना व्यथित हैं। कवि का स्पष्ट कथन है कि पर्यावरण और प्राणरक्षक पेड़ पौधों की प्राणों की तरह रक्षा करनी चाहिए। नदियों का जल सूख रहा है। कहीं कीचड़ मात्र रह गया है। जल-जन्तु विनाश की ओर गमन-कर रहे हैं। पर्यावरण दूषित हो चुका है। प्रदूषण ने नदियों को दूषित कर दिया है। उससे समाज रोग-ग्रस्त होता जा रहा है। गन्दगी से विविध रोगों ने न केवल मानव पर, अपितु पशु, पक्षी, कीट, पतंग पर आक्रमण कर दिया है। भौतिक एवं मानसिक पर्यावरण की रक्षा के लिये सामुहिक प्रयास हो। दुर्लभ कस्तूरी मृग अब दुर्लभ हो गये। वनों के बिना जल नहीं। जल बिना जीव नहीं, जीवों के बिना मानव अस्तित्व समाप्त। अतः पर्यावरण के माध्यम से योग-क्षेम प्राप्ति हेतु पृथिवी की रक्षा करें।

एकादश-सर्ग का कथानक—

इस सर्ग में 26 श्लोक हैं। "उपहार" शीर्षक से युक्त काव्य का अन्तिम सर्ग है। धरित्री की प्रार्थना-भगवान् विष्णु से - हे भगवन्! शत्रु सेना से त्रस्त मेरी रक्षा करो। आप इस आदि-सृष्टि को विपद्-ग्रस्त देखकर भी शान्त क्यों बैठे हो? ब्रह्मा जी ने कहा- हे धरित्री! मेरी प्रार्थना और तुम्हारी विनती से प्रसन्न भगवान् विष्णु तुम्हारा कल्याण करेंगे। तुम्हारे सम्मुख जगन्नाथ खड़े हैं, फिर अनाथ कैसे हो? तुम पर विष्णु की कृपा है। डरो मत। तभी आकाशवाणी होती है। भगवान् विष्णु ने कहा- हे धरित्री ! चिन्तित मत हो। युद्धों का भय दूर होगा, मैं तुम्हें माता के गौरवशाली पद पर आसीन करूंगा। चालब पृथिवी पर रहकर पृथिवी की रक्षा करूंगा। मैंने तो सात दिन तक गिरि-गोवर्धन धारण किया था, आपने तो गिरि और गिरिधर दोनों को धारण कर रखा है। धरित्री ने भगवान् को बार-बार प्रणाम किया। प्रभो! आपके बल एवं कृपा के बिना मैं कैसे बलवती हो जाऊँगी। विष्णु ने कहा- हे धरित्री तुम सदा अन्न, जल आदि से समृद्ध बनी रहो। मानव स्वयं धर्म का पालन करते हुए धर्मों का रक्षक होगा। अब अभिनय बनीव सज्जनों की रक्षा करेगा, तुम्हारा सच्चा हितैषी होगा, फलदार एवं छायादार वृक्षों का संवर्धन करेगा, पुनः नदी, नहर, घाट और स्रोतों का जल पूजा योग्य होगा, मंत्रीगण विलोभ होकर शासन करेंगे, देश का उन्नयन करेंगे, कामधेनु (पृथिवी) का दोहन संयम और नियम से करेंगे। मैं सद्भाव से सम्पूर्ण समाज को प्रेम से बांध देता हूँ। सबके हृदय में सन्तोष और सद्भाव हो। हे धरित्री! मेरे इस उपहार से सब मानव प्रसन्नता, परितोष, प्रगति और सम्मति से सम्पन्न निर्भय एवं सुखी हों।

अभ्यास प्रश्न—

बहुविकल्पीय प्रश्न—

1. डॉ० आशोक कुमार डबराल का जन्म कब हुआ।

A. 14 अप्रैल सन् 1943

B. 13 अप्रैल सन् 1943

C. 14 अप्रैल सन् 1942

D. 14 अप्रैल सन् 1944

2. डॉ० आशोक कुमार डबराल के प्रपितामह का क्या नाम था।

A. विष्णुदत्त

B. दामोदर

C. नीलदेव

D. उक्त में से कोई नही

3. देवतात्मा हिमालयः (महाकाव्य) का प्रकाशन वर्ष क्या है।

A. 2002 में

B. 2003 में

C. 2004 में

D. 2005 में

4.धुक्षते हा धरित्री (महाकाव्य) का प्रकाशन वर्ष क्या है।

A. 2002 में

B. 2003 में

C. 2004 में

D. 2005 में

1.4 सारांश

गढ़वाल के 20 वीं सदी के महान साहित्यकार बहुमुखी प्रतिभा के धनी डॉ०आशोक कुमार डबराल की सारस्वत साधना उनके रचना संसार की विशालता से स्पष्ट है। उन्होंने दर्जनों ग्रन्थों (जिनमें संस्कृत भाषा में तथा हिन्दी भाषा में है) की रचना की।

डॉ० डबराल ने संस्कृत साहित्य की विविध विधाओं पर काव्य रचना की। उन्होंने 'देवतात्मा हिमालयः' जैसा विशाल महाकाव्य लिखा वहीं दूसरी ओर विभिन्न नाटक लिखकर अपनी अलग पहचान बनाई। उन्होंने आधुनिक काल में संस्कृत के प्रचार-प्रसार में भी अपूर्व योगदान दिया। संस्कृत साहित्य को डॉ० डबराल जी की देन अमूल्य है।

1.5 पारिभाषिक शब्दावली

1.6. अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.A 2.B 3.C 4.D

1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ/सहायक सामग्री

1. गढ़वाल की संस्कृत साहित्य को देन, डाँ. प्रेमदत्त चमोली।

2. कूर्मांचल में संस्कृत साहित्य की परम्परा, बसन्तबल्लभ भट्ट।

3. कुमाऊँ का इतिहास, बद्रीदत्त पाण्डे।

1.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. धुक्षते हा धरित्री (महाकाव्य) का वर्णन कीजिए।
2. देवतात्मा हिमालयः (महाकाव्य) का वर्णन कीजिए।
3. डॉ०आशोक कुमार डबराल के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का परिचय दीजिए।

इकाई - 2 शिवप्रसाद भारद्वाज का जीवन परिचय एवं उनकी कृतियाँ

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 इकाई की पाठ्य सामग्री
2.3.1 शिवप्रसाद भारद्वाज का जन्म एवं पूर्वज
2.3.2 शिक्षा दीक्षा
2.3.3 आजीविका
2.3.4 शिवप्रसाद भारद्वाज का रचना संसार
2.3.4.1 शिवप्रसाद भारद्वाज के प्रकाशित काव्य
2.3.4.2 शिवप्रसाद भारद्वाज के प्रकाशित नाट्य
2.3.4.3 शिवप्रसाद भारद्वाज के प्रकाशित कहानियाँ
2.4 सांराश
2.5 सन्दर्भ ग्रन्थ/सहायक सामग्री
2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.7 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

''**उत्तराखण्ड के संस्कृत साहित्यकार**'' इस शीर्षक वाली द्वितीय खण्ड की द्वितीय इकाई ''शिवप्रसाद भारद्वाज का जीवन परिचय एवं उनकी कृतियाँ'' से संबंधित है। इससे पूर्व की इकाई में आप उत्तराखण्ड के कुमाऊँ क्षेत्र के सुप्रसिद्ध संस्कृत रचनाकार श्रीकृष्ण जोशी, श्रीहरिनारायण दीक्षित एवं लोकरत्न गुमानी के व्यक्तित्व-कृतित्व आदि के विषय में विस्तार से जान चुके हैं। इस इकाई में शिवप्रसाद भारद्वाज एवं उनके साहित्य के विषय में आप विस्तार से जानेंगे।

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद उत्तराखण्ड के गढ़वाल क्षेत्र के 20 वीं सदी के सुविख्यात संस्कृत रचनाकार श्री शिवप्रसाद भारद्वाज के जीवनवृत्त एवं उनकी कृतियों के बारे में विस्तार से जानेगें। इससे आप संस्कृत साहित्य में शिवप्रसाद भारद्वाज के योगदान को भलीभाँति जान लेगें।

2.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप—

- बता पाएंगे कि गढ़वाल क्षेत्र के संस्कृत साहित्यकार शिवप्रसाद भारद्वाज का जन्म कहाँ हुआ।
- शिवप्रसाद के माता-पिता, उनकी वंशावली आदि के विषय में अच्छी तरह से बता सकेंगे।
- शिवप्रसाद के कार्यक्षेत्र (आजीविका) आदि के बारे में जानकारी दे पाएंगे।
- कवि के महाकाव्य, खण्डकाव्य, गीतसंग्रह, स्तोत्र काव्य, मुक्तक काव्य आदि के बारे में अच्छी तरह बता सकने में समर्थ होगे।
- शिव प्रसाद के समग्र संस्कृत कृतियों का परिचय दे पाएंगे।
- इनके द्वारा हिन्दी भाषा में विरचित ग्रन्थों के बारे में जानकारी दे सकेंगे।

2.3 इकाई की पाठ्य सामग्री

उत्तराखण्ड के गढ़वाल क्षेत्र में प्राचीन काल से ही यद्यपि संस्कृत के पठन-पाठन को संकेतित करने वाले साधन यथा-संस्कृत भाषा में लिखे गए शिलालेलख आदि तो मिलते है तथापि लिखित संस्कृत साहित्य वहाँ बहुत बाद से प्राप्त होता है। संभवतः प्राचीन साहित्य विषम भौगोलिक परिस्थितियों के कारण प्रकाश में ही नहीं आ पाया और समय के प्रभाव से नष्ट हो गया। राजनीतिक अस्थिरता भी पुराने साहित्य के नष्ट होने के कारण रही होगी। यह भी संभव है कि गोरखा शासन में यहाँ का काफी साहित्य नेपाल ले जाया गया। गढ़वाल में लिखित संस्कृत

साहित्य 17 वीं सदी के बाद का ही मिलता है, किन्तु उसके बाद यहाँ संस्कृत साहित्य लेखन की अविरल परम्परा देखने को मिलती है।

गढ़वाल के संस्कृत साहित्यकारों की परम्परा में 20 वीं सदी के साहित्यकार शिवप्रसाद भारद्वाज एक प्रशंसनीय नाम है। इनके जीवन चरित तथा रचनाओं का विवरण इस प्रकार है -

2.3.1 शिवप्रसाद भारद्वाज का जन्म एवं पूर्वज

शिवप्रसाद भारद्वाज का जन्म कार्तिक मास 21 शुक्रवार विक्रम संवत् 1979 (तद्नुसार सन् 1922 ईसवी) में पौड़ी के समीप स्थित ग्राम-डांग, पट्टी गगवाडस्यू में हुआ था। इनके पिता का नाम हीरामणि तथा माता का नाम उत्तरादेवी है। हीरामणि आजीविका हेतु देहरादून के अन्तगत रायपुर में बस गए थे। इनके दादा रामानन्द तथा परदादा श्री छिद्दाराम थे। दुर्भाग्यवश जब शिवप्रसाद छः वर्ष के थे तभी इनकी माता का देहावसान हो गया और ये माता के स्नेह से वंचित हो गए।

2.3.2 शिक्षा दीक्षा

कवि शिवप्रसाद की प्रारंभिक शिक्षा हरिद्वार में हुई। हरिद्वार से प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त करने के बाद इन्होंने आगे की शिक्षा संसकृत महाविद्यालय, गढ़मुक्तेश्वर में रहकर प्राप्त की। यहाँ ये 20 वर्ष की अवस्था तक विद्याध्ययन करते है। सन् 1942 से 1959 ईसवी तक इन्होंने दिल्ली में शिक्षा प्राप्त की। दिल्ली प्रवास इनके जीवन के उत्थान का आरंभ माना जा सकता है। यद्यपि इन्होंने वाराणसी से शास्त्री एवं साहित्य में आचार्य की उपाधियाँ प्राप्त की थी तथापि दिल्ली से बी0ए0 एवं एम0ए0 (संस्कृत) की परीक्षाऐं भी उत्तीर्ण की। बाद में पंजाब विश्वविद्यालय से ''पश्चाद्वर्ती काव्यशास्त्र के स्रोत के रूप में बाल्मीकी रामाण'' विषय पर शोधोपाधि (पी-एच0डी0) प्राप्त की। इन्होंने जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू से ''संस्कृत काव्यशास्त्र में काव्य बिम्ब-विवेचन'' विषय पर डी0लिट् की उपाधि भी प्राप्त की।

2.3.3 आजीविका

शिवप्रसाद भारद्वाज ने अपने दिल्ली प्रवास के समय सर्वप्रथम दिल्ली प्रशासन के अन्तर्गत अध्यापन कार्य किया। नवम्बर सन् 1959 में श्री भारद्वाज विश्वबन्धु वैदिक शोध संस्थान होशियारपुर में प्राध्यापक के पद पर नियुक्त हुए। अध्ययन-अध्यापन एवं लेखन ही इनके जीवन का मुख्य ध्येय रहा। इन्होंने पंजाब विश्वविद्यालय में भी संस्कृत व्याख्याता के पद पर कार्य किया। वहीं से ये 1985 में रीडर पद से सेवानिवृत्ति हुए। सेवानिवृत्ति के बाद भी अपने पुत्र के पास भारद्वाज निकेतन देहरादून में रहते हुए व्याख्यान-माला के साथ-साथ संस्कृत हिन्दी में इनका लेखन कार्य सतत् रूप से चलता रहा।

2.3.4 शिवप्रसाद भारद्वाज का रचना संसार

शिवप्रसाद भारद्वाज जी संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी और प्राकृत भाषा के अच्छे जानकार थे। बहुमुखी प्रतिभा के धनी भारद्वाज जी ने संस्कृत भाषा में अनेक ग्रन्थों की रचना की। इनकी

अनेक संस्कृत कृतियाँ प्रकाशित भी है। अनेक रेडियों रूपकों का आकाशवाणी से प्रसारण भी हो चुका है। इन्होंने संस्कृत साहित्य की विभिन्न प्राचीन विधाओं के साथ-साथ कतिपय नवीन विधाओं पर भी काव्य रचना की। उनकी समस्त प्रकाशित एवं अप्रकाशित कृतियों का विवरण इस प्रकार है -

2.3.4.1 शिवप्रसाद भारद्वाज के प्रकाशित काव्य

1. लौहपुरूषावदानम् महाकाव्य: —

श्री भारद्वाज के जीवन का प्रारंभिक समय भारत की पराधीनता का काल था। भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति के समय शिवप्रसाद लगभग 25 वर्ष के युवा थे। उस समय की परिस्थितियों ने उनके युवा मन को झकझोर कर रख दिया। संवेदनशील कवि हृदय शिवप्रसाद भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के क्रान्तिकारियों से अत्यन्त प्रभावित थे। सरदार बल्लभ भाई पटेल की रीति-नीति तथा उनका व्यक्तित्व कवि के लिए प्रेरणा स्रोत बन गया। उन्होंने लौहपुरूषावदानम् नामक महाकाव्य में स्वतंत्रता संग्राम के अग्रणी नेता सरदार पटेल, जो लौह पुरूष के रूप में विख्यात थे, के जीवन-चरित का वर्णन किया है। भारत के स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास का वर्णन करने वाला यह एक ऐतिहासिक महाकाव्य है। इस महाकाव्य में 32 सर्ग है, जिनमें प्रमुखतः आर्या छन्द सहित विविध छन्दों से युक्त दो हजार सात सौ चैवालिंस (2744) श्लोक है। इस विशाल महाकाव्य में कवि ने सरदार पटेल के जीवन का विस्तार से वर्णन किया है। इस ग्रन्थ का प्रकाशन सन् 1978 क बाद का है। संस्कृत के आधुनिक कवि शिवप्रसाद की स्वकृत हिन्दी अनुवाद से युक्त यह अनुपम कृति है, जो किसी कवि को अमर बनाने में सक्षम है।'लौहपुरूषावदानम्' महाकाव्य की कथावस्तु व्यापकता लिए हुए है। सरदार बल्लभ भाई पटेल के जीवन से संबद्ध समस्त घटनाओं को कवि ने काव्यमयी शैली में 32 सर्गों के अन्र्तगत आबद्ध किया। इसमें सबसे कम श्लोक चतुर्थ सर्ग में (केवल 30 श्लोक) तथा सर्वाधिक श्लोक (162 श्लोक) इक्तीसवें सर्ग में हैं। काव्य के नायक सरदार बल्लभ भाई पटेल है, जो धीरोदात्त के गुणों से युक्त है। महाकाव्य का अंगीरस उत्साह स्थायी भाव वाला वीर रस है अन्य करूण-वात्सल्य आदि रस यहाँ गौण रूप में हैं। कवि ने अनुष्टुप, मालिनी, बसन्ततिलका, मन्दाक्रान्ता, रधोद्धता जैसे पुराने छन्दों के साथ ही पंचचामर, त्रोटक, कुसुम विचित्रा, धनाक्षरी जैसे अप्रचलित छन्दों का भी प्रयोग किया है। कवि ने अपने इस महाकाव्य में अनुप्रास, उत्प्रेक्षा, यमक, रूपक, सन्देह, अर्थान्तरन्यास, विस्मय आदि अलंकारों का सफल प्रयोग किया है।

2. भारत सन्देश —

यह भारद्वाज जी का सुप्रसिद्ध प्रकाशित खण्ड काव्य है। इसे सन्देश काव्य भी कहा जाता है। भारत के राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसाद द्वारा सारे संसार को विश्वशांति का संदेश दिए जाने का चित्रण इस काव्य में है। इस खण्डकाव्य के दो भाग हैं। पूर्व भाग में द्वितीय विश्वयुद्ध की विभीषिका से त्रस्त कुछ राष्ट्रों के द्वारा अपने प्रतिनिधियों को शान्ति संदेश हेतु भारत भेजे जाने

का वर्णन है ताकि शस्त्रास्त्रों की दौड़ में संलिप्त वे राष्ट्र तटस्थ नीति वाले तथा पंचशील के सिद्वान्तों के समर्थक भारत से शान्ति सन्देश पा सके। उत्तर भाग में विदेशी प्रतिनिधियों द्वारा भारत के प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू से मुलाकात तथा तत्कालीन राष्ट्रपति से शान्ति सन्देश प्राप्त किए जाने का वर्णन है। इसमें पंचशील के सिद्वान्तों तथा मानव मात्र के प्रति कल्याण कामना व्यक्त की गई। है। यह शान्त रस प्रधान काव्य है साथ ही करूण एवं श्रृंगार रस भी कहीं-कहीं दिखाई देता है। काव्य की भाषा अत्यन्त सरल-सरस एवं बोधगम्य है। इस काव्य से शिवप्रसाद भारद्वाज की देशप्रेम की भावना भलीभाँति व्यक्त होता है। काव्य में वण्र्यविषय के अनुरूप ही रस छन्द एवं अलंकारादि का प्रयोग हुआ है ।

3. महावीर चरितम् —

जैन धर्म के प्रवर्तक वर्द्धमान (महावीर) के जीवन वृत्ति का चित्रण इस काव्य में किया गया है। 38 पृष्ठों वाले इस काव्य में हिन्दी अनुवाद सहित महावीर के जीवन की महत्वपूर्ण घटनाओं का रोचक ढंग से प्रस्तुत किया गया है। इसमें महावीर कालीन भारतवर्ष के इतिहास का भी वर्णन है। अतः इसे ऐतिहासिक खण्डकाव्य माना जा सकता है। इसमें शान्त रस की प्रमुखता है क्योंकि महावीर की संसार से विरक्ति तथा उन्हें कैवल्य की प्राप्ति शान्त रस की प्रतीति कराने वाले हैं। महावीरचरितम् में वार्णिक छन्दों की बहुलता है। इसमें उपजाति, उपेन्द्रवज्रा, मालिनी, मन्दाक्रान्ता, मालिनी, शार्दूलविक्रीडित, शिखरिणी आदि छन्दों तथा अनुप्रास, उपमा, उत्प्रेक्षा, यमक, अतिश्योक्ति आदि अलंकारों का यथावसर प्रयोग किया है। महावीरचरितम् की भाषा शैली सरल एवं सहज है। कवि ने महावीर के धर्म-प्रवचनों को अत्यन्त सरल एवं मनमोहक भाषा शैली में प्रस्तुत किया है। कवि के उपर्युक्त तीनों ग्रन्थ सन् 1978 ई0 से पहले प्रकाशित हो चुके हैं।

4. गुरू रविदास शतकम् —

यह भारतवर्ष के प्रसिद्ध भक्त कवि सन्त रविदास, जिन्हें रैदास भी कहा जाता है, के जीवन-चरित से संबंधित ग्रन्थ है। इसमें सन्त रविदास के जीवन की विविध घटनाओं को सौ श्लोकों में विभिन्न छन्दों का प्रयोग करते हुए चित्रित किया गया है। इस ग्रन्थ का प्रकाशन सन् 1984 में रविदास ट्रस्ट, चण्डीगढ़ से हुआ है।

5. इन्दिरा-गौरवम् —

सन् 2004 में प्रकाशित यह ग्रन्थ 209 आर्या छन्दों में लिखा गया है। काव्य का हिन्दी अंग्रेजी अनुवाद भी स्वयं कवि द्वारा किया गया है। यह काव्य देश की सशक्त महिला प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी की सन् 1984 में मृत्यु के बाद संवेदना स्वरूप लिखा गया है। इसमें इन्दिरा गाँधी के जन्म से मृत्यु तक के जीवन-वृत्त को संक्षेप में दर्शाया गया है। काव्य में शास्त्रीय परम्परा का निर्वाह करते हुए लेखक ने जहाँ नायिका की उपलब्धियों का विस्तृत वर्णन किया है वंही यथावसर उनकी आलोचना करने से भी वह नहीं चूका है।

6. अभिनव रागगोविन्दम्: —

यह आधुनिक शैली के मौलिक गीतों का संग्रह है। इसमें संस्कृत भाषा में गज़ल एवं कव्वालियाँ है। शायद यह संस्कृत भाषा में कव्वाली एवं गज़ल लेखन का प्रथम प्रयोग होगा। इसका प्रकाशन सन् 1979 ई0 में हुआ। इस ग्रन्थ पर कुरूक्षेत्र विश्व विद्यालय में एम0फिल0 स्तर पर शोध कार्य भी हो चुका है।

7. तरंगलेखा—

इस प्रकाशित ग्रन्थ में कवि द्वारा समय-समय पर लिखित फुटकर संस्कृत कविताओं का संग्रह है। अतः यह एक प्रकीर्ण काव्य संग्रह माना जाता है। विविध छन्दों का प्रयोग यहाँ दिखाई देता है। तरंगलेखा में 'क्षुपापहुति विंशति' शीर्षक से कुछ मुकरियाँ तथा ''संस्कृत त्रिपदिका शीर्षक से रूबाइयाँ लिखी गई है। ग्रन्थ के अन्त में आधुनिक शैली में मुक्तक-छन्द की कतिपय रचनाएं हैं।

8. मत्कुणायनम् —

यह संस्कृत में लिखित एक व्यंग्यकाव्य है। इसमें तीन आह्निक हैं। प्रथम दो आह्निकों में रामचरितमानस की तर्ज पर दोहा, चैपाई, सोरठा और हरिगीतिका छन्दों में मत्कुण को संबोधित करते हुए समाज के विभिन्न पक्षों पर व्यंग्य किया गया है। तीसरे आहिनक में 'गीता' के समान मनुष्य ओर मत्कुण के संवाद द्वारा समाज का खून चूसने वालों (भ्रष्टाचारियों) पर तीव्र कटाक्ष किया गया है।

9. मुकुन्द—

इसमें कविवर शिवप्रसाद ने सौ वसन्ततिलका छन्दों में भगवान विष्णु की स्तुति की है। काव्यारम्भ में विष्णु के आपातमस्तक सौन्दर्य का वर्णन करते हुए उनके बीस अवतारों की चर्चा की गई है। काव्य के अन्त में विविध दार्शनिक पक्षों से विष्णु-स्तुति की गई है।

10. आर्यार्द्धशतकम् —

पचास आर्या छन्दों में लिखित यह ग्रन्थ आधुनिक समाज एवं राजनीति की दुर्बलताओं पर तीखा कटाक्ष करता है।

11. इन्दिराभिलाष —

यह रथोद्धता छन्द में लिखित एक मुक्तक काव्य है। इस काव्य में कुल 64 पद्यो में लक्ष्मी (धन) के दुष्प्रभावों का वर्णन किया गया है।

12. वारूणीमहिमा—

मात्र 24 पद्यों में विरचित यह ग्रन्थ समाज में अनेकानेक बुराइयों को पैदा करने वाली मदिरा के दुष्प्रभावों को दर्शाता है।

13. कामकौतुकम्—

यह रथोद्धता छन्दोबद्ध मुक्तक काव्य है। इसमें लक्ष्मी एवं मदिरा के साथ से पैदा होन वाले काम विकारों का वर्णन है।

14. आत्मबोध काव्यम्—

यह काव्य रथोद्धता छन्द में लिखित है। इसमें मात्र 112 श्लोक हैं। इसमें लक्ष्मी आदि के दुष्प्रभावों से अप्रभावित रहने पर बल दिया गया है। यह काव्य देशभक्ति, परोपकार, नारी का सम्मान, परशोषण की निन्दा आदि भावों को विशेषता से प्रस्तुत करता है।

2.3.4.2 श्री शिवप्रसाद भारद्वाज के प्रकाशित नाट्य

1. मायापति—

यह एक एकांकी सामाजिक नाट्य है। इसमे कवि आजकल के नेताओं के चरित्र पर तीखा व्यंग्य करता है। यह सर्वथा नवीन शैली का नाट्य है, जिसमें प्रायः संवाद दूरभाष पर होते हैं। इसमें प्राचीन नाट्यों की तरह प्रस्तावना, भारतवाक्य नहीं है। यह नाट्य दृश्यों में विभाजित है। इसमें श्लोक तथा गीत भी अल्प मात्रा में हैं। गद्य की यहाँ प्रधानता है।

2. मेघदूतम् (नाट्य रूपान्तरण) —

आकाशवाणी के जालन्धर केन्द्र में प्रस्तुति हेतु कवि ने कालिदास के मेघदूतम् को ध्वनिरूपक के रूप में परिवर्तित किया है। इसकी प्रथम प्रस्तुति सन् 1982 में आकाशवाणी केन्द्र जालन्धर से हुई थी। इस ध्वनिरूपक में सम्वाद योजना हेतु कालिदास के पद्यों (मेघदूतम् के) साथ कवि ने स्वरचित पद्य भी लिखे हैं। संवाद गद्य-पद्यो दोनों में हैं। इसमें यक्ष, कुबेर, यक्षपत्नी और विद्युत इन चार पात्रों के द्वारा संवाद करते हुए मेघदूतम् को नाट्य रूप में प्रस्तुत किया गया है।

3. पुरोधसः स्वप्न—

यह एक सामाजिक प्रहसन है। इसमें प्राचीन प्रहसनों की तरह अश्लीलता का पुट न होकर शुद्ध हास्य पर बल दिया गया है। पुरोहितों की भोजन लोलुपता, आधुनिक भारत सरकार की तथाकथित धर्मनिरपेक्षता, अंग्रेजी भाषा के प्रति उनका प्रेम, आधुनिक नारी पर पश्चिमी सभ्यता का प्रभाव, आर्थिक लाभ हेतु सरकार द्वारा गोवध को प्रोत्साहित किया जाना आदि विषयों पर इस ग्रन्थ के माध्यम से तीखा कटाक्ष किया गया है जो हास्य उत्पन्न करने के साथ-साथ सामाजिक और राजनीतिक बुराइयों को भी इंगित करता हैं।

4. नारदस्य दिल्ली यात्रा—

यह रूपक का एक भेद भाण है। इसमें भारतीयों के अंग्रेजी प्रेम, पश्चिमी सभ्यता के प्रति आकर्षण, स्त्रियों की फैशन प्रियता तथा नागरिकों द्वारा उत्पन्न किए गए प्रदूषण आदि को विषय बनाया गया है। भारत का राष्ट्रपति अंग्रेजी के अलावा और कोई भाषा नहीं समझता इस पर कटाक्ष किया गया है। इसमें एकमात्र पात्र नारद है, जो ब्रह्मा के आदेश से भारत का वृतान्त लेने दिल्ली आता है। वह राष्ट्रपति से मिलने जाता है परन्तु उसका अंग्रेजी न जानना और उसकी

वेशभूषा इसमें बाधक बनते हैं तथा उसे कार्य पूरा किए बिना ही वापस लौटना पड़ता है। यही इस भाण की विषयवस्तु है।

5. स्वातन्त्र्य सुखम्—

यह प्रेक्षणिक श्रेणी का उपरूपक है। इसमें प्रधान पात्र दो तोते हैं तथा गौण पात्र एक महिला और उसकी पुत्री है। आजाद तोता पिजड़े में बन्द और उसी बन्दी जीवन में ही सुखी दूसरे तोते को स्वतन्त्र होने की प्रेरणा देता है। उसमें पुनः उड़ने की शक्ति का अभ्यास द्वारा संचार करता है। इस लघु कथा के माध्यम से स्वतंत्रता के सुख को दर्शाया गया है।

2.3.4.3 श्री शिवप्रसाद भारद्वाज की प्रकाशित कहानियाँ

1. न्यास—

यह कहानी अजमेर से प्रकाशित पत्रिका स्वरमंगला में सन् 1976 में प्रकाशित हुई थी। इसका कथानक बांग्लादेश के स्वतंत्रता युद्ध से सम्बद्ध है। इस कहानी में संवाद अत्यन्त अल्प है। आरम्भ में शैली कुछ जटिल है, किन्तु बाद में वह सरल प्रतीत होती है।

2. नास्तिक—

यह एक सामाजिक सरोकारों से सम्बद्ध कहानी है। इसमें एक व्यापारी के पुत्र का जीवन बचाने के लिए एक गरीब हरिजन रिक्शा चालक अपना खून देता है जिससे व्यापारी का पुत्र बच जाता है। इस घटना से व्यापारी और उसकी पत्नी के हृदय में सत्य, धर्म और मानव मात्र के प्रति प्रेम जाग्रत होने का वर्णन किया गया है।

3. पुत्रेषणा—

इसमें, जैसा कि प्रायः भारतीय समाज में देखा जाता है कि, माता-पिता पुत्र मोह के कारण अपनी ही सन्तान कन्याओं के प्रति कैसे निष्ठुर हो जाते हैं? इस बात का चित्रण किया गया है। बाद में वही पुत्र जब माता-पिता के प्रति निर्मोही हो जाता है और उन्हें कष्ट देता है तब उन्हें पुत्रमोह की असारता समझ में आती है। माता-पिता की दुर्दशा देख कन्याएं ही अन्त में उनकी देखभाल करती है। यह कहानी भारतीयों की पुरूष प्रधान मानसिकता पर आघात कर उन्हें पुत्र-पुत्री में समभाव अपनाए जाने का उपदेश देती है। इसकी भाषा अत्यन्त सरल एवं प्रभावशाली है।

4. शैलबाला—

साक्षात्कार की शैली में लिखी गई यह एक सामाजिक कहानी है। एक स्त्री ससुराल वालों के अत्याचारों का शिकार होते हुए भी दृढ़ रहकर समाज में अपना स्थान बना लेती है। उसकी ख्याति सुनकर पत्रकार उसका साक्षात्कार लेता है और उसकी सारी जीवन कथा को सुनता है। इस कहानी की भाषा अत्यन्त सरल-सहज एवं प्रभावपूर्ण है। इस कथा में पर्वतीय वातावरण और वहाँ के जनजीवन की झाँकी प्रस्तुत की गई है।

5. इयं सुमंगली वधू—

यह भी एक सामाजिक कहानी है। इसमें सुन्दर-सुशील बहू के साथ सास के दुर्व्यवहार को देखकर बाद में घर में आई छोटी बहू सह नहीं पाती और अपनी सास को सबक सिखाती है। इस कहानी में संवाद अधिक है किन्तु भाषा अत्यन्त सरल है।

6. कुमाता न भवति—

दिल्ली में प्रचलित घृणित देह व्यापार से संबंधित यह एक सामाजिक कहानी है। किस तरह तथाकथित समाज सेविका एक युवती को देह व्यापार के दलदल में धकेलना चाहती है और किस तरह वह युवती न केवल स्वयं बच निकलती है अपितु अपनी बहिन को भी इस घृणित धन्धे से बचाकर उसका विवाह योग्य युवक से कराती है। इन सब बातों का चित्रण इस कहानी में किया गया है। विषय की दृष्टि से कहानी में कहीं-कही चित्रित अश्लीलता क्षम्य है। इसकी भाषा प्रवाहमय तथा सरल है।

7. पुरूष द्वेषिणी—

इस कहानी में परिस्थितिवश एक राजकन्या अपने राज्य में पुरूषद्वेषिणी बन जाती है। वह अपने राज्य में पुरूषों का प्रवेश तक वर्जित कर देती है किन्तु एक विषम परिस्थिति ऐसी आती है कि अपने राज्य की रक्षा के लिए उसे पुरूषों की सहायता लेनी पड़ती है। अन्ततः उसकी समझ में आता है कि स्त्री-पुरूष का एक दूसरे के प्रति द्वेष व्यावहारिक नहीं है। ऐसे तो सृष्टि चक्र ही आगे नहीं बढ़ पाएगा। यह एक सामाजिक कहानी है जो समाज में स्त्री पुरूष के बीच तारतम्य की आवश्यकता को बताती है। यह एक लम्बी कहानी है, जिसके संवाद प्रभावशाली एवं स्वाभाविक है। यह कहानी शक्ति की गरिमा को व्यक्त करती है।

8. बालस्पश—

कश्मीर के आतंकवाद से संबंधित यह एक सामाजिक कथा है। इसमें हैदर नामक एक बालक उग्रवादियों का पीछा कर उनके हाथों अपहृत अपने पड़ोसी को अपनी जासूसी बुद्धि एवं युक्ति से छुड़ा लेता है। अतः पुरस्कार स्वरूप उसे राष्ट्रपति से बालस्पश (बालक जासूस) की उपाधि प्राप्त होती है। यह कहानी अत्यन्त सरल बालोपयोगी एवं प्रेरणादायक है।

9. कविदिग्दर्शिका—

इसमें संस्कृत में काव्य रचना करने की शिक्षा दी गई है। हिन्दी अनुवाद सहित सात संकेतों में क्रमशः काव्य प्रतिभा प्राप्ति के आवश्यक निर्देश, छन्दोबद्ध रचना का मार्ग निर्देश, सार्थक काव्य रचना का प्रकार, काव्य में चमत्कार लाने के साधन, अलंकार संयोजना, लाक्षणिक शब्द योजना, श्लेष सिद्धि तथा समस्यापूर्ति के प्रकार तथा अन्य आवश्यक निर्देश दिए गए हैं। पुस्तक में सरलतम प्रकार से काव्य-रचना के अभ्यास मार्ग को प्रशस्त किया गया है।

10. कालिदास गरिमा—

इस ग्रन्थ में श्री शिवप्रसाद भारद्वाज ने कालिदास के जन्म एवं कृतियों से संबंधित बारह शोधपूर्ण लेख लिखे हैं। यशःकाया से आज भी विद्यमान महाकवि कालिदास का जन्म कब और

कहाँ हुआ? इनका जीवन कहाँ-कहाँ व्यतीत हुआ? कालिदास की वर्णन शैली, शब्द विन्यास आदि उन्हें कहाँ का सिद्ध करते है ? मेघदूतम् काव्य क्या उन्हीं की जीवन घटना पर आधारित है? आदि विषयों को सप्रमाण पुष्ट कर भारद्वाज जी ने अपने मत की अभिव्यक्ति की है। सभी विषयों का सप्रमाण साक्ष्यों सहित वर्णन करके उन्होंने कालिदास की गरिमा को यथार्थता दी है। कालिदास के विषय में जो भ्रम समालोचक वर्ग में बना हुआ है, उसका सार्थक एवं सफल समाधान करने का प्रयास शिवप्रसाद भारद्वाज जी ने किया है। ग्रन्थ की भाषा सरल है। इस ग्रन्थ में शब्द विन्यास तथा भाषा शैली विषयानुगत तथा प्रसाद गुण से युक्त है।

उपर्युक्त रचनाओं के अतिरिक्त श्री शिवप्रसाद भारद्वाज ने सन् 1963-67 तक त्रैमासिक संस्कृत पत्रिका विश्वसंस्कृतम् का सम्पादन कार्य भी किया। कवि के द्वारा विरचित अधिकांश ग्रन्थों का प्रकाशन भी संस्कृत की पत्रिकाओं, यथा विश्वसंस्कृतम्, दूर्वासार, स्वरमंगला, हरिप्रभा (त्रैमासिक) तथा उड़ीसा से प्रकाशित वासन्ती आदि में हुआ है। इनके लिखे पाँच संस्कृत ध्वनि रूपकों का प्रसारण भी आकाशवाणी के विविध केन्द्रों से हो चुका है। अभी भी कवि के अनेक हस्तलिखित काव्य हैं, जो प्रकाश में नहीं आ सके हैं। इनके निर्देशन में लगभग बारह शोधार्थी पी-एच0डी0 कर चुके है। आज कवि और उनके ग्रन्थों पर अनेक शोधार्थी शोध कार्य भी कर रहे हैं।

अभ्यास प्रश्न

टिप्पणी

(क) लौहपुरूशावदानम महाकाव्य

(ख) शिवप्रसाद भारद्वाज की संस्कृत रचनाएँ

(ग) महावीर चरितम्

बहुविकल्पीय प्रश्न

यहाँ प्रत्येक वैकल्पिक प्रश्न के चार उत्तर दिए गए हैं, जिनमें से एक सही उत्तर है। उसमें से सही उत्तर को चुनिए -

1. श्री शिवप्रसाद भारद्वाज की वार्ताओं का प्रसारण आकाशवाणी के किस केन्द्र से हुआ है?

(क) अल्मोड़ा (ख) लखनऊ

(ग) दिल्ली (घ) नजीबाबाद

2. जैन धर्म के प्रवर्तक 'वर्धमान' पर लिखित इनका कौन सा खण्ड काव्य है?

(क) परषुरामचरितम् (ख) उत्तररामचरितम्

(ग) महावीर चरितम् (घ) हर्षचरितम्

3. शिवप्रसाद भारद्वाज का जन्म कब हुआ?

(क) सन् 1884 में (ख) सन् 1922 में

(ग) सन् 1925 में (घ) सन् 1928 में

4. शिवप्रसाद की प्रारंभिक शिक्षा कहाँ हुई?

(क) ऋषिकेश में (ख) पौड़ी में

(ग) हरिद्वार में (घ) श्रीनगर में

5. श्री शिवप्रसाद भारद्वाज के कितने रेडियो रूपक है? जिनका प्रसारण आकाशवाणी केन्द्रों से हो चुका है?

(क) चार (ख) पाँच

(ग) छः (घ) आठ

6. श्री शिवप्रसाद भारद्वाज के पिता का नाम क्या था?

(क) रामानन्द (ख) छिद्दाराम

(ग) हीरामणि (घ) लोकमणि

रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए।

1. शिवप्रसाद भारद्वाज ने शास्त्री एवं ..... की उपाधियाँ वाराणसी से प्राप्त की।
2. शिवप्रसाद भारद्वाज ने पी-एच0डी0 की उपाधि ..... से प्राप्त की।
3. शिवप्रसाद पंजाब विश्वविद्यालय से सन् ..... में रीडर के पद से सेवानिवृत्त हुए।
4. शिवप्रसाद भारद्वाज के पूर्वज ग्राम ..... पट्टी .....पौड़ी के रहने वाले थे।
5. शिवप्रसाद के पिता आजीविका हेतु ..... में बस गए थे।
6. शिवप्रसाद भारद्वाज ने डी.लिट. की उपाधि..... से प्राप्त की।

नोट: य़द्यपि यहाँ दिए गए प्रश्नों के उत्तर भी इकाई में दिए गए हैं तथापि आपके लिए हमारा सुझाव है कि आप स्वमूल्यांकन हेतु उनसे अपने स्तरों का मिलान करके देखें।

2.4 सारांश

गढ़वाल के 20 वीं सदी के महान साहित्यकार बहुमुखी प्रतिभा के धनी श्री शिवप्रसाद भारद्वाज की सारस्वत साधना उनके रचना संसार की विशालता से स्पष्ट है। उन्होंने लगभग 35 ग्रन्थों (जिनमें 30 संस्कृत भाषा में तथा 5 हिन्दी भाषा में है) की रचना की। इसके अलावा उन्होंने लगभग 50 शोध आलेख विभिन्न पत्र पत्रिकाओं द्वारा प्रकाशित किए।

श्री भारद्वाज ने संस्कृत साहित्य की विविध विधाओं पर काव्य रचना की। उन्होंने 'लौहपुरूशावदानम्' जैसा विशाल महाकाव्य लिखा वहीं दूसरी ओर लीक से हटकर शान्त रस प्रधान भारत सन्देश और महावीर चरितम् जैसे प्रशंसनीय खण्डकाव्य लिखकर अपनी अलग पहचान बनाई। अपने रेडियों रूपकों, व्याखान माला, सरल सामाजिक कथाओं, बालकथाओं द्वारा उन्होंने आधुनिक काल में संस्कृत के प्रचार-प्रसार में भी अपूर्व योगदान दिया। संस्कृत साहित्य को श्री भारद्वाज जी की देन अमूल्य है।

5.5 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

टिप्पणी

1. हेतु इकाई की उपखण्ड संख्या 5.3.4.1 का 'क' अंश देखें।
2. हेतु इकाई की उपखण्ड संख्या 5.3.4 के 1 से 27 तक के अंश को देखें।
3. हेतु इकाई की उपखण्ड संख्या 5.3.4.1 क 'ग' अंश को देखे।

बहुविकल्पीय

1. घ
2. ग
3. ख
4. ग
5. ख
6. ग

रिक्त स्थान पूर्ति

1. आचार्य
2. पंजाब विश्वविद्यालय
3. 1985
4. डांग, गगवाडस्यू
5. देहरादून
6. जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू

अतिलघुउत्तरीय प्रश्न

1. शिवप्रसाद भारद्वाज कुल कितनी संस्कृत रचनाएँ प्रकाशित हैं।
2. इनका 'पुरोधसः' स्वप्नः कैसा काव्य है?
3. शिवप्रसाद केकितने सामाजिक कथा संग्रह है?
4. शिवप्रसाद भारद्वाज द्वारा हिन्दी में लिखित कितने ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके है?
5. भारद्वाज जी द्वारा सम्पादित शब्दकोश का नाम क्या है?
6. भारद्वाज जी द्वारा रचित मुक्तक काव्य कितने है?

सत्य/असत्य बताइए

1. श्री शिवप्रसाद भारद्वाज श्रीनगर, के रहने वाले थे।
2. शिवप्रसाद का 'वारूणी महिमा 'ग्रन्थ सन् 1820 ई. मं प्रकाशित हुआ।
3. भारद्वाज जी का कालिदास गरिमा एक समीक्षा ग्रन्थ है।
4. 'नारदस्य दिल्ली यात्रा 'भारद्वाज जी का यह ग्रन्थ रूपक के नाटक भेद के अन्तर्गत आता है।
5. 'गुरूदक्षिणाः'भारद्वाज जी का यह ग्रन्थ प्रकाशित है।
6. भारद्वाज जी का 'मेघदूतम्' एक ध्वनिरूपक है।

7. देहरादून
8. जम्मू विश्वविद्यालय

अतिलघुउत्तरीय

1. पैतीस
2. सामाजिक प्रहसन
3. चार (04)
4. चार (04)
5. अशोक संस्कृत - हिन्दी-अंग्रेंजी शब्दाकोष
6. 3 तीन

सत्य/असत्य

1. असत्य
2. असत्य
3. सत्य
4. असत्य
5. सत्य
6. सत्य

2.6 सन्दर्भ ग्रन्थ/सहायक सामग्री

1. गढ़वाल की संस्कृत साहित्य को देन, डा0 प्रेमदत्त चमोली।
2. उत्तराखण्ड का इतिहास, बद्रीदत्त पाण्डे।

5.7 संदर्भ ग्रन्थ/सहायक सामग्री

1. गढ़वाल की संस्कृत साहित्य को देन, डा0 प्रेमदत्त चमोली।
2. उत्तराखण्ड का इतिहास, बद्रीदत्त पाण्डे।

2.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. श्री शिवप्रसाद भारद्वाज का जीवन परिचय दीजिए।
2. श्री शिवप्रसाद भारद्वाज के प्रकाशित काव्यों का परिचय
3. श्री शिवप्रसाद भारद्वाज के द्वारा लिखित कहानियों का परिचय दीजिए
4. श्री शिवप्रसाद भारद्वाज के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डालिए।

इकाई 3- उत्तराखण्ड के अन्य प्रमुख कवियों का परिचय

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 कुमाऊँ के अन्य प्रमुख कवियों का परिचय
  3.3.1 प.भगीरथ पाण्डेय
  3.3.2 प.लक्ष्मी पति पाण्डेय
  3.3.3 विश्वेश्वर पाण्डे
  3.3.4 तारा दत्त पन्त
  3.3.5 प.नितयानन्द पन्त 'पर्वतीय'
  3.3.6 मथुरा दत्त पाण्डेय
  3.3.7 जय दत्त उप्रेती
  3.3.8 महेश चन्द्र जोशी
3.4 गढ़वाल के अन्य प्रमुख कवियों का परिचय
  3.4.1 जगदीश प्रसाद सेमवाल
  3.4.2 राम कृष्ण शर्मा नौटियाल
  3.4.3 आचार्य बुद्धिबल्लभ
  3.4.4 आचार्य देवी प्रसाद त्रिपाठी
  3.4.5 आचार्य मदन मोहन जोशी
  3.4.6 चण्डी प्रसाद नैथाणी
3.5 सारांश
3.6 पारिभाषिक शब्दावली
3.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ/सहायक सामग्री
3.9 निबन्धात्मकप्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रिय शिक्षार्थियों !

इससे पूर्व कि इकाइयों में आपने उत्तराखण्ड संस्कृत साहित्य की परम्परा के बारे में विस्तार से जाना प्रस्तुत इकाई का शीर्षक 'उत्तराखण्ड के अन्य प्रमुख कवियों का परिचय' है। इस इकाई के अन्तर्गत आपको इस कालखण्ड के प्रमुख काव्यकारों के विषय में बताया जाएगा।

इस इकाई के द्वारा आप उत्तराखण्ड में एक काल विशेष अट्ठारहवीं शताब्दी से अब तक के काव्यकारों के विषय में संक्षिप्त परिचय एवं उनकी कृतियों के बारे में जानेंगे। इन दो-तीनसौ वर्षों के बीच उत्तराखण्ड के गढ़वाल एवं कुमाऊँ क्षेत्र में पैदा होकर संस्कृत साहित्य की श्रीवृद्धि में योगदान देने वाले काव्यकारों के बारे में आपको बताया जाएगा।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप—

- कुमाऊँ के अन्य प्रमुख काव्यकारों के विषय में जान सकेंगे।
- गढ़वाल के अन्य प्रमुख काव्यकारों के विषय में जान सकेंगे।
- उत्तराखण्ड संस्कृत साहित्य परम्परा से अवगत हो सकेंगे।

3.3 कुमाऊँ के अन्य प्रमुख कवियों का परिचय

3.3.1 पण्डित भगीरथ पाण्डेय—

सुप्रसिद्ध छन्दशास्त्रकार तथा 'वृत्तरत्नाकर' के लेखक केदार पाण्डे के वंश में ही भगीरथ पाण्डे का जन्म हुआ था। ये चन्द राजा जगत चन्द के राज्याश्रित कवि थे, जिनका शासनकाल सन् 1708 से 1720 ई0 मान्य है। अतः भगीरथ पाण्डे का समय भी अट्ठारहवी शताब्दी का पूर्वाद्ध निश्चित होता है।

भगीरथ पाण्डे संस्कृत के मूर्धन्य विद्वान थे। ये मुख्य रूप से टीकाकार के रूप में जाने जाते है। इन्होंने संस्कृत के अनेक प्राचीन काव्यों पर टीकाएँ लिखी है जिनका विवरण इस प्रकार है—

1. नैषधीयचरितम् टीका
2. रघुवंश टीका
3. शिशुपालवध टीका
4.तत्वदीपिका मेघदूतम् टीका
5. किरातार्जुनीयम् टीका
6. काव्यादर्श टीका
7. महिम्नस्तवकटीका

8. देवीमाहात्म्य टीका

3.3.2 पण्डित लक्ष्मीपति पाण्डे—

पण्डित लक्ष्मीपति का जन्म कुमाँऊ के अल्मोड़ा जिला अन्तर्गत पाटिया गाँव में हुआ था। ये भारद्वाज गोत्र के पाण्डे ब्राहमण थे। इनके पिता का नाम विश्वरूप पाण्डे तथा इन्के पूर्वज श्रीवल्लभ पाण्डे कन्नौज से यहाँ आए थे। लक्ष्मीपति चन्द शासनकाल में राजा ज्ञानचन्द्र (1698 से 1708 ई0) तथा जगत चन्द (1708 से 1720) के दरबार में संस्कृत सुकवि के रूप में प्रतिष्ठित थे। इस प्रकार लक्ष्मीपति का समय 18 वीं सदी का पूर्वार्ध सिद्व होता है। ऐसी मान्यता है कि ये संस्कृत के साथ-साथ उर्दू-अरबी फारसी के भी अच्छे ज्ञाता थे। इनके द्वारा संस्कृत भाषा में रचित काव्य ग्रन्थ इस प्रकार है-

1. फर्रूखशेयरचरितम्

2. अब्दुल्लाहचरितम्

3. यागीश्वरमाहात्म्य

1. फर्रूखशेयरचरितम्—

फर्रूखशेयरचरितम् एक ऐतिहासिक प्रबन्ध काव्य है। यह काव्य एक हजार आठ सौ सैतीस (1837) अनुष्टुप छन्दों में रचित है। इसमें मुगल बादशाह औरंगजेब की मृत्यु के बाद से लेकर रफीउज्जीत के राज्याभिषेक तक की घटनाओं का मर्मस्पर्शी चित्रण किया गया है। तत्कालीन मुगल शासन के वृत्तान्तों सें परिपूर्ण इस काव्य का केन्द्रबिन्दु मुगल बादशाह फर्रूखशेयर है। इस काव्य को कवि के द्वितीय काव्य अब्दुल्लाहचरितम् की पूर्वपीठिका माना जाता है।

2. अब्दुल्लाहचरितम्—

अब्दुल्लाहचरितम् कवि के फर्रूखशेयरचरितम् नामक प्रबन्धकाव्य का पूरक ग्रन्थ है। यह गद्य-पद्य मिश्रित एक ऐतिहासिक चम्पू काव्य है। एक हजार आठ सौ चार (1804) अनुच्छेदों में विभक्त इस ग्रन्थ में भी भाई हुसैन अली के शक्ति पराक्रम का वर्णन है, जिन्होंने मुहम्मदशाह को कारावास से छुड़ाकर बादशाह बनाया। इन दोनों भाइयों की बढ़ती हुई शक्ति को देखकर डरे हुए मुहम्मदशाह ने हुसैन अली को मरवा डाला। मुहम्मद शाह से बदला लेने के लिए अब्दुल्ला ने इब्राहीम को बादशाह घोषित कर मुहम्मदशाह पर आक्रमण कर दिया किन्तु वह अपने प्रयास में असफल रहा। इसी इतिवृत्त को लेकर कवि लक्ष्मीपति ने इस काव्य की रचना की है। इस काव्य में संस्कृत के अलावा अरबी-फारसी के शब्दों का भी प्रयोग देखने को मिलता है।

3. यागीश्वरमाहात्म्य— लक्ष्मीपति द्वारा रचित 'यागीश्वरमहात्म्य' नामक ग्रन्थ अप्रकाशित है, जबकि इनके पूर्व के दोनों ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके है। यागीश्वरमहात्म्य में दारूकावनस्थली के मध्य में स्थित यागेश्वर (जागेश्वर) के महात्म्य का चित्रण है।

3.3.3 विश्वेश्वर पाण्डे—

आचार्य विश्वेश्वर पाण्डे का समय अट्ठाहरवीं शताब्दी के मध्य भाग अनुमानित है। विश्वेश्वर अल्मोड़ा के निकट पाटिया गाँव के रहने वाले थे। इनके पिता का नाम लक्ष्मीधर पाण्डे था जो राजा बाजबहादुर चन्द की राजसभा के रत्न थे। मान्यता है कि लक्ष्मीधर पाण्डे ने पुत्र प्राप्ति की कामना से काशी में रहकर बाबा विश्वनाथ (शिव) की अनन्य आराधना की थी जिसके फलस्वरूप प्राप्त हुए पुत्र का नाम उन्होंने विश्वेश्वर रखा। इन्होंने मात्र 40 वर्ष की अवस्था में ही संस्कृत साहित्य की विभिन्न विधाओं पर अपनी लेखनी का कौशल दिखाया। इनके द्वारा रचित ग्रन्थों का विवरण इस प्रकार है-

1. सिद्धान्त सुधनिधि
2. दीधिति प्रवेश
3. तर्ककूतुहल
4. अलंकारकौस्तुभ
5. अलंकारमुक्तावली
6. अलंकारप्रदीप
7. रसचन्द्रिका
8. रसमंजरी टीका
9. कवीन्द्रकणीभरण
10. मन्दारमंजरी
11. नैषधीयचरितम् टीका
12. आर्यासप्रशती
13. काव्य तिलक
14. काव्यरत्न
15. रोमावलिशतक
16. वक्षोजशतक
17. होलिकाशतक
18. लक्ष्मीविलास
19. षड्ऋतुवर्णनम्
20. अभिरामराघव
21. रूक्मिणीपरिणय
22. श्रृंगारमंजरी सट्टक
23. नवमालिका नाटिका
24. अभिधार्थचिन्तामणि

25. अशौचीयदश श्लोकी वितृतिकी टीका

3.3.4 तारादत्त पन्त—

बीसवी शती के प्रख्यात विद्वान तारादत्त का जन्म पिथौरागढ़ जनपद के 'बरसायत' ग्राम में हुआ था। इनके पिता का नाम दुर्गादत्त तथा माता का नाम भागीरथी था। इन्होंने अपनी माता के नाम से ही प्रायः सभी टीकाएँ लिखी हैं। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। आगे की शिक्षा हेतु ये काशी चले गए। यही इन्होंने संस्कृत साहित्य, व्याकरण, दर्शन, मीमांसा आदि विविध शास्त्रों का अध्ययन किया। इन्होंने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से साहित्याचार्य एवं व्याकरणाचार्य की उपाधियाँ प्राप्त की। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से संबद्ध रणवीर संस्कृत विद्यालय में दीर्घकाल तक इन्होंने अध्यापन कार्य किया। काशी में बहुत समय तक निवास करने के बाद ये ऋषिकुल हरिद्वार तथा ऋषिकेश में भी विद्याभ्यास तथा विद्याध्ययन करते रहे। इनकी विविध रचनाओं को देखकर इनकी विद्वता का सहज अनुमान हो जाता है। इनकी कृतियाँ इस प्रकार हैं -

1. सूर्यचरित या ऋतुचरित महाकाव्य
2. गोलविद्या
3. गोलसूत्र
4. भारतवर्ष भूगोल (श्लोकोबद्ध)
5. आर्याप्रवाह (पण्डित गुरू परम्परा वर्णन)
6. दाशरथिभरतचरितनाटक
7. भारतोद्वार
8. इन्द्रियार्थमीमांसा (गद्यरचना)
9. सौवर (स्वरमीमांसा गद्यमय)
10. वर्णमालासूत्र (भाषा टीका सहित)
11. पा..चभौतिक (दर्शन ग्रन्थ)
12. संस्कृत भाषा में कूर्मांचल का इतिहास (गोरखा शासन तक)

इन मौलिक रचनाओं के अलावा तारादत्त पन्त ने विश्वेश्वर की मन्दारमञ्जरी पर 'कुसुमाख्या टीका', चरक संहिता, रसार्णवसंहिता, अष्टागहृदय, सारङ्गधर संहिता, भावप्रकाश, रसेन्द्रसारसंग्रह आदि ग्रन्थों पर 'भागीरथी' टिप्पणी (भाष्य) लिखी। इन्होंने स्कन्दपुराण के मानसखंण्ड का प्रतिसंस्कार एवं हिन्दी अनुवाद भी किया था। इसके अलावा 'गुमानी' कवि के 'ज्ञानभैषज्यमञ्जरी' तथा 'वल्लरी' एवं 'सुप्रभातम्' संस्कृत पत्रिकाओं का सम्पादन भी इन्होंने किया।

3.3.5 पण्डित नित्यानन्द पन्त 'पर्वतीय'

बीसवीं शती के साहित्यकार नित्यानन्द पन्त ने संस्कृत वाङ्मय की श्रीवृद्धि में अपना अपूर्व योगदान दिया। नित्यानन्द पन्त के पूर्वज अल्मोड़ा जनपद के 'तिलाड़ी' गाँव के रहने वाले थे। बाद में इनके परदादा काशी में ही बस गए थे। नित्यानन्द के पिता का नाम नामदेव था। मात्र 19 वर्ष की अवस्था में इन्होंने व्याकरणाचार्य की पदवी प्राप्त कर ली थी। इनके पाण्डित्य के

कारण इन्हें महामहोपाध्याय की उपाधि से समंलकृत किया गया था। ये व्याकरण, मीमांसा, कर्मकाण्ड तथा वेदान्त के अद्भुत विद्वान थे। इन्होंने देववाणी में निम्न ग्रन्थों की रचना की थी-

1. लघुशब्देन्दुशेखर की 'दीपक' टीका **2. संस्कार दीपक**
3.अन्व्यकर्मदीपक **4. वर्षकृव्यदीपक**
5. कातीयेष्टिदीपक **6. सापिण्ड्यदीपक**
7. परिशिष्ट दीपक

इसके अलावा नित्यानन्द के अनेक ग्रन्थों का वैदुष्यपूर्ण टीका सहित सम्पादन भी किया, जिनमें प्रमुख इस प्रकार हैं-

1. जैमिनीय सूत्रवृत्ति **2. मीमांसा परिभाषा**
3. परमलघुमंजूषा **4. काव्यायनश्रौतसूत्र (11अध्यायपर्यत्नों)**
5. वीरमित्रोदय (आरंभिक भाग)

अपने जीवन के अंतिम काल में इन्होंने कुमारिल भट्ट के प्रसिद्ध ग्रन्थ 'श्लोकवार्तिक' की व्याख्या लिखनी आरम्भ की थी किन्तु उनका यह कार्य पूर्ण नहीं हो सका। संस्कृत साहित्य को नित्यानन्द पन्त की देन अमूल्य है।

3.3.6 मथुरा दत्त पाण्डेय—

12 अगस्त 1928 को अल्मोडा जनपद में रानीखेत तहसील के कुमाल्ट नामक ग्राम में मथुरादत्त पाण्डेय का जन्म हुआ। इनके पिता का नाम पदमादत्त पाण्डेय था। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा गणनाथ विद्यापीठ, सवाली अल्मोड़ा से हुई उसके बाद हरिद्वार, अध्ययन करते रहे। सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी से शास्त्री परीक्षा उत्तीर्ण कर पंजाब विश्वविद्यालय से हिन्दी एवं संस्कृत में स्नातकोत्तर और पी.एच०डी० की उपाधियों प्राप्त की तत्पश्चात् लम्बे समय तक पंजाब विश्वविद्यालय से सम्बद्ध महाविद्यालयों में अध्यापन कार्य किया। सन् 1961 से 1965 तक त्रिभुवन विश्वविद्यालय, काठमाण्डू (नेपाल) में आपके द्वारा शिक्षण कार्य किया गया। आप एक वर्ष तक विश्वेश्वरानन्द वैदिक अनुसंधान सस्थान होशियारपुर में संयुक्त निदेशक के पद पर कार्यरत रहे। सन् 1986 में पंजाब के मोगा जनपद स्थित राजकीय महाविद्यालय धुदिके के प्राचार्य पद से अवकाश प्राप्त कर। होम्योपैथी की पढ़ाई की। होम्योपैथी में विशेष रूचि होने के कारण आप लोगों की निःस्वार्थ भाव से होम्योपैथिक चिकित्सा करते हैं।

मथुरादत्त पाण्डेय की रचनाओं का संक्षिप्त परिचय— आपने हिन्दी, संस्कृत एवं पंजाबी में लगभग 30 से अधीक रचनाओं का प्रकाशन किया हैं।

1. नेपाली और हिन्दी भक्ति-काव्य का तुलनात्मक अध्ययन (शोध प्रबन्ध) इस शोध प्रबन्ध का प्रकाशन सन् 1970 में भारतीय ग्रन्थ निकेतन, दिल्ली से हुआ।

2. पल्लव पचंकम् (मौलिक सस्कृत एकांकी सग्रह) इस एकांकी संग्रह का प्रकाशन 1981 में स्वयं पाण्डेय जी ने किया। इस एकांकी संग्रह में पाँच एकांकियों का संकलन किया गया है। जिनका नामोल्लेख इस प्रकार है-

1. कालिदासकाव्यसंभवम् 2. नारद मोहिनीयम् 3. राजदूतम्
4. शुद्धाज्यम् 5. कामोऽस्मि

3. द्यावापृथिवीयम् (मौलिक सस्कृत एकांकी सग्रह)- प्रस्तुत एकांकी संग्रह का प्रकाशन 1995 में पचकूला (हरियाणा) से किया गया। इस एकांकी संग्रह में भी पाँच एकांकियों का संकलन किया गया है। द्यावापृथिवीयम् नामक एकाकी संग्रह को पंजाब एवं उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कृत किया गया है।

4. कालगिरिः : (संस्कृत मौलिक एकांकी संग्रह)- यह पाँच एकांकियों का संग्रह है। इसका प्रकाशन कवि द्वारा सन् 2000 में किया गया।

5. दुर्गाचरितम् :- (श्री दुर्गासप्तशती का हिन्दी पद्य रूपान्तरण)

6. एकांक पंचदशी : (संस्कृत एकांकी संग्रह) - प्रस्तुत एकांकी संग्रह का प्रकाशन 2011 में मोतीलाल बनारसीदास से हुआ। उत्तराखण्ड सरकार एवं राष्ट्रपति द्वारा पुरस्कृत और भाषा विभाग पंजाब की ओर से शिरोमणि साहित्यकार पुरस्कार से इस एकांकी संग्रह को सम्मानित किया गया है।"

7. शक्ति विजयम् :- प्रस्तुत ग्रन्थ मोतीलाल बनारसीदास से 2011 में प्रकाशित हुआ।

8. देवीभक्तिगीतम्

9. गीति - मंजरी (संस्कृत गीत संग्रह)

उपर्युक्त रचनाओं के अतिरिक्त इन्होनें हिन्दी रचनाएँ भी लिखी, जो इस प्रकार है-

(1) उपन्यास :-प्रणय और परिणय (साप्ताहिक पत्र में धारावाहिक के रूप में प्रकाशित)

(2) कविता सग्रह :- 1. बिछलन 2. अहोरात्र 3. कुहराई गुफायें 4. रंग और रंग-भंग 5. अहल्या

(3) एकांकी :-

1. अविद्या (कल्याण) 2. असमंजस (सप्त सिन्धु)
3. घूस देना भी अपराध (विश्व-ज्योति) 4. नारदमोह-पद्य-नाटिका (जन साहित्य)
5. निरीक्षण (विश्वज्योति)

(4) कहानी :-

1. मरघट 2. अधिकार और प्यार 3. अपरिचिता

(5) निबन्ध :- नेपाली-हिन्दी साहित्य से सम्बन्धित इनके अधिकांश निबंध 'पंजाबी दुनियाँ 'स्मारिका' में प्रकाशित हुए हैं।

(6) होमियोपैथिक मैटैरिया मेडिका :-प्रस्तुत ग्रन्थ हिन्दी दोहों में निबद्ध सार-संग्रह है। इस ग्रन्थ का प्रमुख दोहा इस प्रकार है-

मथुरादत्त पाण्डेय को प्राप्त सम्मान— हिन्दी, संस्कृत एव पंजाबी साहित्य की अभिवृद्धि में महत्वपूर्ण योगदान के लिए आपको अनेक बार सम्मानित किया जा चुका है-

1. उत्तर-प्रदेश संस्कृत अकादमी द्वारा वर्ष 1995 में कालीदास पुरस्कार।
2. पजाब सरकार द्वारा वर्ष 1997 में कालीदास पुरस्कार।
3. सस्कृत भाषा में महत्वपूर्ण योगदान के लिए वर्ष 2003 में बलराज साहनी राष्ट्रीय पुरस्कार।
4. उत्तराखंड संस्कृत अकादमी हरिद्वार द्वारा वर्ष 2004 में सदानन्द डबराल सस्कृत सम्मान।
5. हरियाणा सस्कृत अकादमी द्वारा वर्ष 2012 में महर्षि वेदव्यास सम्मान।

3.3.7 डा. जयदत्त उप्रेती—

जयदत्त उप्रेती मूलतः अल्मोड़ा के समीप स्थित पंतौली ग्राम के निवासी हैं। इनका जन्म सन् 1933 ईसवी में हुआ था। बचपन से ही संस्कृत के प्रति इनका विशेष लगाव था। उत्तर प्रदेश सचिवालय में लिपिक पद पर कार्य करते हुए इन्होंने संस्कृत में बी0ए0 तथा एम0ए0 किया। कालान्तर में ये संस्कृत के अध्यापन कार्य से जुड़ गए। अनेक संस्कृत विद्यालयों में कार्य करते हुए इन्होंने सन् 1980 से 1995 तक संस्कृत विभाग कुमाऊँ विश्वविद्यालय के अल्मोड़ा परिसर में अपनी सेवाएं दी। इन्होंने दर्शन विषय पर 'सिद्धान्तशतकम्' नामक मौलिक ग्रन्थ की रचना की जो विद्वज्जनों के मध्य विशेष आदर को प्राप्त है। इन्होंने पाँच व्याकरण ग्रन्थ भी लिखें। वेदों में इन्द्र इनका पी-एच0डी0 उपाधि हेतु लिखा गया शोध ग्रन्थ है। आर्य समाज से गहराई से जुड़े श्री जयदत्त उप्रेती ने कुमाऊँ विश्वविद्यालय से सेवानिवृत्त होने के बाद अल्मोड़ा के निकट ज्योली गाँव में आवासीय संस्कृत विद्यालय भी खोला था, किन्तु धनाभाव तथा संस्कृत के प्रति लोगों की कम होती रूचि के कारण वह अधिक समय तक नहीं चल सका। आज भी ये निरन्तर सुभारती की सेवा में संलग्न हैं।

3.3.8 महेश चन्द्र जोशी—

महेश चन्द्र जोशी का जन्म 2 फरवरी 1939 ई० को चंपावत जनपद के पाटी के निकट ग्राम गूम (मधुवन) में हुआ । आपके पिता का नाम पं० लोकमणि जोशी तथा माता का नाम श्रीमती खीमा देवी था। आपने अपने पूर्वजों का उल्लेख 'प्रतिष्ठा मयूखः' नामक पुस्तक में इस प्रकार किया है-

बटवः सर्वतोऽभ्येत्य सर्वा विद्याः समभ्यसन् । विदुषां वंशजस्तेषां ज्योतिर्विद कमलापति ॥
अन्वर्थनामाऽभूच्चासौ प्रथितोदारकर्मधी । तस्याऽतिवल्लभः पुत्रो हीरावल्लभ इत्यभूत् ॥
भवानीदत्त नामा वै दायादस्तस्य चाभवत्। तस्यासन् पंचपुत्रास्तु परमानन्द संयुताः ॥
दुर्गादत्त-जगन्नाथ मणिराम नरोत्तमाः । परमानन्ददायादो लोके लोकमणिः श्रुतः ॥
तस्याऽपि षट्सुता जाताः सर्व सद्धर्मतत्पराः । तेषाचैवाग्रजश्चाहं काश्यां चात्र समागतः ॥

पं० कमलापति जोशी > पं० हीराबल्लभ जोशी> पं० परमानन्द जोशी > पं० लोकमणि जोशी > पं० भवानीदत्त जोशी > महेश चन्द्र जोशी।

आपके पिता लोकमणि जोशी सस्कृत अनुरागी थे। वह भविष्यवक्ता, नाडीज्ञान से व्याधि निदान में दक्ष तथा जडी बूटी चिकित्सा के जानकार थे।

महेश चन्द्र जोशी की शिक्षा-दीक्षा—आपकी प्राथमिक शिक्षा गाँव के विद्यालय से हुई पूर्व मध्यमा की परीक्षा श्री वाराही देवी संस्कृत महाविद्यालय देवीधुरा से उत्तीर्ण की। सर्वोदय इण्टर कॉलेज जयंती से हाईस्कूल तथा राजकीय इण्टर कॉलेज लोहाघाट से इण्टरमीडिएट की शिक्षा प्राप्त की। स्नातक स्तरीय शिक्षा सोबन सिंह जीना परिसर अल्मोडा से प्राप्त करने के पश्चात् आपने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से संस्कृत में स्नातकोत्तर तथा सर्पूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी से साहित्याचार्य की उपाधि प्राप्त की। बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय से प्राचीन भारतीय वाड्मय में दाम्पत्य जीवनः मर्यादा एवं यथार्थ शीर्षक पर पी.एच०डी० की उपाधि प्राप्त करने के पश्चात् आप इसी विश्वविद्यालय में प्राध्यापक पद पर नियुक्त हो गए। प्राचीन भारतीय इतिहास, सस्कृति एवं पुरातत्व विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी से 1999 में सेवानिवृत्त होकर संस्कृत की सेवा में संलग्न हैं।

महेश चन्द्र जोशी द्वारा लिखित साहित्य का परिचय—— आपके विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में शोध-पत्र प्रकाशित हैं। आपके ग्रन्थों का विवरण इस प्रकार है-

1. प्राचीन भारत में दाम्पत्य मार्यादा- प्रस्तुत ग्रंथ में सामाजिक जीवन का मूल आधार दाम्पत्य मर्यादा का विशद् विवेचन किया गया है। इस गन्थ का प्रकाशन सच्चिदानन्द प्रकाशन दिल्ली से 1988 ई० में हुआ। यह गन्थ अनेक विश्वविद्यालयों में एम०ए० प्राचीन इतिहास के पाठ्यक्रम में संदर्भ ग्रंथ के रूप में सम्मिलित है।
2. पुराण विषयानुक्रमणी: विधि एवं आचार प्रथम खण्ड एवं द्वितीय खण्ड का लेखन
3. गणेश पुराण :- विस्तृत भूमिका, संशोधित मूल पाठ, हिन्दी अनुवाद तथा परिशिष्ट भाग सहित।
4. गरूड़महापुराण- सपादन तथा प्रेतखण्ड का पाठ संशोधन सहित अनुवाद। चौखम्बाकृष्णदास अकादमी, वाराणसी से प्रकाशित।
5. प्रतिष्ठा मयूखः (सर्वदेव प्रतिष्ठापद्धति): विस्तृत भूमिका, अनुवाद परिशिष्ट सहित।

यह ग्रन्थ धर्मशास्त्र के प्रसिद्ध आचार्य नीलकण्ठ भट्ट द्वारा विरचित सर्वाधिक प्रामाणिक और उपजीव्य ग्रंथ है। इस ग्रंथ की देवप्रतिष्ठा विधि को जनसामान्य के लिए सरल बनाने के उद्देश्य से डॉ० जोशी ने प्रतिष्ठामयूखः ग्रंथ की सरल सुबोध सरोजिनी व्याख्या लिखी है। इस ग्रन्थ का प्रकाशन 1996 ई० में चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी से हुआ।

6. अयोध्या :- प्राचीन संस्कृत साहित्य पर आधारित अध्ययन।

7. शक्ति उपासना और वाराही वरिवस्या -प्रस्तुत ग्रन्ध में शक्ति उपासना का इतिहास, महत्व, वाराही के स्वरूप, कुमाऊँ में वाराही पूजा का विस्तार, वाराही-पूजन विधि का वर्णन किया है।
8. वाराही स्तोत्र (संस्कृत में मौलिक रचना)
9. प्रमुख देवतानां स्तुति-सग्रह (वाराही पूजा विधि-सहित)

महेश चन्द्र जोशी की प्रकाशनाधीन रचनाएँ—

1. संस्कृते संस्कृति
2. धर्मशास्त्र (स्मृति)

अप्रकाशित निबन्ध- सस्कृत निबंधमंजरी, पुराण परिचय, पौराणिक श्राद्ध विज्ञान, सांस्कृतिक इतिहास के निर्माण हेतु पुराणों के अध्ययन की आवश्यकता। इसके अतिरिक्त आपने अनेक सस्कृत कविताएँ भी लिखीं हैं।

महेश चन्द्र जोशी को प्राप्त पुरस्कार और सम्मान—

1. 'प्राचीन भारत में दाम्पत्य मर्यादा' वर्ष 1990 में भारतीय सस्कृति को उजागर करने वाले सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ के सम्मान से काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के तत्कालीन कुलाधिपति (चांसलर) भूतपूर्व काशी नरेश स्वा० डॉ० विभूतिनारायण सिंहजू के हाथों सम्मानित।
2. गणेश पुराण के सम्पादन एवं अनुवाद के लिए हल्द्वानी, उत्तराखंड में सम्मानित।

3.4 गढ़वाल के अन्य प्रमुख कवियों का परिचय

3.4.1 जगदीश प्रसाद सेमवाल का परिचय—

जगदीश प्रसाद सेमवाल की प्रारम्भिक अध्ययन के पश्चात् 16 सितम्बर 1978 को विश्वेश्वरानन्द विश्वबन्धु भारत भारती अनुशीलन संस्थान पंजाब वि०वि० साधु आश्रम होश्यारपुर में प्रवाचक के पद पर नियुक्त हुए। क्रमशः सेवारत एवं लेखन-साधना के पथ पर अप्रतिम प्रतिभा के साथ आगे बढ़ते हुए उक्त संस्था में 1998 ई० में प्रोफेसर के पद पर आसीन हुए। कार्य दक्षता, नैसर्गिक प्रतिभा एवं अध्ययन-अध्यापन के प्रति समर्पण के कारण उक्त संस्था में 23 जून 2004 को चेयरमैन का पद सुशोभित किया। इस पद पर सफलता पूर्वक कार्य करते हुए संस्था परिवार का अपार स्नेह एवं सम्मान प्राप्त कर, 62 वर्ष की अवस्था में 31 दिसम्बर 2004 को विश्वविद्यालय की सेवाओं से विश्राम लिया।

चेयरमैनशिप् की कालावधि में "राष्ट्रिय मिशन फार मैनस्क्रिप्ट" (एन०आर०सी०) भारत सरकार का समन्वयक (कोआर्डिनेटर) का कार्य भार ग्रहण करते रहे। शिक्षण काल में आपने अनेक शोध पत्र लिखे। पत्र-पत्रिकाओं में जो प्रकाशित भी होते रहे। आप वैयाकरणी हैं। व्याकरण के उच्चकोटि के विद्वान् हैं। सेवानिवृत्ति के बाद स्वाध्याय एवं लेखन कार्य, सामाजिक कार्यों में ससम्मान संलग्न वस्तुतः आपका व्यक्तित्व बहुआयाम परक है। जहाँ आप व्याकरण शास्त्र के प्रख्यात वैयाकरणी हैं, वहीं आपकी साहित्य, दर्शन, वेदान्त, ज्योतिष, कर्मकाण्ड में भी

समान गति है। गुरुमुखी भाषा में दक्ष हैं। नानक देव प्रभृति विद्वानों के ग्रन्थों का संस्कृत में अनुवाद इसी का फल है।

वंश परिचय—

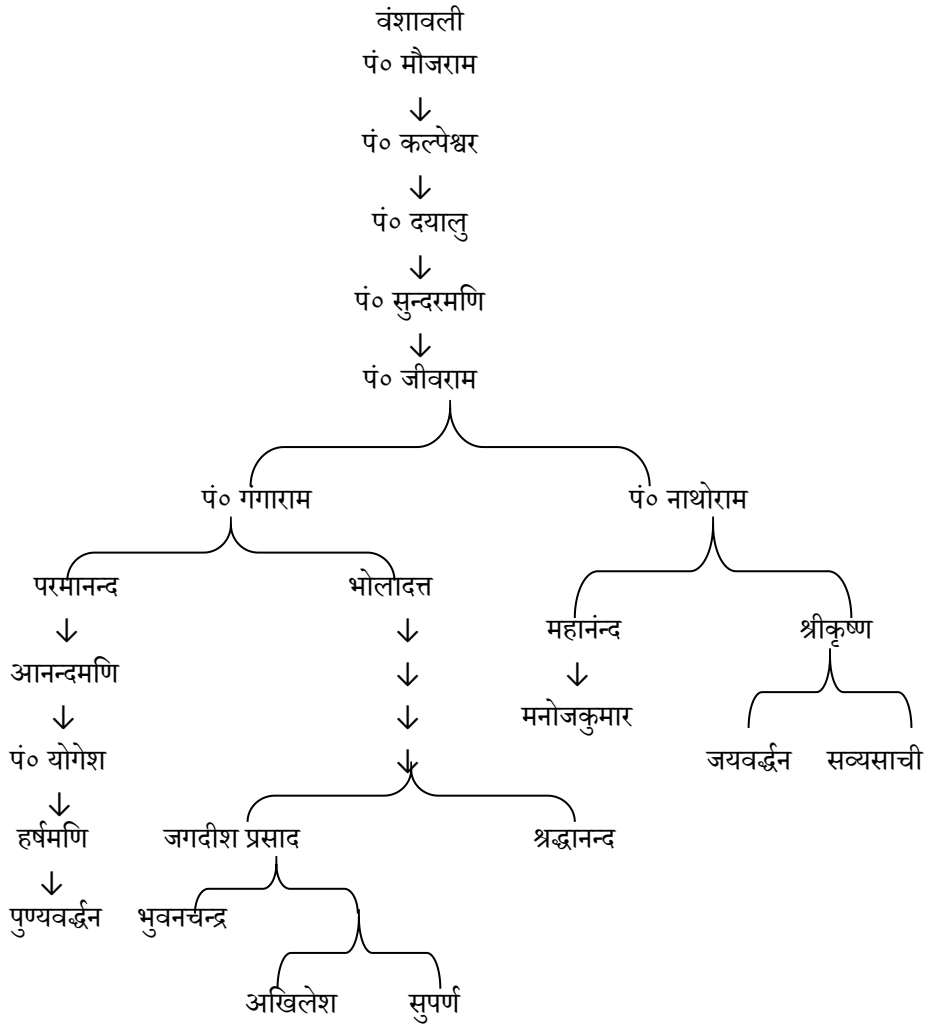

आपका वंश सेमवाल वंश का है। परम्परागत सरस्वती के वरद पुत्र रहे हैं। कालीमठ की सिद्धपीठ भगवती काली का उपासक, कर्मकाण्ड एवं ज्योतिष के विद्वानों में अग्रगण्य रहा एवं है। श्रीकृष्ण सेमवाल, जो आपके चाचाजी हैं, संस्कृत जगत् के एवं विभिन्न सम्मानों से सम्मानित उच्चकोटि के लेखक एवं कवि हैं। प्रकाण्ड विद्वान् डॉ० जगदीश प्रसाद सेमवाल ने अनेक शतक, स्तोत्र, मुक्तक, प्रबन्ध काव्य लिखे हैं। जिनमें से कुछ का संक्षिप्त उल्लेख एवं वर्णन दिया जा रहा है। आपका रहन-सहन साधारण एवं उच्च विचार सामाजिक पद-प्रतिष्ठा का द्योतक है। "सेवासुधारस महो नितरां पिव त्वम्" आपके जीवन का लक्ष्य बना हुआ है।

डॉ० जगदीश प्रसाद सेमवाल का लिखित साहित्य- (प्रकाशित पुस्तकें)—

१. इन्दु विलास, २. श्री दुर्गा स्त्रोत्रम्, ३. शिवस्तुति, ४. श्री यक्षराज स्तोत्रम्, ५. शैलपुत्री-शतकम्, ६. वसन्त विलास, ७. मेघ विलास, ८. हिमगिरि विलास, ६. विडम्बना विलास, १०. भानूदय विलास, ११. प्रभा विलास, १२. जयति जयपुर श्री, १३. वेदान्त कारिका, १४. योगानुशासन-प्रकाश, १५. सुरभारती क्रन्दनम्,

डॉ० जगदीश प्रसाद सेमवाल का अप्रकाशित साहित्य—

१. चण्डी दी वार, २. जपु जी साहेब, ३. गुरुनानक देव चरितम, ४. गुरु नानकदेव सहस्रनामावली ५. शिव सहस्र नामावली। इसके अतिरिक्त कुछ अपूर्ण साहित्य भी हैं।

डॉ० जगदीश प्रसाद सेमवाल द्वारा लिखित साहित्य का परिचय—

1. इन्दु-विलास—

इन्दुविलास एक शतक-काव्य है। इसमें चन्द्रोदय एवं चान्दनी रात का नैसर्गिक वर्णन किया गया है। चन्द्रमा का भव्य सौन्दर्य 'वियोगिनी' छन्द में आबद्ध है। यह 102 पद्यों में हैं। चन्द्रमा की विविध कलाओं का वर्णन प्रसिद्ध अलंकारों में स्वतः प्रस्फुटित है। भाषा सरल एवं सुगम्य है। वियोगिनी छन्द आपका प्रिय है। भाषा में प्रवाह एवं शैली प्रसाद एवं माधुर्य गुणों से संयुक्त है। कविकल्पना द्रष्टव्य है-जिस व्यक्ति ने पवित्र चन्द्रमा की किरणों से संयुक्त परम उत्तुङ्ग हिमालय पर्वत के शिखा का कभी भी अवलोकन नहीं किया है, तो उसके जन्म लेने का फल ही क्या ? अर्थात् उसका जन्म तो निरर्थक है। शशि किरणों की अनुपम छटा तो उत्तम हिममयी शिखर में देखी जा सकती है—

किमु तस्य फलं हि जन्मनो, यदि चन्द्रांशुभिरञ्चितः शुचिः॥
नतु येन कदापि वीक्षितः परमोतुकः हिमाद्रिशेखरः ॥

काव्य का सौष्ठव सर्वत्र परिलक्षित है। कल्पनायें यथार्थता परक हैं। अन्योक्ति का उदाहरण द्रष्टव्य हैं-

प्रतिबोधय चन्द्रः चन्द्रिकां किमसौ याति गृहं गृहं निशि।
अधुना तु दधाति शैशवं परतः सा तरुणी भविष्यति॥

2. श्री दुर्गास्तोत्रम्—

इसमें 51 पद्य हैं। मन्दाक्रान्ता छन्द है। भक्तिभावना से परिपूर्ण है। नवीनता से ओत-प्रोत है। भाषा सरल एवं कवि की भक्तिभावना की परिचायक है।

3. शिवस्तुति—

शिवस्तुति 51 पद्यों से संयुक्त है। शार्दूलविक्रीदितम् छन्द से आबद्ध है। भक्ति काव्य है। विविध अलंकारों का प्रयोग है। भाषा सरल एवं सुगम्य है।

4. श्रीयक्षराज स्तोत्रम्—

इसमें 20 पद्य हैं। वसन्ततिलका छन्द है। भक्तिभावना संयुक्त है। स्थानीय देवता की स्तुति है। यक्षराज को लोकभाषा में 'जाखराजा' कहते हैं। यक्षराज से प्रार्थना की जा रही है—

गौरीश्वरप्रियसखः करुणैकसिन्धुर्दाता च कल्पविटपादपि भूरिः देवः ।
निःशेषकल्मषहरः शरणागतस्य यक्षेश्वरो मुद्रहो मम दक्षिणः स्यात्॥

5. शैलपुत्री शतकम्—

इसमें शैलपुत्री पार्वती के विविध स्वरूपों का वर्णन स्तुति परक है। वसन्ततिलका छन्द सम्पूर्ण शतक में है। कवि की भक्तिभावना इसमें स्फुटित है। भक्तिरस के साथ विविध अलंकारों का समावेश है।

6. वसन्त विलास—

वसन्त ऋतु का वर्णन सौ श्लोकों में किया गया है। छन्द भी 'वसन्ततिलका' है। भाषा सरल, सुबोध है। वसन्त ऋतु के अवसर पर प्रकृति के विविध स्वरूपों को विविधात्मक शैली में में प्रस्तुत किया है। अलंकारों की स्वाभाविकता परिलक्षित है। श्रृंगार रस के साथ प्रसंगानुसार अन्य रसों का भी सायुज्य है।

7. मेघ विलास—

यह भी शतक है। इसमें वर्षा ऋतु का वर्णन है। वर्षाकाल में प्रकृति में होने वाले परिवर्तनों को अत्यन्त सूक्ष्म दृष्टि से देखकर कवि ने वसन्ततिलका छन्द में चित्रित किया है। रस एवं अलंकारों का प्रसंगानुसार उपयोग है।

8. हिमगिरि—

विलास-यह शतक है। उपजाति-वृत्त में आबद्ध है। हिमालय की ऊँची-ऊँची चोटियों एवं प्रान्तभागों का मार्मिक एवं स्वाभाविक चित्रण है। प्रकृति की नैसर्गिता स्पष्ट है। ग्रन्थ का प्रथम श्लोक ही समग्र ग्रन्थ की शैली का आभास कराता है—

हिमावृता यद्यपि सन्त्यनेके, देशेष्वनेकेषु महामहीध्राः ।
हिमालयः किन्तु महीधराणां विराजते भारत एव राजा॥

9. विडम्बना विलास—

यह शतक काव्य है। उपजाति छन्द है। इसमें डॉ० जगदीश सेमवाल ने लोक-पीड़ाओं को प्रतीकों के रूप में वर्णन किया है। ध्वन्यात्मक होने के कारण यह उत्तम काव्य की कोटि में आता है। प्रायः समस्त पद मुक्तक हैं। सांसारिक विडम्बनाओं को प्रसाद एवं माधुर्य गुण स्वतः कविता के रूप में प्रस्फुटित हो रहा है। द्रष्टव्य है।

अकारणं रोदिषि रे! किमर्थं न रोदिमि त्वाकृतिरेव सेत्थम्।
क्षमस्व तस्मात् ममापराधं दोषो न ते दैवविडम्बनेयम्॥

अर्थात्-रोते क्यों हो? कि स्वरूप ही ऐसा है। वक्ता कहता है, तब तो मेरे अपराध को क्षमा करो। फिर श्रोता कहता है, इसमें आपका कोई दोष नहीं है, मुझे भाग्य ने ऐसा ही बना रखा है। आत्मव्यथा का विचित्र प्रतिपादन प्रस्तुत है—

गर्भे कथञ्चिद् य उदृढ एव दुःखेऽपि पश्चात्परिपालितश्च ।

विस्फार्य मां नेत्रयुगं पुरस्तात् स तर्जयत्यद्य विडम्बनेयम्॥
किं किं न संकल्प्यममात्मभावात् सम्पोषितो निर्धनया य एष।
स एव मह्यं विगणय्य सर्वं दुह्यत्यहो ! भूरि विडम्बनेयम्॥

काव्य में भाषा-भाव-रस का सम्मिश्रण है। प्रसंगानुसार अलंकारों का प्रयोग स्वतः है। "वाक्यं रसात्मकं काव्यम्" के सिद्धान्त को काव्य चरितार्थ कर रहा है।

10. भानूदय-विलास—

इसमें 100 पद्य हैं। वसन्ततिलका छन्द है। सूर्योदय का चित्रण है। सूर्योदय के समय चराचर प्रकृति में होने वाले परिवर्तन को प्रवाहमयी भाषा में काव्यगत विशेषताओं के साथ मण्डित करते हुए वर्णन किया है। प्रकृति का स्वाभाविक चित्रण है।

11. प्रभा विलास—

यह भी शतक है। स्रग्विणी छन्द है। इसके प्रत्येक श्लोक का अन्तिम पद 'प्रभा' है। इस तरह यह समस्या पूर्ति विधा के अन्तर्गत आता है। काव्य में विविध स्वरूपों एवं भावों का चित्रण है। प्रायः इसमें देवताओं से लेकर ग्राम बालाओं, कृषकों, सैनिकों आदि को प्रतीक के रूप में मानकर समस्या पूर्ति की गई है, जो शास्त्रीय दृष्टि से उच्चकोटि की है। यथा—

जाह्नवीशीकारम्भः पवित्रीकृते ग्रामगेहे प्रसन्नाननां भृशम्।
शाकवाटी-भुवः सन्निधौ प्राङ्गणे क्रीड़तां राजते बालकानां प्रभा॥

गाँव के प्राङ्गण में खेलते हुए बच्चे की प्रभा का स्वाभावोक्ति के रूप में वर्णन है। भाषा प्रवाह पूर्ण एवं शैली प्रसादगुण विशिष्ट है।

12. जयति जयपुर श्री—

शतक काव्य परम्परा के अनुरूप इस ग्रन्थ को 'उपजाति छन्द' में लिखा गया है। राजस्थान की राजधानी जयपुर के प्रमुख दर्शनीय स्थलों, महलों, भूखण्डों, वाटिकाओं आदि का रमणीय पद्यों में वर्णन है। जयपुर नगर में प्राचीन राजपरिवारों के अस्वालय, वस्त्रालय, शस्त्रालय, चित्र-विचित्र भवन, विद्याशालाओं प्रभृति विषयों का सुन्दर, सरल भाषा में वर्णन ऐतिहासिक स्वरूप को भी व्यक्त कर रहा है। जयपुर नगर के ऐश्वर्य स्वरूप का वर्णन द्रष्टव्य है—

स्तम्भेषु चामीकरसन्निभेषु प्रासादमाला बितता विशाला।
तलैर्महारत्नमयै र्महार्हैर् ब्रूते समृद्धिं जयपत्तनस्य ॥

13. वेदान्त कारिका—

अनुष्टुप् छन्दोबद्ध है। सात सौ से अधिक श्लोक हैं। भगवान् वेदव्यास विरचित "ब्रह्मसूत्र" (वेदान्त दर्शन) के चारों अध्यायों के सूत्रों का "कारिकामयी" व्याख्यान है। यद्यपि यह ब्रह्मसूत्र का भाष्य है, किन्तु भाष्य श्लोकबद्ध है। यही इसकी विशेषता है। जिसको वेदान्त दर्शन के सूत्रों का गूढ आशय सरल संस्कृत कारिकाओं में प्रस्तुत किया है, यथा- "अथातो ब्रह्म जिज्ञासा" का अर्थ ब्रह्मसूत्र १/१/१

प्राक्संस्कारवशाद् यद् वा नित्यादीनां निषेवणात्।
नितान्तनिर्मलस्वान्तः ब्रह्म जिज्ञासते बुधः ॥
श्लोक बद्ध अर्थ संस्कृत जगत् में नव विधि का द्योतक है।

14. योगानुशासन प्रकाश —

इस ग्रन्थ में महर्षि पतञ्जलि के योगानुशासन के चारों पादों के सभी सूत्रों को कारिकाओं में प्रस्तुत किया है।

15. सुभारती क्रन्दनम्—

यह एकांकी नाटक है। इसमें सुरभारती (संस्कृत) को नायिका के रूप में प्रस्तुत किया गया है। वह अपनी वर्तमान दीन-हीन दशा पर रोती है। नारद जी का आगमन होता है और इसे समृद्ध होने का आश्वासन देते हैं। -

डॉ० जगदीश प्रसाद सेमवाल की कुछ अप्रकाशित रचनाओं का परिचय—

1. चण्डी दी वार—

इसके मूल लेखक तो "श्री गुरु गोविन्द सिंह" हैं, डॉ० सेमवाल ने अनुष्टुप् छन्द में इसका संस्कृत में अनुवाद किया है।

2. जपु जी साहेब—

इसका भी छायानुवाद संस्कृत में किया गया है। जो 'ग्रन्य साहब' का प्रारम्भिक अंश है।

3. गुरु नानक देव चरितम्—

"महाकाव्य है" संस्कृत के विभिन्न छन्दों में वर्णित महाकाव्य लक्षणान्वित है। इसमें 25 सर्ग हैं। यह अभी अपूर्ण है।

4. गुरु नानकदेव सहस्त्र नामावली—

यह कृति अनुष्टुप् छन्दोबद्ध है, गुरु नानक देव के सहस्र नामों का उल्लेख संस्कृत में है। यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण एवं गरिमामय है।

5. शिव सहस्त्र नामावली—

महाभारत अनुशासन पर्व के आधार पर शिवजी के एक हजार आठ नामों का एक हजार आठ श्लोक अनुष्टुप् छन्द में व्याकरण एवं निरुक्त के दिशानुसार निर्वचन प्रस्तुत किया है।

3.4.2 राम कृष्ण शर्मा नौटियाल—

राम कृष्ण शर्मा नौटियाल का परिचय—

इनका जन्म-पौड़ी गढ़वाल के अन्तर्गत ऐतिहासिक 'मज्यूर' नामक ग्राम पट्टी-चोपड़ा, विकास क्षेत्र पोखरी के अन्तर्गत है। उसमें नौटियाल वंशी ब्राह्मणों का निवास, वंश परम्परा से चला आ रहा है। इसी ग्राम में पं० शिवराम शास्त्री थे, जो काशी महाशय के प्रबुद्ध शिष्य थे। पं० शिवराम प्रवर वैयाकरणी एवं नव नैयायकी थे। इनकी विद्या से प्रभावित पं० मदन मोहन

मालवीय ने उन्हें, महाराजा होल्कर इन्दौर के राजपण्डित के रूप में नियुक्त किया, बाद में इन्हें वहाँ के संस्कृत महाविद्यालय के प्रधानाचार्य के पद पर नियुक्त कर दिया था। पं० शिवराम शास्त्री के दो पुत्र हुए बड़े रामकृष्ण और छोटे घनश्याम । सुसंस्कृत परिवार में जन्म लेकर, इनका नाम भी श्रीकृष्णमय गमय बना दिया। वे तो त्रिकालज्ञ थे। रामकृष्ण का जन्म 15 मई 1936 को ग्रीष्मकाल की पूर्व सन्ध्या में हुआ था। जहाँ मातृ-पितृ संस्कारों का प्रभाव रामकृष्ण पर पड़ा, वहीं ऋतु की दीव्यता की दिव्यता से प्रभावित होते गये और संस्कृत एवं आचार-विचार की दीक्षा इन्हें पितृ-मातृ परम्परा से प्राप्त हुई।

राम कृष्ण शर्मा नौटियाल का अध्ययन क्षेत्र—

इनकी प्रारम्भिक शिक्षा, हंसेश्वर महादेव संस्कृत विद्यालय चोपड़ा कोट में हुई। जिसमें यजुर्वेद का पाठाभ्यास, शब्द-धातु-रूपावली, समासचक्र, अमरकोश के साथ लघुकौमुदी का अध्ययन किया। फिर श्री रघुनाथ संस्कृत महाविद्यालय चन्दौसी मुरादाबाद में जाकर क्रमशः शास्त्री (अंग्रेजी सहित) तथा आचार्य (साहित्य) डॉ०- सम्पूर्णानन्द स०वि०वि० वाराणसी से उत्तीर्ण की, साथ में एम०ए० (संस्कृत) की उपाधि आगरा वि०वि० आगरा से प्राप्त की। उसके बाद विविध ग्रन्थों का स्वाध्याय निरन्तर चलता रहा, जिससे उनका बौद्धिक विकास होता रहा।

शिक्षा ग्रहण के पश्चात्-श्री रघुनाथ सं०म०वि० चन्दौसी, सुन्दर लाल इ० का रामपुर (उ०प्र०) तथा शिक्षा निदेशालय दिल्ली के अधीनस्थ अनेक उ०मा० विद्यालयों में संस्कृत अध्यापन कार्य किया और रमा स०म० रामपुर एवं आदर्श संस्कृत म०वि० आर्यनगर अलीगढ़ में प्राचार्य के पद को सुशोभित किया। प्रशासनात्मक-शैक्षिक परामर्शात्मक स्तर संघ लोकसेवा आयोग के द्वारा चयनित हुए, फलतः मानव संसाधन विकास मन्त्रालय, भारत सरकार, शास्त्री भवन, नई दिल्ली में सहायक-शिक्षा अधिकारी, संस्कृत-शिक्षा अधिकारी, सं० सहायक-शिक्षा सलाहकार (क्लासिकल लेंग्वेजेज) एवं सदस्य-सचिव, सेण्ट्रल संस्कृत बोर्ड, के रूप में भारत सरकार द्वारा संचालित योजनाओं का संचालन-सहयोग किया।

राम कृष्ण शर्मा नौटियाल की कृत्तियाँ—

संस्कृत भाषा में प्रकाशित ग्रन्थ—

1. बांग्लादेशोदयम्, 2. विडम्बना, 3. प्रणयविच्छेदः, 4.कण्वाश्रमः। ये चारों नाटक हैं, जिनका मञ्चन अनेक संस्थाओं द्वारा हो गया एवं पुरस्कृत हो चुके हैं।

हिन्दी भाषा में प्रकाशित ग्रन्थ—

1. संस्कृत एवं अभिनव भारत, 2. उल्लसिनी, 3. पारस्कर गृह्यसूत्र पर मन्त्रभाष्य और अर्थ भास्कर टीकाओं का सम्पादन-प्रकाशन। 4. मज्यूर ग्राम का इतिहास ।

अप्रकाशित संस्कृत कृतियां— पांच हैं। इनमें "अभिनव भारत-चम्पू" काव्य भी है। संस्कृत-हिन्दी-अंग्रेजी में आपके अनेक शोधात्मक लेख प्रकाशित हैं। आपका जीवन सरल, छल-कपट से दूर, साधारण है। विनम्रता, विद्वत्ता, परोपकारिता, दयालुता, नैसर्गिक प्रतिभा, हिन्दी-संस्कृत-

अंग्रेजी में समानाधिकारिता प्रभृति गुण आपके जीवन के अभिन्न मित्र हैं। वस्तुतः डा० रामकृष्ण शर्मा का जीवन एक संस्था तथा बहु आयामी है। तापसी जीवन ही जीवन का आधार बन चुका है।

राम कृष्ण शर्मा नौटियाल की वंशपरम्परा —

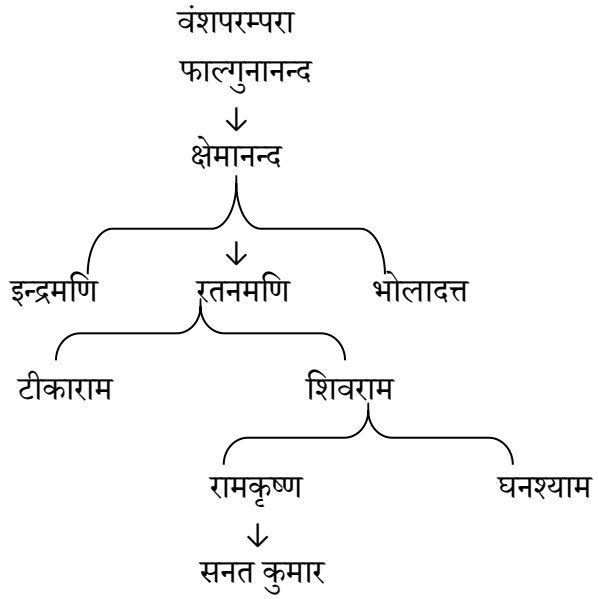

राम कृष्ण शर्मा नौटियाल द्वारा लिखित साहित्य का परिचय—

"बाङ्गलादेशोदयम्" (नाटकम्)—

ऐतिहासिक एवं सामाजिक घटनाओं का प्रतिपादक, संस्कृत-साहित्य की नवीनता का सूचक "बाङ्गलादेशोदयम्" नामक नाटक अभिनय-जगत् की अनुपम कृति है। जिसमें दश-अङ्कों के माध्यम से बंगला देश के उदय की परिस्थिति एवं भारतीय सैनिकों के शौर्य की अनुपम गाथा का चित्रण है, इस नाटक के लेखक संस्कृत, हिन्दी और अंग्रेजी भाषा में हैं। बाङ्गलादेशोदयम् का उदय एक आकस्मिक घटनामात्र न होकर मानवीय धारणाओं में परिष्कार का एक प्रत्यक्ष सोपान है। यह कृति ऐतिहासिक होते हुए भी सम-सामयिक होने के कारण विशेष प्रभावशाली हो गई है। कथानक रोचक एवं व्यावहारिक है। यह दस अंकों में विभक्त है।

"बाङ्गलादेशोदयम्" का कथानक—

3 दिसम्बर 1971 ई० को पाकिस्तान के तत्कालीन शासकों ने अपनी आन्तरिक व्यवस्था में असफलता के कारण तथा अन्तर्राष्ट्रीय कूटनीति के जाल में फंसकर भारत पर आक्रमण कर दिया। यद्यपि भारत युद्ध में संलिप्त नहीं होना चाहता था, तथापि भारत ने 20-21 दिन युद्ध करके आक्रमक देश को दो भागों में बांट दिया यह घटना अनेक दृष्टिकोण से भारत के अनुपम शौर्य का प्रतीक बन गई।

इस युद्ध में पाकिस्तान के 94 हजार युद्ध सैनिकों को ढाका में बन्दी बना डालना तथा जीवन और मृत्यु में से किसी एक को चुनने का अवसर प्रदान किया। अन्त में पाकिस्तानी सेना को भारतीय सेना ने तहस-नहस करके इन 94 हजार बन्धक युद्ध सैनिकों को जीवन-दान दे दिया। कुरान शरीफ के नाम पर बंगालियों को केवल गरीब बनाये रखना, पञ्जाब के मुस्लिमों को बहुत कीमत चुकानी पड़ी, क्योंकि उन्हें उन्हीं से हार खानी पड़ी।

"बाङ्गलादेशोदयम्" के अंकों का परिचय—

प्रथम अङ्क में—

पूर्वी पाकिस्तान के लोग प्रिय नेता मुजीबुर्रहमान तथा कुछ अन्य लोगों के द्वारा मुस्लिम शासकों की प्रवृतियों का आभास कराया गया।

द्वितीय अङ्क में—

पूर्वी पाकिस्तान ने डेरा डाले पश्चिम पाकिस्तान के शासकों की उद्दण्डता का सिंहावलोकन किया।

तृतीय अङ्क में—

बंगालियों का अदम्य देशप्रेम को सुन्दर सम्वादों के द्वारा प्रस्तुत किया गया।

चतुर्थ अङ्क—

इस अंक में पूर्व एक प्रवेशक के रूप से पश्चिम पाकिस्तान के छल-बल का शराबियों के द्वारा जो आभास कराया गया, वह लेखक की प्रतिभा का द्योतक है। चौथे अङ्क में-ढाका के किसी राजभवन में पाकिस्तान के तत्कालीन प्रशासक "याह्याखान" के द्वारा बंगाल के लोकप्रिय नेता "शेखमुजीबुर्रहमान" को डराया धमकाया जाता है, जिससे पारस्परिक कटुता और बढ़ जाती है।

पंचम अङ्क में—

पूर्वी बंगालियों पर पश्चिमी पाकिस्तान के सैनिक प्रशासकों का असह्य अत्याचार को प्रदर्शित किया है।

षष्ठ-अङ्क में—

पूर्वी पाकिस्तान से लुटे-पिटे मुसलमान जब भारत की सीमाओं की ओर दौड़े, तो भारत सरकार के संचालक सचेत हुए और तत्कालीन विदेश मंत्री, रक्षामंत्री तथा स्थल सेनाध्यक्ष जनरल एस०एच०एफ० जे० मानिकशाह के द्वारा स्थिति पर विचार-विमर्श करने का उल्लेख है। इस अड्डू में श्रीमती इन्दिरागांधी एवं उनके परामर्श डी०पी० घर की वार्ता का व्यापक उल्लेख है।

सप्तम्-अङ्क में— पूर्व विषकम्भक के माध्यम से श्री अटल बिहारी वाजपेयी आदि नेताओं एवं विभिन्न जन समुदायों के लोगों का देश की दुस्थिति के सम्बन्ध में चिन्तन प्रस्तुत है। सातवें अङ्क में भारतीय सेना ने ढाका मुक्ति के लिये प्रस्थान करने का विवरण है।

अष्टम्-अङ्क में—

भारतीय सैनिकों का पाकिस्तानी सैनिकों पर आक्रमित होना तथा उनके मनोबल को समाप्त कर देने की घटनायें प्रमुख रूप से वर्णित हैं तथा जनरल जगजीत सिहं अरोड़ा के सम्मुख पश्चिमी पाकिस्तानी सेना के अध्यक्ष जनरल न्याजी का आत्मसमर्पण का उल्लेख है।

नवम अङ्क में-

पश्चिमी पाकिस्तान के अधिकारियों की धूर्तता तथा जनरल याह्या खां की विवेकहीनता एवं रेडियो झूटीस्तान के क्रियाकलाप को बड़े रोचक ढंग से दिखाया गया है।

दसम-अङ्क में—

इन्दिरा गांधी की तीन प्रतिज्ञाओं का उल्लेख है जो "मुजीब को पाकिस्तान के चंगुल से छुड़ाना, भारत में शरण लिये हुए बंगालियों को वापस स्वदेश भेजना तथा पूर्वी बंगाल को लोकतन्त्र का शासन देने का विशेष, रोचक तथा स्वाभाविक वर्णन है। अन्त में भरत वाक्य में भारत और बंगलादेश की दृढ़ मैत्री एवं गीता कुरान का साथ-साथ पाठ करने का भरत-वाक्य प्रस्तुत किया गया है।

नाट्क के पात्र—

नाटक में इन्दिरागांधी, अटलविहारी वाजपेयी, भारत और पाकिस्तान के सेनाध्यक्षों, भारतीय रक्षा, विदेशादि मंत्रियों के साथ सामान्य दुकानदार, शराबी, नौकर, नौकरानी आदि पात्रों का चयन है। देशकाल के अनुकूल तथा अपने-अपने व्यक्तित्व के अनुरूप पात्रों का चयन हुआ है।

नाट्क की भाषा-शैली—

नाटक की भाषा पात्रानुकूल है। समयबद्ध है। अर्थात् युद्ध स्थल विविध पात्रों द्वारा जिन शब्दों या वाक्यों का स्वाभाविक रूप से प्रयोग किया जाना है। उन्हीं के आधार पर नाटककार ने प्रचलित भाषा का प्रयोग किया है, फलतः उर्दू, बंगला आदि स्थानीय भाषाओं एवं बोलियों का समुचित प्रयोग हुआ है। यथा- "तिष्ठ, तिष्ठ अरे कुक्कुरात्मजे! तरणीशब्द या अभागो (ससीत्कारम्) आह, आह मोरे गेलाम् मोरे गेलाम्, मोरे... मोरे गेलाम् आ...आ।"

2. विडम्बना (नाटक) नाट्यत्रयी—

विडम्बना नाटक एक भावाभिव्यक्ति है, जिसका अर्थ है विश्व का प्रत्येक मानव विडम्बना ग्रस्त है। वह जो कुछ होना चाहता था, वह नहीं हो सका। इस भाव की अभिव्यक्ति के लिये नाटककार ने महाभारत से करण को चुना है। करण की कथा विडम्बना की ही कथा है। नाटक में पांच अङ्क हैं।

नाटक का वर्णित-विषय—

मुख्य पात्र करण, उसका जन्म एक विडम्बना है। उसकी मां कन्या है। वह दुर्वासा की सेवा में लीन है। दुर्वासा के मन्त्र से करण धरती पर उतरा। उत्तरते ही उसे जल में फेंक दिया। करण

को सूत जाति के घर पर पलना पड़ता है। वह किशोरावस्था में ही भीम, अर्जुन, दुर्योधन, दुश्शासन से द्वन्द्व-युद्ध करना चाहता है, लेकिन नहीं कर सका, क्योंकि वह सूत-पुत्र है। करण की गुरुभक्ति का फल है, कि उसने अपनी जांघ से पर्याप्त रक्त बहने दिया, जिससे गुरु-निद्रा भंग न हो। गुरु ने इसका प्रतिफल दिया, कि तेरी सम्पूर्ण विद्या निष्फल हो।

करण ने वन में एक हिरण पर तीर चलाया, किन्तु वह तो गाय थी। गोहत्यारा भी बन गया। हस्तिनापुर में जब राजकुमारों का बल परीक्षण हो रहा था, तो अर्जुन ने समस्त प्रजाजन को अपने-अस्त्र-शस्त्र से अभिभूत कर दिया, तो करण भी कुछ करने के लिये वहाँ पहुँच गया, किन्तु कुलीनवंश का न होने के कारण अवसर नहीं मिला।

इसी युद्ध स्थल में भीमसैन ने कहा था-अरे! सिंह शावकों के बीच में कुत्ता भी प्रवेश कर सकता है? पाण्डवों की प्रतिज्ञा थी, यदि हमारा एक भी भाई मर गया, तो हम सब प्राण त्याग देंगे, किन्तु जब इनका सबसे बड़ा भाई-करण मारा गया, तो उन्मुक्त आनन्दोत्सव हुआ।

विडम्बना यह है कि इस रहस्य को जानने वाली कुन्ती सदैव पाण्डवों के साथ रही, पर उसने कभी भी इसका रहस्य नहीं खुलने दिया, किन्तु कौरव पाण्डवों के युद्ध समाप्ति पर, जलाञ्जलि देते समय कुन्ती ने सुना, कि करण के दोनों बच्चे मारे गये हैं, तब उसने भेद खोला। यह एक की नहीं, अपितु विश्व की विडम्बना है।

इसी विडम्बना का वर्णन नाटककार ने नाटकीय शैली भाषा, सम्वाद आदि द्वारा प्रसाद एवं माधुर्य गुणों से युक्त शब्दों का चयन कर वर्णन किया है। ५ अङ्डों का होने के कारण अभिनय के उपयुक्त है। नाटक साहित्य में नवीनता का द्योतक है।

3. कण्वाश्रम—

यह लघुनाटिका आश्रम के ऐश्वर्य का प्रतिबोधक है। मालिनीतीर पर वैकुण्ठ सदृश, कुलपति कण्व के आश्रम का भव्य स्वरूप इस संस्कृत नाटिका में प्रस्तुत किया है। आश्रम में तत्कालीन समाज के वे सभी जन आकर रह सकते थे, जिन्हें जीवन के विविध क्षेत्रों में कुछ उपलब्धि करनी होती थी। अनसूया, गौतमी, प्रियम्बदा, शकुन्तला सदृश स्त्रियां हों, या शार्ङ्गरव, शारद्वत सदृश ब्रह्मचारी शिष्य हों या जीवन के भोगों से तृप्त वानप्रस्थी परिवार हों। ऋषि कण्व सबके प्रयोजन को समझकर उनके निवास भोजन एवं दैनिक कार्यक्रम की व्यवस्था करते थे। नाटक के प्रथम अङ्क में केरल के राजा तथा काश्मीर के ब्राह्मण आकर आश्रम का गुणगान करते है। आश्रम में हिंसक जन्तु भी आकर तपस्वीवत् व्यवहार करते थे।

कण्वाश्रम की तपोवृद्धि, परम उल्लास, अद्भुत घटनाओं का दिग्दर्शन तथा बौद्धिक उत्थान की सीधाओं के पर्याप्त संकेत इस नाटिका में द्रष्टव्य हैं। नाटककार ने स्वाभाविक अभिनय के द्वारा रमणीयता का जितना सुन्दर स्वरूप प्रस्तुत किया है 'रूपक' स्वरूपों के शुष्क निर्वाह में उतना नहीं। मञ्चन की दृष्टि से नाटिका सर्वथा उपयुक्त है। भाषा-शैली, सम्वाद आदि स्वाभाविक एवं विषयानुकूल हैं। यह नाटिका-विडम्बना नाटक के साथ सम्बद्ध है नाटकत्रयी में।

4. प्रणय-विच्छेद—

यह लघुनाटिका है। नाटिका की विषयवस्तु तो दुष्यन्त-शकुन्तला की वही सर्वविदित कथावस्तु है, किन्तु वेदव्यास एवं कालिदास की प्रस्तुति से भिन्न इसको राजोन्माद तथा प्रणय विहलता की त्रुटि-परक स्वरूप में प्रस्तुत किया है, जिसका फल नायक एवं नायिका को स्वाभाविक रूप से अनुभव करना है। उन्हें सामूहिक अपमान तथा चिरविरह व्यथा की पीड़ा भोगनी पड़ी।

नाटिका का अवसान दुष्यन्त द्वारा शकुन्तला की भर्त्सना, त्याग एवं शकुन्तला का राजवर्ग तथा तपोवन परिकर-द्वारा निर्दयता पूर्वक परित्याग में होता है। इस अवसर पर "कालिक मा कुरु आलि विश्वासम्, विविध कुसुमरसलेहन-लोलुप-नव-नव- कलिका-वासम्" गीत अतिरमणीय एवं भावुकता का परिचायक है। डॉ० शर्मा समुचित अवसर पर रस, भाव, भाषा, सम्वाद का प्रयोग करने में सक्षम रहे। नाट्यशास्त्र के अनुशासन में अनुशासित होने पर भी नाटककार अङ्क, विष्कम्भक, प्रवेशक, आदि की मनोनुकूल रस की अभिव्यक्ति में स्वतः सचेष्ट प्रतीत होते हैं। डॉ० शर्मा की यह प्रथम-संस्कृत नाटिका है। नाटिकात्रयी के अन्तर्गत है यह नाटिका।

3.4.3 आचार्य बुद्धिबल्ल

आचार्य बुद्धिबल्ल का जीवन-परिचय—

पौड़ी गढ़वाल के अन्तर्गत पट्टी तल्ला उदयपुर, ग्राम-आमड़ी में पं० रविदत्त ज्योतिषी के घर पर प्रथम पुत्र के रूप में बुद्धिवल्लभ का जन्म 15 जून 1936 ई० को हुआ था। माता परम धार्मिक शाखादेवी थी। अनेक पीढ़ियों से आपका वंश सुशिक्षित रहा। जब भगवान, भास्कर भूमण्डल को अपनी तप्तकिरणों से संतप्त कर रहा है, उस समय जन्म लेने वाले बालक का स्वभाव, बुद्धि, भावना, कर्मठता भी अति तीक्ष्ण होनी स्वाभाविक है। ऐसे समय का बालक तो कुशाग्र बुद्धि, देदीव्यमान शरीर वाला होता है, किन्तु भास्कर की तीव्र किरणों के कारण नातिस्थूल होता ही है।

आचार्य बुद्धिबल्ल की शिक्षा—

प्रारम्भिक शिक्षा अपने गाँव के समीप ही प्राप्त की। तत्पश्चात् बाल्यकाल में हरिद्वार आकर 'ऋषिकुल ब्रह्मचर्य आश्रम हरिद्वार' में प्रविष्ट हो गये। प्रथमा परीक्षा से व्याकरणाचार्य तक की शिक्षा ऋषिकुल ब्र०आ० से ससम्मान प्राप्त की। 1958-1959 में व्याकरणाचार्य की परीक्षा उत्तीर्ण की। 1964 ई० में आपने "विद्यावाचस्पति" की उपाधि प्राप्त की। आपने आचार्य परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् एक वर्ष तक ऋषिकुल ब्र० आश्रम में अध्यापने कार्य एवं मुख्य-अधिष्ठाता के पद पर भी रहे। 1960 ई०से 1996 तक प्रधानाचार्य के पद पर श्री जगद्देव सिंह संस्कृत महाविद्यालय सप्तर्षि आश्रम हरिद्वार में रहे।

आचार्य बुद्धिबल्ल का लेखन कार्य—

1. "रसकलसी" मुक्तक काव्य एक मात्र प्रकाशित है।
2. उद्धवशतक-संस्कृत में, अप्रकाशित है।
3. जागो वीर जवानो जागो-कविता-संग्रह हिन्दी में प्रकाशित।

1. रसकलसी—

'रसकलसी' काव्य, मुक्तक काव्य-परम्परा की श्रेणी में रखा जा सकता है, क्योंकि विभिन्न विषयों से सम्बन्धित कवितायें काव्य-शोभा वर्धक हैं। प्रारम्भ में जहाँ श्रृंगारादि, अन्योक्तियाँ, ऋतु सम्बन्धी कविताओं का बाहुल्य है, वहीं शेषभाग में कब्बाली, समस्यापूर्ति एवं प्रहेलिका से सम्बन्धित कवितायें नवीनता की द्योतक हैं। कविता का विविधात्मक स्वरूप आद्योपान्त लक्षित होता है।

आचार्य बुद्धिबल्ल की वंशावली—

खिमानन्द (प्रपितामह)
↓
बालादत्त (वैद्य)
↓
1. दामोदर प्रसाद (वैद्य) 2. रविदत्त (ज्योतिषी) 3.विष्णुदत्त वैद्य 4. पुरुषोत्तम (शिक्षक)
↓
1. बुद्धिवल्लभ 2. कुमुदप्रसाद 3.भास्करप्रसाद 4. कविप्रसाद 5. वेणी प्रसाद
↓
1. द्विजेन्द्रवल्लभ 2. महेन्द्र वल्लभ

आपका व्यक्तित्व बहु आयामी रहा। उत्तर-भारत के व्याकरण-शास्त्र के उच्चकोटि के विद्वान् हैं। व्याकरण के साथ न्याय, वेदान्त, साहित्य आदि विषयों पर आपकी अप्रतिम गति है। संस्कृत भाषा का विविध स्वरूप आपके कण्ठ-वशवर्ती है। निर्भीक, सत्यवादी, दृढ़ प्रतिज्ञ, समाज के प्रति समग्ररूपेण समर्पित, संस्कृत और संस्कृति की रक्षा के लिये समर्पण, गौ-रक्षा, राष्ट्र रक्षा-आपका लक्ष्य रहा। सामाजिक कार्य-सामाजिक कार्यों में "प्रादेशिक संस्कृत-विद्यालय अध्यापक समिति उत्तर प्रदेश के संस्थापकों में से एक (आप) इस समिति के "सर्वोच्च समिति" (पञ्चसमिति) के संयोजक के पद पर अनेक वर्ष तक रहे।

इसी संघटन द्वारा संचालित जनपदीय क्षेत्रीय एवं केन्द्रीय कार्यक्रमों में अनेक बार अनशन, प्रदर्शन एवं लखनऊ में 14/8/1985 से 23/8/1985 तक आमरण अनशन पर रहे-संस्कृत विद्यालयों में मासिक वेतन प्राप्ति हेतु और संस्कृत अध्यापकों को पेन्शन देने हेतु। जो सुविधा एक वर्ष बाद क्रमशः मिलनी प्रारम्भ हो गई थी। आपमें संघटनात्मक ऊर्जा अतुल है।

1979 में प्राप्त राज्य पुरस्कार का परित्याग-उपर्युक्त मांगों के समर्थन में तथा उर्दू को प्रदेश में द्वितीय राजभाषा बनाने के विरोध में किया। गोहत्या विरोधी आन्दोलन में जनवरी

1967 में एक महीना कारावास के कारण तिहाड़ जेल में व्यतीत किया। अखिल भारतीय राष्ट्रीय जागरण-समिति के अनेकों वर्ष तक महामन्त्री रहे।

काव्य के वर्ण्य विषय-काव्य चार विन्दुओं में विभक्त है। प्रथम-विन्दवः में शृङ्गादिश्लोक और अन्योक्तियां। 2. परविन्दवः में ऋतु विलसितम् है। 3. चरम विन्दवः में - गीतानि काव्यालयः अर्थात् कव्वाली। 4. बालविन्दव-इसमें समस्या पूर्ति से सम्बन्धित प्रहेलिकायें हैं। कुल 294 श्लोक हैं। काव्य हिन्दी अनुवाद सहित है। काव्य-विवेचना-काव्य समष्टि परक मङ्गल-कामना से प्रारम्भ है। श्रीकृष्ण और राधिका का जो प्रियतम वृक्ष "कदम्ब" है, उससे मङ्गल की अपेक्षा है, क्योंकि उस कदम्ब में भ्रमर-गुञ्जन के व्याज से श्रीकृष्ण की वंशी की स्वर-लहरी को बिखेर दिया है। उससे श्रीकृष्ण की स्मृति सजग होने से श्रीकृष्ण के सहचर वानर और मोर विरह से व्यथित होकर कदम्ब पर मौन बैठे हैं तथा राधिका के (कृष्ण विरह जनित पीड़ा से) नेत्रों से निरन्तर गिरते हुए आँसुओं से जिसका (कदम्ब का) मूल भाग सिञ्चित होकर सुशोभित हो रहा है। (श्रीराधा) की दोनों भुजाओं के मध्य सुशोभित है। श्रीराधा ने साक्षात श्रीकृष्ण समझकर जिसके मूलभाग पत है मूल भाग भ जिसका । (अर्थात् को दोनों भुजाओं से आलिङ्गित किया हुआ है, वह कदम्बवृक्ष सभी का मङ्गल करे) दृष्टव्य है-

देयान्मङ्गलमुच्छलन्मधु भरः पुष्पाच्छगुच्छाञ्चितो
गुञ्जन्मञ्जुमिलिन्दवृन्दनिनद प्रारब्धवंशीरवः ।
मौनं मौनअधिष्ठितः कपिवरै स्तैर्बर्हिभिश्चानिशं
राधालोचननीर सिञ्चितबृहन्मूलः कदम्बदुमः,
(राधाबाहुयुगान्तरालविलसन्मूलः कदम्बद्रुमः) ॥

भगवती पार्वती की श्रेष्ठता एवं वाल्मीकि, व्यास कवियों के जय जयकार कर कवि ने नारी की ममता का, श्रेष्ठता का व्यापक वर्णन किया है। काव्यगत विलासिनी को द्वर्थक के रूप में प्रतिपादन कर, एक ओर काव्य के सौन्दर्य का, दूसरी ओर श्लेषालंकार के माध्यम से रमणी के सान्दर्य का वर्णन श्रृंगाररस के प्रमुख अंगों के साथ किया है। श्रृंगाररस के दोनों पक्षों को महत्त्व दिया है।

काव्य का प्रत्येक पद्य रस, छन्द, अलंकारों से परिपूर्ण है। रमणी की रमणीयता का चित्रण कहीं विभिन्न उपमानों से किया गया है। उठप्रेक्षा अलंकार का उदाहरण कवि की कल्पना का परिचायक है-

पाययन्ती पयः पुत्रं जननी जन्म जन्मनि।
भुक्ते मुक्तेः परां प्रीतिमेकत्रानुभवत्यलम्॥

अर्थात्- (गोद में बच्चे को बिठाकर) माता अपना दूध जब पुत्र को पिलाती है, तो उसे ऐसा अनुभव होता है, मानों जन्म-जन्मान्तरों की भुक्ति पात्र का सुख उसे एक साथ अनुभव हो रहा हो।

वह इस सुख को सदा चकित (मोक्ष) में प्राप्त करना चाहती है। त (भोग) श्रृंगारस का प्रतीक एवं कल्पना की गरिमा-द्रव्टय है-

छविगुणसंग्रहसमरे रतौ युवत्याः स्तनौ नितम्बौ च।
मध्यगता कटि रेषां क्षीणा हन्त पीडितेवात्र॥

अर्थात् - (युवावस्था में पहुँची युवती) दोनों स्तनों तथा दोनों नितम्बों में सौन्दर्य के गुण का अधिक से अधिक संग्रह करने के लिये मानों छीना-झपटी का युद्ध चन रहा है। सौन्दर्य रूपी गुणरस्सी को, संग्रहभली-भाँति पकड़कर ये चारों दो दो का दल बनाकर रस्सा-कसी की युद्ध क्रीड़ा कर रहे हैं। इसी रस्सा-कसी के बीच फँसी बेचारी कटि अत्यन्त पीड़ित होकर दुर्बल हो गई। (युवावस्था में बरस रहे सौन्दर्य को स्तन एवं नितम्ब अपनी-अपनी तरफ लूटने का प्रयास कर रहे हैं)।

अनुप्रास, श्लेष, उत्प्रेक्षा, वक्रोक्ति, आदि विविध अलंकारों के माध्यम से कवि ने रमणी के सौन्दर्य एवं कटि की क्षीणता का स्वाभाविक चित्रण किया है। प्रथम विन्दवः में 173 श्लोक हैं। 'परविन्दवः' प्रकरण में वसन्त, ग्रीष्म एवं वर्षा ऋतुओं का 44 सुललित पद्यों में वर्णन है। 'चरमविन्दर' में 65 श्लोक हैं। जिनमें- पार्वतीपञ्चकम्, गङ्गा गायति गानम्, विरलः कश्चिद्वीरः, पूर्व देशः ततः विदेशः ह्येष दिव्यसन्देशः, वसन्तः आगतः (हं हं) निराशा सा गाता (हं ह), परिहर मुग्धारूपमुदारं धारय दुर्गारूपम्, स्मरति मनः सखिः यामुनतीरम्, शौर्यविलासः यौवनहासः स्मरणीयः स सुभाषः, सुमन सुमनसां मनसां मानः प्रणमति ते बलिदानम्, यासि चेत्त्वं याहि वाले मम न कालो भात्ययम्-इन शीर्षकों से सम्बन्धित कवितायें हैं। इनमें अन्तिम शीर्षक-यासे चेत्त्वं यासि बाले... में पति-पत्नी का सम्वाद है। अन्तिम "बालविन्दवः" में काव्यालिः (कव्वाली), समस्यापूतिः, श्यामलं नन्दबालम्, कमलधा ऽमलधामयुताब्धिजा, शलभ दुर्लभ लब्धि रलाभिः किम्, मद्धरिः सुद्धयुपास्यः, उन्मत्तभूतं जगत् और प्रहेलिकाः से सम्बन्धित कविता संग्रह है।
यथा काव्यालिः का उदाहरण-

गुरुजनदत्तं पाठं स्मृत्वा लेखनकार्य पूर्ण कृत्वा सर्वं पाठं ततः पठित्वा सज्जः गन्तुं तिष्ठामि दर्शं मार्गं सदा सहर्षं विद्यालयमुपगच्छामि कुरुते यस्तु प्रमादं पठने तस्य भविष्यत् शोचामि तं सखायं शोचामि ॥

रस-कलंशी-काव्य अपने नाम की सार्थकता व्यक्त करता है। कवि हृदय भावाभिव्यक्ति में प्रवाहित है। कविता का प्रथम विन्दु-विविध रसों एवं अलंकारों का समुच्चय है। श्रृंगार रस कवि का प्रियतम है। शृंगार रस के वर्णन में कवि की कवित्व शक्ति अतिक्रमण भी कर देती है, जिसे श्लेष, उत्प्रेक्षा, उपमा, वक्रोक्ति, सन्देह, भ्रान्तिमान्, व्याजोक्ति आदि अलंकारों ने गरिमा प्रदान की। अन्य विन्दु में भी प्रसंगानुसार वर्णन भावाभिव्यक्ति का व्यञ्जक है। छन्दों में शार्दूल विक्रीडितम्, उपजाति, आर्या, अनुष्टुप् इन्द्रवज्रा आदि छन्दों के साथ कुछ 5, 6, 7, 8 पंक्तियों में भी कविता की गई है। काव्य संस्कृत जगत् में नवीनता का द्योतक होगा।

3.4.4 आचार्य देवी प्रसाद त्रिपाठी

आचार्य त्रिपाठी का जीवन परिचय—

आचार्य त्रिपाठी का जन्म उत्तराञ्चल के श्रीबद्रीनाथ धाम है, जहाँ अनादि काल से भगवान् नर-नारायण का तपोमय शरीर से सदा निवास है। इस धाम के गन्तव्य मार्ग में पंच प्रयागों में एक प्रयाग नन्दप्रयाग है, इसके समीपस्थ "मोरवमल्ला" नामक ग्राम में 25 दिसम्बर 1965 ई० को पं० रतनमणि त्रिपाठी का उच्चग्रहों से संयुक्त पुत्र का जन्म हुआ। ऐसे पुत्र की जन्मदात्री माता भागीरथी देवी का आह्लादित होना स्वाभाविक था। भागीरथी देवी पुत्र का नाम देवीप्रसाद रखा गया। देवीप्रसाद के पितामह पं० तारादत्त त्रिपाठी एवं पितामही शारदादेवी थी। त्रिपाठी बंश ज्योतिष एवं कर्मकाण्डी ब्राह्मणों का रहा।

आचार्य त्रिपाठी की शिक्षा—

प्रारम्भिक शिक्षा ग्राम में प्राप्त कर ज्योतिषशास्त्र का अध्ययन के लिये ज्योतिर्मठ में श्री बद्रीनाथ वेद-वेदाङ्ग संस्कृत महाविद्यालय में चले गये। जहाँ पण्डित प्रवर श्री इन्दुप्रकाश उपाध्याय एवं श्री भगतराम थपलियाल के चरणों में रहकर विद्वत्तापूर्ण स्वाध्याय किया। वहाँ आचार्य पर्यन्त अध्ययन कर, सिद्धान्त ज्योतिषाचार्य की परीक्षा, स०सं० वि०वि० वाराणसी से प्रथम श्रेणी में 1987 में उत्तीर्ण की। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की शोधवृत्ति परीक्षा में भी सफलता प्राप्त कर वाराणसी काशी हिन्दू विश्व-विद्यालय में प्रो० रामचन्द्र पाण्डेय के अधीनस्थ शोधकार्य 1994 ई० में पूर्ण किया। 1994 ई० में का०हि०वि०वि० वाराणसी से 'योग डिप्लोमा' भी प्राप्त किया। डॉ० त्रिपाठी श्री बद्रीनाग वेद वेदांग सं०म०वि० जोशीमठ में सर्वप्रथम मार्च 1987 से मार्च 1989 तक अध्यापक रहे। 1989 से 1994 तक काशी हिन्दू वि०वि० में शोधकार्य-छात्रवृत्ति के सहयोग से किया। 1995 से 1997 तक रा० सं० संस्थान जगन्नाथपुरी एवं परली में व्याख्याता रहे, राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान में तदनन्तर श्री लाल बहादुर शास्त्री विद्यापीठ, नई दिल्ली में1997 से 2003 तक व्याख्याता, 2003 से 2004 तक प्रवाचक (रीडर) एवं 26 अक्टूबर 2004 से आचार्य (प्रोफेसर) के पद पर कार्यरत हैं। आप उत्तराखण्ड संस्कृत विश्वविद्यालय, हरिद्वार में 2 मार्च 2019 से 27 अगस्त 2022 तक कुलपति के पद पर भी रहे। आपको अनेकों सम्मान प्राप्त हैं। जिसमें वर्ष 2020 में अखिलभारतीय संस्कृत साहित्य सम्मेलन में संस्कृत गौरव सम्मान प्राप्त हुआ। आपके 25 शोधलेख विभिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित हैं। ज्योतिष से सम्बन्धित 23 लेख भी प्रकाशित हैं विभिन्न पत्रिकाओं में। वस्तुतः आप प्रबुद्ध लेखक हैं। आपका पठन-पाठन एवं लेखन-कार्य निरन्तर गतिशील है। सम्बन्धित विद्वद्गोष्ठियों में प्रभावी ढंग से सम्मिलित होना एवं शैक्षिक संस्थाओं में सक्रिय सहयोगी बनना, सामाजिक दायित्व का निर्वाह ही है।

आचार्य त्रिपाठी की प्रकाशित कृतियां—

1. भुवनकोशविमर्श, 2. सामुद्रिक, 3. गृहगोचर, 4. ब्रह्माण्ड एवं सौरपरिवार, 5. वास्तुसार। इनके अतिरिक्त-धराचक्र, भास्करीय गोल मीमांसा एवं "वैजयन्ती पञ्चाङ्ग गणित" का सम्पादन एवं हिन्दी व्याख्या, हैं।

ग्रन्थ में वर्णित विषय—

"भुवनकोश विमर्श" -

प्रस्तुत ग्रन्ध में भौतिक दृष्टि से ब्रह्माण्ड का, ब्रह्माण्ड में सौर परिवार का, सौरपरिवार में हमारी भूमि का तथा भूमि में द्वीप-सागरादि की उत्पत्ति और स्थिति का विवेचन पूर्व-पश्चिम दृष्टि से निबद्ध है। वर्णित विषयों में भुवनकोश, सृष्टि परिकल्पना, ब्रह्माण्ड, हमारा सौरपरिवार, पृथिवी का आवरण, भूमि में पुरनिवेश, भूमि में सागर और प्रलय है।

ज्योतिषशास्त्र की तीन शाखायें हैं-सिद्धान्त, संहिता एवं गणित। "सृष्ट्यादौ सिद्धान्तः" अर्थात् सृष्टि के प्रारम्भ से जिसमें गणित हो, उसे सिद्धान्त कहते हैं। प्रस्तुत ग्रन्थ 'भुवनकोश विमर्श' भी ज्योतिष शास्त्र के सिद्धान्तों का विवेचक है। ग्रन्थ के प्रारम्भ में भुवनकोश से सम्बन्धित विषय अर्थात् पुराणों में लोकों का विवेचन, ऊर्ध्वलोक, मध्यलोक, अधोलोक एवं जैनमतानुसार तीनों लोकों की रचना का सप्रमाण विवेचन किया गया है। विवेचन में पुराणों में वर्णित लोकों के स्पष्टीकरण है-कि-ऊर्ध्व-लोक अर्थात् सत्यलोक, तपोलोक (ब्राह्मस्वर्ग), जनलोक (दिव्यस्वर्ग), महर्लोक (प्राजापत्य), स्वर्लोक (माहेन्द्र स्वर्ग), भुवलोक (भौमस्वर्ग), है। मध्यलोक भूलोक हैं। अधोलोक अतल, वितल, सुतल, तलातल, रसातल, महातल एवं पाताल हैं। अधोलोक को बलिस्वर्ग का प्रतीक माना है एवं ऊर्ध्वलोक के प्रथम तीन-अकृतक त्रैलोकी, महर्लोक को-कृतकाऽकृत त्रैलोकी तथा स्वः, भुवः, भू को कृतक त्रैलोकी कहा गया है। लेखक का कथन है- "आध्यात्मिक दृष्ट्या चतुर्दश लोकानां वर्णनं समीचीनं वर्तते, न तु भौतिकदृष्ट्या। योगाशास्त्रानुसारं यथा शरीर स्थानां सप्रोर्ध्वानां सप्ताधलोकानां च नियमनं सत्यलोकादेव भवति, तथैव ब्रह्माण्डेऽपि समस्तानां लोकानां नियामकः सुदूरवर्ति सत्यलोक एवास्तीति"।

सृष्टिपरिकल्पना—

विमर्श का द्वितीय बिन्दु है सृष्टिपरिकल्पना अर्थात् तेजोमय महानण्डः (हिरण्यगर्भः), हिरण्यगर्भस्य गतयः, प्रथमा पृथिवी सृष्टिः, आग्नेय्याग्निगर्मा च पृथिवी, दर्शनशास्त्रदृष्ट्या विश्वस्य चरनायाः, मूलतत्त्वानि, भास्कराचार्यस्य मते सृष्टिः, ब्रह्माण्डस्य वंशवृक्षः सांख्य-शास्त्रानुसारेण, पञ्चविंशति मूलतत्त्वानां वर्गीकरणम्, सूर्य सिद्धान्तस्य सृष्टिक्रमः, सृष्ट्युत्पत्ती देवतावादः, एकं ब्रह्म, त्रयो देवाः, पञ्चदेवाः, नाभिचक्रस्यान्तरिकोभागः, सांख्यदृष्ट्या तुलना, सृष्टेः वैज्ञानिक परिकल्पना, वैदिक परिकल्पनया सह तुलना। इन विषयों की पृथक् पृथक् विवेचना है। वर्गों का वर्गीकरण सार्थक है।

ब्रह्माण्ड—

ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति को 17 भागों में विभक्त कर अनेक शास्त्रीय प्रमाणों से पुष्ट कर इस सिद्धान्त को प्रतिपादित किया है। यथा विस्फोट सिद्धान्त का उल्लेख करते हुए कहा गया है- "अस्य सिद्धान्तस्य प्रवर्तकाः सन्ति कैम्ब्रिजवासिनः खगोलशास्त्रिणः श्रीमन्तो रायलमहोदयाः ते कथयन्ति यद् ब्रह्माण्डस्य जन्म एकसहस्रकोटिवर्षाणि पूर्वमत्यन्तसघनपदार्थानां मध्ये महता विस्फोटेनाभवत्। विस्फोटस्यानन्तरं तारकाणामाकाशगङ्गानाञ्चोत्पत्तिर्जाता ॥

अस्माकं सौरपरिवार- सौरपरिवार को 55 शीर्षकों में विभक्त कर उनका पृथक-पृथक् वर्णन किया है। जिनमें सौर परिवार की उत्पत्ति, सिद्धान्त, विभिन्न मतों का उल्लेख, सूर्यादि नवग्रहों का भौतिक स्वरूप, यम (प्लुटो) धूमकेतु (कोमेट) उल्का प्रभृति विषयों की व्यापक चर्चा है। ग्रह-जनित चित्रों से विषय को सुगम्य किया है।

पृथिव्या आवरण—

इसके अन्तर्गत आवहः (भूवायुः) प्रवहः, उद्वहः, संवहः, विवहः, परिवहः, परावहः, वायुमण्डलस्यांधुनिक वैज्ञानिक परिभाषा, वायुमण्डलस्य संरचना-विभाजनम्, अधो (क्षोभ) मण्डलम्, समतापमण्डलम्, मध्यमण्डलम् आयन मण्डलम् एवं आयतनमण्डलम् इन १५ प्रकरणों का विशद चित्रण है। भूमि के उपरि एवं अधस्तात् वायुमण्डल का सप्रमाण उल्लेख है।

भूमौ पुरनिवेश—

इस प्रसंग में 26 शीर्षकों में विभक्त पृथिवी-स्थित पुर, द्वीप आदि का वर्णन है। यथा- "भास्कारचार्यैः 'लङ्का कुमध्ये" इति लिखितम् परं गोलस्योपरि सर्वत्र मध्यविन्दु-र्भवितुमर्हति। अतो भारतवर्षमाश्रित्य लङ्का कुमध्य इति तर्कयामि। भूमावुदधि-३३ प्रकरणों में उल्लिखित भूमि में जल की मात्रा है, कहाँ यह लीन हो रहा है? जिसके प्रतिनिधि समुद्र हैं, उनकी क्या स्थिति है। इस प्रसंग को प्रस्तुत शीर्षक में व्यापकता प्राप्त है। लेखक ने विवेचन पद्धति से विषय को स्पष्ट करने का सफल प्रयास किया है। विषय को विविध चित्रों के माध्यम से स्पष्ट किया है।

प्रलय—

विमर्श का अन्तिम विषय है प्रलय। ग्रन्थकार ने विष्णुपुराण का उद्धरण से प्रलय को चार भागों में विभक्त किया है। 1. नित्यप्रलय (दैनन्दिन प्रलय), 2. नैमित्तिक प्रलय (वाह्यप्रलय), 3. प्राकृत प्रलयः (महाप्रलय), 4. आत्यन्तिक प्रलय (सम्पूर्ण प्रलयः), प्रलय (विनाश), सम्बन्धी विवरण का संक्षिप्त, किन्तु आवश्यक वर्णन है। समीक्षा-भुवनलोक, सृष्टि रचना की कल्पना, ब्रह्माण्ड का स्वरूप, सौर परिवार से सम्बन्धित ग्रहादि का चित्रण, भूवायु का स्वरूप एवं झुकाव, विविध वर्ष एवं द्वीपों का चित्रण, समुद्र की स्थिति एवं प्रलय सम्बन्धी विवरण को ग्रन्थकार डॉ० त्रिपाठी ने वैदिक, पौराणिक, खगोल-भूगोल सम्बन्धी विद्वानों के मत-मतान्तरों का व्यापक उल्लेख करते हुए विषय का प्रतिपादन किया है। ग्रन्थ सर्वथा उपयोगी एवं सार्थक है।

3.4.5 आचार्य मदन मोहन जोशी

आचार्य जोशी का जीवनवृत्त—

आचार्य मदन मोहन का जन्म ग्राम-गढ़मोनू खातस्यूं, पौड़ीगढ़वाल में दिनांक 20 मई, 1945 ई० को हुआ था। पिता अमरदेव जोशी एवं माता परमविदुषी कलावती देवी हैं। पितामह-पं० तुलाराम एवं प्रपितामह पं० बेलानन्द थे। जोशी परिवार शिक्षा एवं संस्कारों में उच्च कोटि का कहा जाता है।

आपकी प्रारम्भिक शिक्षा गाँव में हुई। तद्नन्तर संस्कृत शिक्षा प्राप्ति हेतु हरिद्वार आये। वहाँ निर्मल संस्कृत महाविद्यालय में आचार्य पर्यन्त उत्तम श्रेणी में शिक्षा ग्रहण की। साहित्याचार्य एवं शिक्षा शास्त्री की परीक्षाएँ सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी से उत्तीर्ण कीं। हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग से 'साहित्य रत्न' की उपाधि एवं एम.ए. (वेद) दिल्ली विश्व विद्यालय से उत्तीर्ण किया।

आचार्य जोशी ने अध्यापन कार्य 1968 ई० से प्रारम्भ किया। सन् 1995 से रामजस वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय सं० 2, आनन्द पर्वत नई दिल्ली में वरिष्ठ संस्कृत प्रवक्ता के पद पर कार्यरत रहे-

आचार्य जोशी की रचनाएँ—

1. रूपक-पञ्चकम्, 2. चन्द्रशेखर वरीयम् (संस्कृत-प्रकाशनाधीन), 3. मुहुर्त विचार (हिन्दी पद्य)। वस्तुतः मदनमोहन जोशी का जीवन बहुआयामी है। सामाजिक धार्मिक एवं साहित्यिक क्षेत्र में आपका योगदान अग्रगण्य है।

विषय-वस्तु—

रूपक-पञ्चकम्—

रूपक-पञ्चकम् में वर्णित विषय-सामयिक धारणाओं पर आधृत हैं। व्यवहार में आज जो देखा जा रहा है, किया जा रहा है, उसको नाटककार ने रंगमञ्च के माध्यम से साकार रूप में प्रदर्शित कराने का सफल प्रयास किया है। भाषा एवं अभिनय के माध्यम से सामाजिक जागृति का प्रयास प्रशंसनीय है। सहज, सरल, सुवाच्य संस्कृत भाषा में लिखित रूपक रूपान्तर के साथ में है। नाटकों ने वस्तुतः आज की जनभाषा का रूप धारण किया है। वर्तमानकालीन ज्वलन्त समस्याओं का निस्तारण करने में लेखक सफल है। पर्यावरण, दहेज, साक्षरता, आस्था, विश्वास एवं देशभक्ति परक नाटक अभिनय के लिय जहाँ सफल हैं, वही सामयिक समस्याओं का निस्तारण करने में समर्थ हैं।

नाटकों का कथोपकथन अतीव रोचक एवं शैली प्रसाद-माधुर्य गुणान्वितं है। प्रचलित शब्दों का सरल संस्कृत स्वरूप देकर जटिलता से सरलता के सिद्धान्त को महत्त्व दिया है। वस्तुतः नाटककार का लक्ष्य संस्कृत भाषा का प्रचार-प्रसार एवं उसे गत्ति प्रदान करना रहा है। यथा- **श्यामः-** सत्यमुक्तं भवता। वृक्षाः पादपाः वनस्पतयश्य सजीवा भवन्ति । यथा सजीवाः सुखं दुःखं चानुभवन्ति तथैव वृक्षादयोऽपि। सर्वे पश्यन्त्येव ग्रीष्मातपेन तेषां पत्राणि म्लानानि शुष्काणि च भवन्ति, शैत्येन व रूक्षाणि। ते चास्माकं जलसम्पत्तिं च रक्षन्ति।

प्रधानः-श्यामस्य कथने तत्त्वं दृश्यते। रघुवंशे भगवती पार्वती देवदारु पुत्रवत्पालयति। अतः सर्वे परस्परं विवादं विहाय वृक्षारोपणे स्व स्वयोगदानं कथयत।

नीरसा सरसा धरा का प्रारम्भ भारतमाता की वन्दना से, गृहलज्जम का गणेश-स्मरण एवं शारदा का ध्यान से, साक्षरता का पढ़ने के उपदेश से, 'ईश्वरस्य कार्यम्' का शारदा से "वाचि नृत्यतु मे सदा" की प्रार्थना से तथा 'प्रेरक रूपक' का देशभक्तों की प्रेरक स्वराज की देवी का स्मरण से किया गया है।

'नीरसा सरसा धरा'--

यह रूपक पर्यावरण से सम्बन्धित है। मानव ने प्रकृति का दोहन अतिशय रूप में किया है, कर रहा है। जिसका प्रतिफल जड़-चेतन सबको अनुभव करना पड़ता है। चराचर जगत् में मानव में बुद्धितत्त्व है। वह समझ रहा है। अपना अपराध स्वीकार कर सुधार की ओर प्रवृति हो गई है। इसमें आठ दृश्य हैं। गद्य के साथ पद्य भी हैं। संस्कृत गद्य भाग का हिन्दी गद्य में एवं संस्कृत पद्य भाग का हिन्दी पद्य में रूपान्तर (सार्थक) है।

इसके पात्र सूत्रधार, नट, मदारी, नटखट, प्रधान, शंकर-रहीम, गोपाल, पुरोहित, कालूराम, श्याम, वृजभूषण, जमीन्दार, सूजर एवं बोधन हैं।

गृहलज्जम्—

समाज में बढ़ती दहेज-दानव के दोषों का चित्रण रूपक के माध्यम से किया गया है। दहेज न मांगने वाला भी सबसे बड़ा भिखारी बना है। शिक्षित युवकों ने भिन्न-भिन्न रास्ते दहेज के निकाल दिये हैं। दहेज ने न मालूम कितनी अबोध गृह लक्ष्मियों को काल का ग्रास बनाया है। यही सामाजिक कुरीतियां, कुप्रवृतियाँ रूपक की विषय वस्तु है। दहेज के प्रति सामाजिक विचार धारा को परिवर्तन करने का सार्यक प्रयास है। इसमें पांच दृश्य है और पात्र हैं-सूत्रधार, नटी, मुरलीधर, शान्ति, वंशीधर, पत्नी, कन्या, वरपिता, वर, उद्घोषक, खुशीराम, एक व्यक्ति, दूसरा व्यक्ति।

साक्षरता—

जनजागरण के बिना साक्षरता का स्वप्न मात्र स्वप्न है। सरकार तब तक कुछ नहीं कर सकती, जब तक जन सहयोग की प्राप्ति नहीं होगी। आरक्षण के नाम पर दलितोद्धार छलावा मात्र है। साक्षरता कैसे बढ़े? पढ़ने के प्रति जन-रुचि कैसे पैदा हो? मुख्य रूप से रूपक का यही वस्तु विषय है। इसमें सात दृश्य हैं। पात्र संख्या 15 है-सन्यासी, सावित्री, रमेश, बालक, बालिका, दरिद्रनारायण, सतीश, श्रेष्ठी, क्षमा, ताम्बूलदास, भोलाराम, चन्दनमूल, चान्दनी, भोली एवं कृषक।

ईश्वरस्य कार्यम्—

ईश्वर की सत्ता सर्वत्र है, परन्तु भौतिकवादी युग में ईश्वर-आस्था का हास निरन्तर हो रहा है। गुरु-उपदेश, उपदेशमात्र रह गये हैं। सुशिक्षित व्यक्ति विनीत बनकर आस्थावान् होकर भवानी

शंकर का कृपापात्र बनता है तथा आस्था से ही अपना परिचय कराता है। श्रद्धावान् व्यक्ति ही ज्ञान की प्राप्ति करता है। ईश्वर की कृपा ही रंक और राजा बनाती है और सतत चिन्तन, मनन, तप के बिना ईश्वर की प्राप्ति नहीं। रूपक का आधार यही है।

इसमें चार दृश्य हैं और पात्र ११ हैं-वेद प्रकाश, ज्ञान प्रकाश, यज्ञदत्त, ब्रह्मचारी, आचार्य, मुनादीवाला, महामन्त्री, द्वारपाल, महाराज, मन्त्री, सेवक।

प्रेरकम् (नाटकम्)—

देश के प्रति हमारा क्या कर्त्तव्य है, क्योंकि देश हमारा है। देश की सुरक्षा करना प्रत्येक देशवासी का कर्त्तव्य है। स्वतन्त्रता सेनानियों के बलिदान-स्वरूप देश स्वतन्त्र हुआ है। उनका बलिदान हम स्वतंत्रता दिवसों में मनाते हैं। स्वतन्त्रता सैनिकों को हम स्मरण करते हैं। यही इस नाटक का आधार है। दो दृश्यों के इस रूपक में-शिक्षक, सुधीर, विकास, सुकीर्ति, स्वप्निल, लक्ष्मीबाई, चन्द्रशेखर, भगतसिंह, सुखदेव, अशफाक उल्ला खान, कतिचित्सैनिक, छात्र।

3.4.6 चण्डीय प्रसाद नैथाणी—

वर्ष 1927 में एकेश्वर, पौड़ी के समीप ग्राम पाली, पट्टी गुगाड़स्यूं में चण्डीप्रसाद नैथाणी का जन्म हुआ था। पिता का नाम लीलानन्द तथा माता का नाम गायत्री देवी था। पितामह हरिदत्त नैथाणी राजकीय पण्डित थे। इनकी प्रारंभिक शिक्षा गढ़वाल में हुई, तदनन्तर वाराणसी जाकर उच्च शिक्षा प्राप्त की। साहित्य आचार्य की परीक्षा उत्तीर्ण कर अहमदाबाद आ गए और विश्वविद्यालय कॉलेज में प्राध्यापक नियुक्त हो गए। गुजरात विश्वविद्यालय से संस्कृत में एम०ए० परीक्षा ससम्मान उत्तीर्ण कर शोधकार्य सौराष्ट्र विश्वविद्यालय से सम्पन्न किया, जो गुजराती भाषा में है। नैथाणी जी का संस्कृत, हिन्दी तथा अंग्रेजी भाषा पर समान अधिकार था। इनके द्वारा लगभग 30 ग्रन्थों का लेखन, अनुवाद एवं समीक्षात्मक सम्पादन गुजराती भाषा में हो चुका है। कृत्तियाँ –

चण्डीप्रसाद नैथाणी द्वारा लिखित साहित्य का परिचय—

संस्कृत वांग्मयन इतिहास संस्कृत कवि अध्ययन, मृच्छकटिक टीका, कादम्बरी (महाश्वेता वृतान्त तक टीका), भाषनाटक चक्र, महाभारत पर आधारित नाटकों की समीक्षा टीका एवं व्याख्या, श्रीमद्भगवद्गीता, अभिज्ञानशाकुन्तलम (दो भाग), मृच्छकटिक (भूमिकायुक्त भाषा टीका) हैं। इनके अतिरिक्त संस्कृत के प्रायः अधिकांश नाटकों का विस्तृत भूमिका के साथ सम्पादन, टीका एवं व्याख्या की है। इनका समग्र साहित्य गुजराती भाषा में लिखित एवं प्रकाशित है।

अभ्यास प्रश्न

टिप्पणी

1. लक्ष्मीपति पाण्डे
2. विश्वेश्वर पाण्डे

3. राम कृष्ण शर्मा नौटियाल

4. आचार्य मदन मोहन जोशी

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. पण्डित भगीरथ पाण्डे जाने जाते हैं -

(क) नाटककार के रूप में

(ख) गद्यकार के रूप में

(ग) व्याकरणकार के रूप में

(घ) टीकाकार के रूप में

2. फर्रूखशेयरचरितम् और अब्दुल्लाहचरितम नामक ऐतिहासिक काव्य किसकी रचनाएँ है-

(क) लक्ष्मीपति पाण्डे

(ख) शिवानन्द पाण्डे

(ग) पंडित पद्मदेव

(घ) त्रिलोचन जोशी

3. जयदत्त उप्रेती का मूल निवास है।

(क) अल्मोड़ा के पंतौली ग्राम में

(ख) अल्मोड़ा के 'तिलाड़ी' गाँव में

(ग) पिथौरागढ़ के 'बरसायत' गाँव में

(घ) अल्मोड़ा के पाटिया गाँव में

4. नित्यानन्द पन्त किस शती के साहित्यकार है।

(क) 18 वीं शती

(ख) 19 वीं शती

(ग) 20 वीं शती

(घ) 21 वीं शती

5. नित्यानन्द पन्त द्वारा लिखित ग्रन्थ है।

(क) संस्कार दीपक

(ख) अन्व्यकर्मदीपक

(ग) सापिण्ड्यदीपक

(घ) उक्त सभी

6. लक्ष्मीपति किस गोत्र के पाण्डे ब्राहमण थे।

(क) भारद्वाज गोत्र

(ख) गौतम गोत्र

(ग) वशिष्ठ गोत्र

(घ) कश्यप गोत्र

7. चण्डीप्रसाद नैथाणी का जन्म कब हुआ।

(क) 1927

(ख) 1928

(ग) 1926

(घ) 1930

8. आचार्य मदन मोहन का जन्म कब हुआ।

(क) 1945

(ख) 1946

(ग) 1948

(घ) 1944

9. भुवनकोशविमर्श रचना है।

(क) आचार्य मदन मोहन

(ख) चण्डीप्रसाद नैथाणी

(ग) जगदीश प्रसाद सेमवाल

(घ) आचार्य देवी प्रसाद त्रिपाठी

10. इन्दु विलास रचना है।

(क) आचार्य मदन मोहन

(ख) चण्डीप्रसाद नैथाणी

(ग) जगदीश प्रसाद सेमवाल

(घ) आचार्य देवी प्रसाद त्रिपाठी

रिक्त स्थान पूर्ति

1. जयदत्त उप्रेती का जन्म सन् .....ईसवी में हुआ था।
2. नित्यानन्द पन्त के पूर्वज अल्मोड़ा जनपद के .....गाँव के रहने वाले थे।

3. आचार्य विश्वेश्वर अल्मोड़ा के निकट .....गाँव के रहने वाले थे।

4. "बाङ्गलादेशोदयम्" नाटक में .....अंक हैं।

सत्य/असत्य बताइए।

1.उन्नसवीं सदी में उत्तराखण्ड में संस्कृत काव्य की समृद्ध परम्परा दिखाई देती है।

2. बीसवीं शताब्दी में उत्तराखण्ड में संस्कृत साहित्य की परम्परा खण्डित दिखाई देती है।

3. जयदत्त उप्रेती का शोध ग्रन्थ 'वेदों में इन्द्र' है।

4. बीसवी शती के प्रख्यात विद्वान तारादत्त का जन्म पिथौरागढ़ जनपद के 'बरसायत' ग्राम में हुआ था।

5. आचार्य मदन मोहन का जन्म ग्राम-गढ़मोनू खातस्यूं, पौड़ीगढ़वाल में 20 मई, 1945 ई० को हुआ था।

3.4 सारांश

अठारवीं शताब्दी से अब तक अनवरत रूप से उत्तराखण्ड में संस्कृत साहित्य की समृद्ध परम्परा सतत् गतिमान रही इस कालखण्ड में उत्तराखण्ड के कुमाँऊ एवं गढ़वाल क्षेत्र में अनेकानेक स्वनामधन्य कवि हुए जिनमें से प्रमुख कवियों एवं उनके काव्यों का परिचय इस इकाई में दिया गया है। इनके अलावा इस शताब्दी में कुमाँऊ में अन्य भी साहित्यकार हुए जिनका विषय विस्तार भय से हम यहाँ पर उल्लेख नहीं कर सके। गढ़वाल में भी अनेक साहित्यकार हुए जिन्होंने संस्कृत साहित्य की विभिन्न विधाओं में ग्रन्थ रचना करके संस्कृत साहित्य भण्डार की अभिवृद्धि में अपना अतुलनीय योगदान दिया। इन सभी कवियों द्वारा विरचित ग्रन्थ संस्कृत प्रेमी जनों के प्रेरणा स्रोत हैं। कुमाँऊ तथा गढ़वाल में संस्कृत कवियों के अलावा भी उत्तराखण्ड में ज्योतिषादि ग्रन्थों की रचना करने वाले विद्वानों की भी एक लम्बी परम्परा है जिसका उल्लेख विषय विस्तार हो जाने के कारण नही किया जा सका किन्तु यह सत्य है कि उनका योगदान भी संस्कृत वाङ्मय के प्रति अमूल्य है।

3.5 पारिभाषिक शब्दावली

3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

बहुविकल्पीय प्रश्न—

1. घ 2. क 3. क 4. ग 5. घ

6. क 7. क 8.क 9. घ 10. ग

रिक्त स्थान—

1. 1933 **2.** 'तिलाड़ी' 3. पाटिया 4. दश

सत्य/असत्य—

1. सत्य 2. असत्य 3. सत्य 4. सत्य 5. सत्य

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ/सहायक सामग्री

1. गढ़वाल की संस्कृत साहित्य को देन, डॉ. प्रेमदत्त चमोली
2. कूर्मांचल में संस्कृत साहित्य की परम्परा, बसन्तबल्लभ भट्ट
3. कुमाऊँ का इतिहास, बद्रीदत्त पाण्डे

3.8 निबन्धात्मकप्रश्न

1. बीसवीं शताब्दी के गढ़वाल के किन्हीं दो साहित्यकारों का परिचय दें।
2. प.भगीरथ पाण्डेय के जीवन एवं उनकी कृतियों का परिचय दीजिए।
3. उन्नीसवीं शताब्दी के कुमाऊँ के किन्हीं दो साहित्यकारों का परिचय दें।
4. जगदीश प्रसाद सेमवाल के जीवन एवं उनकी कृतियों का परिचय दीजिए।
5. आचार्य मदन मोहन के जीवन का परिचय दीजिए।

तृतीय सेमेस्टर / SEMESTER-III
खण्ड- तीन
महाकाव्य एवं अन्य विधाएं

इकाई 1- गङ्गापुत्रावदानम् महाकाव्य की विषय वस्तु एवं महाकाव्यत्व

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 महाकवि निरंजन मिश्र का जीवन परिचय
1.3.2 कविवर की शिक्षा
1.3.3 कविवर का वैयक्तिकजीवन
1.3.4 कविवर की कृतियाँ
1.4 गङ्गापुत्रावदानम् महाकाव्य का महाकाव्यत्व
1.5 सारांश
1.6 पारिभाषिक शब्दावली
1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.8 संदर्भ ग्रंथ सूची एवं अन्य सहायक पुस्तकें
1.9 निबंधात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों !

प्रस्तुत इकाई में आप आधुनिक संस्कृत साहित्य में अपना नया योगदान करने वाले आधुनिक कवियों में महाकवि निरंजन मिश्र के जीवन परिचय का अध्ययन करेंगे । महाकवि की शिक्षा एवं उनके द्वारा रचित काव्यों के बारे में भी जानेंगे । कि कैसे उन्होंने कठिन परिश्रम के माध्यम से ज्ञानार्जन किया । कवि ने बचपन से ही पारम्परिक संस्कृत शिक्षा आरम्भ की थी । पारम्परिक शिक्षा आरम्भ करने के पीछे कारण था, पिता श्री की हार्दिक इच्छा और पारिवारिक दीनता । पितृव्यपाद के चरणों की सेवा करके लघुकौमुदी का पाठ आरम्भ किया था । गाँव में स्थित दुर्गा संस्कृत उच्च विद्यालय से प्रथमा एवं मध्यमा कक्षा उत्तीर्ण की । उचित शिक्षा नहीं मिल पाने के कारण इन्होंने दीनता को अंगूठा दिखाते हुए दरभंगा जाने का निर्णय लिया । मिथलाञ्चलमें स्थित दरभंगा नगर संस्कृत की पारम्परिक शिक्षा का केंद्र है । वहाँ पहुँच कर ईश्वरीय कृपा से जगदीश नारायण ब्रह्मचर्याश्रम आदर्श संस्कृत महाविद्यालय 'लगमा' का इन्हे परिचय मिला और ये शिक्षा पाने की कामना से वहीं चले गए । यद्यपि वह स्थान पूर्ण रूप से अनजाना था । परंतु जब मन में शिक्षा प्राप्त करने की बलवती अभिलाषा हो तो भला कोई भी राह कठिन कैसे हो सकती है । वहाँ इन्हे पहले तो बहुत कठिनायियों का सामना करना पड़ा । जिसका कारण था मैथली भाषा को नहीं जानना और द्वितीय कारण था धन का आभाव । वहीं इन्हे आपने गुरु डॉ शंकर जी झा से मुलाकात हुई । इन्हें देखते ही परस्पर दोनों के प्रति आकर्षित जैसे हो गए । साहित्य , व्याकरण आदि शास्त्रों के ज्ञाता वैदेशिक भाषाओं के ज्ञाता इस श्रेष्ठ गुरु की कृपा से साहित्य शास्त्र का अध्ययन आरम्भ हुआ । इन्होंने एक-एक अक्षर रटाकर मैथली भाषा सिखाई और साहित्य शास्त्र में प्रवेश करवाया । श्लोक निर्माण करने की कला भी इन्ही से मिली । शिष्य गुरु की सेवा में तल्लीन और गुरु शिष्य के अन्तः करण में ज्ञान भरने में तल्लीन । इन दोनों गुरु शिष्यों की चर्चा उस विद्यालय में किंवदन्ति बन गई इत्यादि । साथ ही आप इस इकाई में उनके द्वारा रचित महाकाव्य गङ्गापुत्रावदानम् के महाकाव्यत्व के बारे में भी अध्ययन करेंगे कि महाकाव्य के महाकाव्यत्व का परीक्षण हेतु यह देखना पड़ता है कि पूर्व के आचार्यों द्वारा प्रस्तुत काव्य लक्षण उस काव्य पर घटित होता है या नहीं । कतिपय लक्षण महाकाव्य के लिए परमावश्यक हैं और कुछ अस्थायी लक्षण होते हैं। आधुनिक काव्य शास्त्रियों प्रसिद्ध आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी महोदय ने अपने अभिनवकाव्यसूत्र में स्पष्ट किया है कि - **"लोकानुकीर्तनं काव्यम्"**

त्रिविधलोकों की व्याख्या करते आचार्य लिखते हैं- **स च लोकस्त्रिविधः ।** आचार्य जी के कथनानुसार तीनों लोकों के महापुरुषों के सच्चरित्र को सहृदयों के सामने शब्दार्थ के माध्यम से उपस्थापित करना काव्य है ।पूर्व में घटित चरित को तो शब्दार्थ के माध्यम से ही उपस्थापित किया जा सकता है । काव्य के विषय में पूर्वाचार्यों द्वारा रचित लक्षण है कि काव्य

सर्गबंधनादि गुणों से युक्त होना चाहिये । **इतिवृत्त** किसी भी महाकाव्य का इतिवृत्त या तो इतिहास प्रसिद्ध कथा होती है या किसी मान्य सज्जन के आश्रित होती है । आचार्य विश्वनाथ लिखते हैं - **इतिहासोद्भवं वृत्तमन्यद्वा सज्जनाश्रयम्** गङ्गापुत्रावदानम् महाकाव्य की कथा मान्य सज्जन के आश्रय में है । इस समय इसे सज्जनाश्रय कथा ही कहा जायेगा । जिन महापुरुष के चरित को देखकर समग्रसाधुवृन्द ने मुक्तकंठ से उसे गंगापुत्र की उपाधि प्रदान की । इस महाकाव्य के नायक में पितामह भीष्म, मुनिवर परशुराम, एवं राजर्षि भगीरथ के गुण पाये जाते हैं। महाकवि लिखते हैं-

गङ्गायास्तनयः कथं कलियुगे कीर्तिं गतो द्वापरे
पूर्वेषामृणमुक्तये ह्यविचलः सत्येन कीर्तिं गतः ।
मातुर्दीनदशां विलोक्य परशोर्धाराभिरामः श्रुतः
किं तेषां समुदाय एव निगमानन्दोऽभवद् भूतले ।।

अर्थात्- कलयुग में गङ्गा का पुत्र कैसे प्रकट हो गया ? क्योंकि पितामह भीष्म को तो द्वापर में ही कीर्ति प्राप्त हो चुकी है । अपने पित्रों के उद्धार के लिए गङ्गा जी को धरा में लाने वाले भगीरथ भी सतयुग के साथ ही चले गये । अपनी माता की दिनावस्था को देखकर जिसने परशु की धारा से अपनी अमल कीर्ति की स्थापना की, वो परशुराम भी सुने गये । तो क्या यह निगमानन्द (इस महाकाव्य का नायक उपनाम गंगापुत्र) इन तीनों का समुदाय बनाकर कलियुग में भूतल पर आ गया है ? तीनों का ही समुदाय अर्थात नाम से गंगापुत्र, गंगा की रक्षा के लिए अविचल लड़ने वाला होने से भगीरथ, गंगा माता की दीनदशा का प्रतीकार करने के लिये अहिंसात्मकव्रत पालन करने वाला परशुराम । ये तीनों गुण निगमानन्द में देखे गये हैं ।

कवि गणों ने जिस नायक को अपना आधार बनाया है उसकी गाथा केवल सुनी सुनाई है । कतिपय नायक ऐसे नायक हैं जिन्हे कवि देख रहे हैं । अर्थात जो वर्तमान में जीवित हैं । उनसे जीवन की गाथा स्वयं सुनी जा सकती है । परंतु गङ्गापुत्रावदानम् के नायक दोनों पक्ष में हैं अर्थात कवि ने उनका जीवन स्वयं भी देखा है और उनके परलोक पथिक होने के बाद उनकी प्रतिष्ठा भी समाज में देखी है । अतः कवि को विश्वास है कि यह चरित्र सहृदय सज्जनों के लिए निश्चित रूप से काव्य रूप में कर्णपेय होगा । महाकाव्यत्व के और क्या-क्या लक्षण होते हैं वह आप प्रस्तुत इकाई मेंविस्तार से अध्ययन करेंगे ।

1.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात आप-

- आधुनिक संस्कृत साहित्य में अपना नया योगदान करने वाले आधुनिक कवियों में महाकवि निरंजन मिश्र जी के व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व के बारे में जान सकेंगे ।

- महाकवि निरंजन मिश्र जी द्वारा रचित गङ्गापुत्रावदानम् महाकाव्य के महाकव्यत्व के बारे में जान सकेंगे।
- आधुनिक संस्कृत महाकव्यों से आप परिचित होंगे।
- काव्य सृजनात्मक क्षमता का विकास होगा।

1.3 महाकविनिरंजन मिश्र का जीवन परिचय

आधुनिक संस्कृत साहित्य में अपना नया योगदान करने वाले आधुनिक कवियों में महाकवि निरंजन मिश्र का साहित्य स्वयं में उनका परिचय प्रस्तुत करता है ।बिहार राज्य में भागलपुर जिले के अंतर्गत भ्रमरपुर ग्राम में 'मररै वारि' मूल के कश्यप गौत्रीय ब्राह्मण वंश में महाकवि निरंजन मिश्र का जन्म 2 जनवरी 1966 ई० को हुआ। इनके पितामह पंडित श्री सीताराम मिश्र तत्कालीन ब्राह्मण समाज के अग्रगण्य पंडितों में लब्धप्रतिष्ट धर्म शास्त्र के मर्मज्ञ विद्वान थे। जिनकी प्रतिष्ठा दूर-दूर तक फैली थी। इनके चार पुत्र हुए पंडित श्री सूर्यनारायण मिश्र, पंडित श्री सुखदेव मिश्र, श्री उदित नारायण मिश्र, श्री नरेश मिश्र, पंडित श्री सुखदेव मिश्र की पाँच पुत्रियाँ एवं दो पुत्र हुए। पुत्रों में ज्येष्ठ श्री धनंजय मिश्र, और छोटे महाकवि निरंजन मिश्र। इनके पिता पंडित श्री सुखदेव मिश्र पौरोहित्यक्रम प्रवीण थे। अपने सहज सरल स्वभाव के कारण सम्पूर्ण समाज में इन्हे प्रतिष्ठा की दृष्टि से देखता था। इनके व्यावहारिक शिक्षा ने इन्हे पूर्ण पंडित बना दिया था। यही कारण रहा की महाकवि निरंजन मिश्र के जीवन को सन्मार्ग पर लाने में अक्षुण्ण दीपक का काम किया। महाकवि निरंजन मिश्र की माता श्रीमती भवानी (भामा) देवी थी। कुशलता की प्रति मूर्ति स्वरुपा सौम्यता की साक्षात देवी निष्कामकर्म सेविका भगवद भक्ति परायणा थी। भगवान आशुतोष की सेवा करना इस दम्पति का नित्यकर्म था ।कविवर के ज्येष्ठ पितृव्य पं सूर्यनारायण मिश्र व्याकरण , न्याय, एवं धर्मशास्त्र के प्रकाण्ड पंडित थे। इन्ही पितृव्यपाद के चरणों में बैठकर कविवर ने लघुकौमुदी का पाठ प्रारम्भ किया था। इनका स्मरण करते हुए मदालसा चम्पू हिन्दी व्याख्या की भूमिका में कविवर लिखते हैं –

वैयाकरणमूर्धन्यं धर्मशास्त्रविचक्षणम्।
सूर्यनारायणं नामपितृव्यं प्रणमाम्यहम्॥

अपने इन्हीं प्रथम गुरु पितृव्यपाद के आशीर्वाद के फलस्वरूप कविवर ने शास्त्र में प्रवेश किया और साथ ही कर्मकाण्ड आदि की शिक्षा भी ग्रहण की। कविवर के पिता श्री की वाणी पद-पद पर मार्गदर्शक हुई यह तो सत्य है। कविवर को इनके पिता जी रहीम की एक कविता बचपन से ही सुनाया करते थे और समझाया करते थे। वह पद्य है –

जब लगि वित्त न आपनो तब लगि मित्त न कोय।
रहिमन अम्बुज अम्बु विनु रवि नाहीं हित होय॥

रहीम जी के इस पद्य ने कविवर को अपना धन (विद्या धन) अर्जित करने के लिये बहुत प्रेरित किया। पिता श्री के पास धन तो नहीं था पर सत्प्रेरक सदुक्तियाँ अनेक थी। जो वास्तविक में उनका धन था। बचपन में जब भी वह अपने पिता श्री के समक्ष कोई समस्या रखते थे तो यही उत्तर मिलता था कि मेरे पास पैसे तो नहीं हैं पर यदि तुझे अच्छा लगता है तो करो जितना हो सकेगा उतनी मदद हम करेंगे बाकी तुम स्वयं जानो। अपने पिता श्री के आशीर्वाद को ही कविवर ने अपना मूल मंत्र समझा है। मदालसा चम्पू में समर्पण के रूप में एक पद कविवर ने लिखा है –

जिससे लेकर आशीष चला वीणापाणि के प्रांगण में
मात्र वही शस्त्रास्त्र लिये फिरता हूँ बुधसमरांगण में।
जिसके बल करना चाह रहा हूँ सपनों को साकार यहाँ
उस पूज्य चरण में आज समर्पण करता यह उपहार यहाँ।।

1.3.2 कविवर की शिक्षा-

कवि ने बचपन से ही पारम्परिक संस्कृत शिक्षा आरम्भ की थी। पारम्परिक शिक्षा आरम्भ करने के पीछे कारण था। पिता श्री की हार्दिक इच्छा और पारिवारिक दीनता। पितृव्यपाद के चरणों की सेवा करके लघुकौमुदी का पाठ आरम्भ किया था। गाँव में स्थित दुर्गा संस्कृत उच्च विद्यालय से प्रथमा एवं मध्यमा कक्षा उत्तीर्ण की। उचित शिक्षा नहीं मिल पाने के कारण इन्होंने दीनता को अंगूठा दिखाते हुए दरभंगा जाने का निर्णय लिया। मिथलाञ्चलमें स्थित दरभंगा नगर संस्कृत की पारम्परिक शिक्षा का केंद्र है। वहाँ पहुँच कर ईश्वरीय कृपा से जगदीश नारायण ब्रह्मचर्याश्रम आदर्श संस्कृत महाविद्यालय 'लगमा' का इन्हे परिचय मिला और ये शिक्षा पाने की कामना से वहीं चले गए। यद्यपि वह स्थान पूर्ण रूप से अनजाना था। परंतु जब मन में शिक्षा प्राप्त करने की बलवती अभिलाषा हो तो भला कोई भी राह कठिन कैसे हो सकती है। वहाँ इन्हे पहले तो बहुत कठिनायियों का सामना करना पड़ा। जिसका कारण था मैथली भाषा को नहीं जानना और द्वितीय कारण था धन का आभाव। वहीं इन्हे आपने गुरु डॉ शंकर जी झा से मुलाकात हुई। इन्हे देखते ही परस्पर दोनों – दोनों के प्रति आकर्षित जैसे हो गए। साहित्य , व्याकरण आदि शास्त्रों के ज्ञाता वैदेशिक भाषाओं के ज्ञाता इस श्रेष्ठ गुरु की कृपा से साहित्य शास्त्र का अध्ययन आरम्भ हुआ। इन्होंने एक-एक अक्षर रटाकर मैथली भाषा सिखाई और साहित्य शास्त्र में प्रवेश करवाया। श्लोक निर्माण करने की कला भी इन्ही से मिली। शिष्य गुरु की सेवा में तल्लीन और गुरु शिष्य के अन्तः करण में ज्ञान भरने में तल्लीन। इन दोनों गुरु शिष्यों की चर्चा उस विद्यालय में किंवदन्ति बन गई। 'शास्त्री प्रतिष्ठा' की परीक्षा पास कर कामेश्वर सिंह दरभंगा संस्कृत विश्वविद्यालय दरभंगा में आचार्य में प्रवेश लिया और वहाँ सुप्रसिद्ध विद्वानों डॉ उदयकान्त झा, डॉ देवनारायण झा, डॉ लक्ष्मी नाथ झा, डॉ मीना शास्त्री, आदि से शिक्षा प्राप्त की। कविवर ने आचार्य कक्षा में प्रथम श्रेणी में प्रथम स्थान प्राप्त किया।

जो उस विश्वविद्यालय के लिये एक नया कीर्तिमान (रिकार्ड) था। पुनः उसी विश्वविद्यालय से कविवर ने फलित ज्यौतिष में आचार्य एवं विद्यावारिधि की उपाधि प्राप्त की। विद्यावारिधि के लिए इनका विषय था -

'साहित्यदर्पणस्य विज्ञप्रिया रामचरणतर्कवागीशकृतटीकयोस्तुलनात्मकमध्ययनम्' ।

1992 ई ० में इन्हे विद्यावारिधि की उपाधि प्राप्त हो गयी। इस उपाधि को पाकर जब इन्होंने अपनी बीती जिंदगी को देखा तो अद्भुत दृश्य इन्हे दिखाई दिया। जिसकी कल्पना इन्होंने नहीं की थी। न इनके जानने वालों ने कभी की होगी वो उपाधि इन्हे आज मिल गई। शास्त्री एवं आचार्य कक्षा में पढ़ाई के समय ही इन्होंने भारत सरकार के मानवसंसाधन विकास मंत्रालय द्वारा आयोजित अखिलभारतीय प्रतियोगिताओं में तीन स्वर्ण पदक भाषण एवं समस्या पूर्ति प्रतियोगिता में प्राप्त कर लिए थे। ललितानारायण मिथिला विश्वविद्यालय दरभंगा से एम.ए संस्कृत की उपाधि भी प्राप्त की।

1.3.3 कविवर का वैयक्तिक जीवन-

महाकवि निरंजन मिश्र का पाणिग्रहण 1992 ई० में 'बुधवारै महिषी' मूल के 'वत्सगोत्रीय' 'गजहरा' ग्राम निवासी ब्राह्मण श्री प्रभाकर झा की पुत्री निर्मला देवी संग हुआ। पश्चात आजीविका की खोज में इनका समय बीतता गया। फिर केन्द्रीय विद्यालय टुण्डू धनबाद, डी.ए .वी पुरलिया, लक्षमीवाती उपशास्त्री महाविद्यालय सरिसवपाही में अपना योगदान दिया। 1998 ई० के नवंबर में श्री भगवान दास आदर्श संस्कृत महाविद्यालय हरिद्वार में व्याख्याता के पद को अलंकृत किया। स्थान परिवर्तन को साहित्य सेवा में विघ्न मानते हुए इन्होंने कहीं अन्यत्र जाने की वृत्ति ढूंढने का प्रयास भी नहीं किया। यहाँ रहते हुए इन्होंने पारिवारिक दायित्व को निभाते हुए संस्कृत साहित्य की सेवा की है। दिल्ली संस्कृत अकादमी ने लेखन पुरस्कार, भाउरावदेवरस न्यास लखनऊ से युवा साहित्य पुरुस्कार, उत्तराखंड संस्कृत अकादमी से समस्या पूर्ति, लघु कथा लेखन, लघु नाटक लेखन आदि पुरुस्कार प्राप्त किए। साहित्य सर्जन के साथ-साथ आकाशवाणी नज़ीबाबाद से वार्ता प्रसारण एवं कवि सम्मेलन आदि कार्य कर्मों में भी योगदान करते रहे। विभिन्न शोध संगोष्ठियों में अपने शोध पत्रों के साथ अपनी उपस्थिति दर्ज कराते रहे। सामाजिक कार्यों में भी यथा समय योगदान देते रहे। गंगा की सेवा विषय कार्यों में समुचित योगदान के लिए विभिन्न सभाओं ने इन्हे सम्मानित किया है। संस्कृत के विकास के लिए नित्य तत्पर रहने वाले कविवर सर्वदा छात्रों और शिष्यों को संस्कृत के प्रति जागरूक करते हैं और आकर्षित करने का प्रयास करते हैं।

कविवर निरंजन मिश्र जी आधुनिक साहित्यधारा के प्रतीक हैं। सामाजिक समस्याओं पर इनका अभिमत वास्तव में सहृदयहृदयानुरंजक होता है। आत्मानुभूत विषयों का वर्णन वस्तुतः सबको अपनी ओर आकर्षित कर लेता है। काव्य की सभी आधुनिक विधाओं में इनकी लेखनी अबाध गति से चलती है। महाकाव्य, लघुकाव्य, शतककाव्य, चम्पूकाव्य, गीत, गजल, बालगीत, बाल

कविता, दीर्घकविता, इत्यादि सभी विषय इनकी लेखनी का नृत्य स्थल है। कविवर ने गरीबी को मानो बहुत निकट से देखा हो। सुभगाचरितम् में ये लिखते हैं –

दरिद्रताया नवनाट्यरङ्गं
गृहं द्विजस्यास्य कृतं विधात्रा।
चान्द्रयणं यत्रकरोतिपश्य
विलस्थितोऽयं खलु मूषिकोऽपि।।
गृहस्थितोऽयं नवचुल्हिकापि
प्रतीक्षते पावकदर्शनञ्च।
ग्रामीणलोकस्य गृहे यथा वा
सदा प्रतीक्ष्या भवतीह विद्युत्।।

1.3.4 कविवर की कृतियाँ –

कविवर निरंजन मिश्र जी की कृतियाँ कुछ इस प्रकार से वर्गीकृत किया गया है।

1. व्याख्यात्मक, 2. शोधात्मक, 3. अनुवादात्मक, 4. मौलिक (कथा,लघुकाव्य, महाकव्य) 5. हिन्दी भाषा की रचना सर्वप्रथम इनकी व्याख्यात्मक कृतियाँ कुछ इस प्रकार से हैं।

1. **व्याख्यात्मक-** 1. कुवलयानन्द (हिन्दी टीका) 2. नलचम्पू (प्रथम उच्छवास, हिन्दी संस्कृत टीका) 3. मदालसा चम्पू (सम्पादन एवं हिन्दी टीका) 4. मुद्राराक्षसम् (संस्कृत हिन्दी टीका) 5. नैषधीयचरितम् प्रथम सर्ग की संस्कृत हिन्दी टीका 6. नैषधीयचरितम् तृतीय सर्ग की हिन्दी संस्कृत टीका।

2. शोधात्मक- निबन्धात्मक काव्यप्रकाश भाग 1, निबन्धात्मक काव्यप्रकाश भाग 2, निबन्धात्मक काव्यप्रकाश भाग3

3. अनुवादात्मक- 1 आमोद तरंगिणी- मूल, खट्टर ककाक तरंग, (मैथलीभाषा) 2 चित्रलेखा- अनूदित हिन्दी चित्रलेखा।

4. मौलिक- काव्यामाला (पाँच लघु काव्यों का संग्रह) 2 काव्यकुंजम् (चार लघु काव्य एवं स्फुट कविता का संग्रह) 3 गीत-वल्लरी 4 ग्रामशतकम् 5 प्रमत्तकाव्यम् 6 कुटजकुसुमम् 7 मनोहर कथावली (बालकथा) 8 अरण्यरोदानम् 9 वंदे भारतम् 10 गङ्गापुत्रावदानम् (महाकाव्यम्) 11 केदारघाटी विधवा बभूव 12 ग्रन्थिबन्धनम् (महाकाव्यम्)

5. हिन्दी रचना- 1 अज्ञात प्रेयसी (हिन्दी कविता संग्रह) 2 अनबूझ पहेली (हिन्दी मुक्तक काव्य) 3 सत्य नारायण व्रत कथा (हिन्दी पद्यात्मक)

1.4 गङ्गापुत्रावदानम् महाकाव्य का महाकाव्यत्व

महाकवि निरंजन मिश्र जी द्वारा रचित गङ्गापुत्रावदानम् महाकव्य सर्वविद है। महाकाव्य के महाकाव्यत्व का परीक्षण हेतु यह देखना पड़ता है कि पूर्व के आचार्यों द्वारा प्रस्तुत

काव्य लक्षण उस काव्य पर घटित होता है या नहीं । कतिपय लक्षण महाकाव्य के लिए परमावश्यक हैं और कुछ अस्थायी लक्षण होते हैं । आधुनिक काव्य शास्त्रियों प्रसिद्ध आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी महोदय ने अपने अभिनवकाव्यसूत्र में स्पष्ट किया है कि - **"लोकानुकीर्तनं काव्यम्"**

त्रिविधलोकों की व्याख्या करते आचार्य लिखते हैं- **स च लोकस्त्रिविधः ।** आचार्य जी के कथनानुसार तीनों लोकों के महापुरुषों के सच्चरित्र को सहृदयों के सामने शब्दार्थ के माध्यम से उपस्थापित करना काव्य है ।पूर्व में घटित चरित को तो शब्दार्थ के माध्यम से ही उपस्थापित किया जा सकता है । काव्य के विषय में पूर्वाचार्यों द्वारा रचित लक्षण है कि काव्य सर्गबंधनादि गुणों से युक्त होना चाहिये ।

1. इतिवृत्त- किसी भी महाकाव्य का इतिवृत्त या तो इतिहास प्रसिद्ध कथा होती है या किसी मान्य सज्जन के आश्रित होती है । आचार्य विश्वनाथ लिखते हैं -

इतिहासोद्भवं वृत्तमन्यद्वा सज्जनाश्रयम्

गङ्गापुत्रावदानम् महाकाव्य की कथा मान्य सज्जन के आश्रय में है । इस समय इसे सज्जनाश्रय कथा ही कहा जायेगा। जिन महापुरुष के चरित को देखकर समग्रसाधुवृन्द ने मुक्तकंठ से उसे गंगापुत्र की उपाधि प्रदान की । इस महाकाव्य के नायक में पितामह भीष्म, मुनिवर परशुराम, एवं राजर्षि भगीरथ के गुण पाये जाते हैं ।

महाकवि लिखते हैं-

गङ्गायास्तनयः कथं कलियुगे कीर्तिं गतो द्वापरे
पूर्वेषामृणमुक्तये ह्यविचलः सत्येन कीर्तिं गतः ।
मातुर्दीनदशां विलोक्य परशोर्धाराभिरामः श्रुतः
किं तेषां समुदाय एव निगमानन्दोऽभवद् भूतले ।।

अर्थात्- कलयुग में गङ्गा का पुत्र कैसे प्रकट हो गया ? क्योंकि पितामह भीष्म को तो द्वापर में ही कीर्ति प्राप्त हो चुकी है । अपने पित्रों के उद्धार के लिए गङ्गा जी को धरा में लाने वाले भगीरथ भी सतयुग के साथ ही चले गये । अपनी माता की दिनावस्था को देखकर जिसने परशु की धारा से अपनी अमल कीर्ति की स्थापना की, वो परशुराम भी सुने गये । तो क्या यह निगमानन्द (इस महाकाव्य का नायक उपनाम गंगापुत्र) इन तीनों का समुदाय बनाकर कलियुग में भूतल पर आ गया है ? तीनों का ही समुदाय अर्थात नाम से गंगापुत्र, गंगा की रक्षा के लिए अविचल लड़ने वाला होने से भगीरथ, गंगा माता की दीनदशा का प्रतीकार करने के लिये अहिंसात्मकव्रत पालन करने वाला परशुराम । ये तीनों गुण निगमानन्द में देखे गये हैं ।

कवि गणों ने जिस नायक को अपना आधार बनाया है उसकी गाथा केवल सुनी सुनाई है । कतिपय नायक ऐसे नायक हैं जिन्हे कवि देख रहे हैं । अर्थात जो वर्तमान में जीवित हैं । उनसे जीवन की गाथा स्वयं सुनी जा सकती है । परंतु गङ्गापुत्रावदानम्के नायक दोनों पक्ष में हैं

अर्थात कवि ने उनका जीवन स्वयं भी देखा है और उनके परलोक पथिक होने के बाद उनकी प्रतिष्ठा भी समाज में देखी है। अतः कवि को विश्वास है कि यह चरित्र सहृदय सज्जनों के लिए निश्चित रूप से काव्य रूप में कर्णपेय होगा।

2. आदि में मंगलाचरण- काव्य के आदि में ग्रंथ के आरंभ से लेकर ग्रंथ समाप्ति पर्यंत विघ्न का निवारण करने के लिये कविगण अपने इष्ट का स्मरण करते हैं। यही मंगलाचरण कहलाता है। मंगलाचरण तीन प्रकार का होता है। 1 नमस्करात्मक 2 आशीर्वादात्मक 3 वस्तुनिर्देशात्मक। लक्षण कारों ने निर्धारित किया है कि आदि में मंगलाचरण होना चाहिये। साहित्यदर्पणकार आचार्य विश्वनाथ जी लिखते हैं –

यथा आदौ नमस्क्रियाशीर्वा वस्तुनिर्देश एव वा।
क्वचिन्निन्दा खलादीनां सतां च गुणकीर्तनम्॥

गङ्गापुत्रावदानम् महाकाव्य में सर्गारम्भ से पहले मंगलाचरण लिखे गये हैं। कवि ने अपने भगवान शंकर को साक्षात नमस्कार नहीं किया है अपितु भगवान शिव की जटा में विराजमान गङ्गा की रक्षा करने वाले स्वामी निगमानन्द के जीवन के वर्णन को ही अपने ईष्ट को प्रसन्न करने का कारण बनाया है। भगवान अपने से अधिक अपने भक्तों से स्नेह करते हैं। इसलिए भक्तों के चरित्र का गान करने से ही भगवान का गान प्रस्तुत हो जाता है। यथा –

हे शैलेश्वर ! येन कीर्तिरमला गीता त्वदीया क्षणं
तस्मै किन्न हि सर्वविघ्नहरणं कृत्वा प्रदत्तं त्वया।
अद्याहं तव शीर्षभूषणसुधाधाराभिरक्षार्थिनः
प्रीत्या तर्पितजीवनस्य चरितं गातुं प्रसन्नो यते॥

अर्थात्- हे शैलेश्वर ! (भगवान शंकर) जिसने भी आपकी निर्मल कीर्ति का क्षण भर भी गान किया, उसके सभी विघ्नों को दूर करते हुए आपने उसके लिये क्या नहीं दिया। (अर्थात सब कुछ दिया) आज मैं (कवि) उसके चरित्र का गान करने का पर्यत्न कर रहा हूँ। जिसने तुम्हारे शीर्ष की भूषणभूता गङ्गा की अमल धारा की रक्षा में अपना जीवन समर्पित कर दिया है। (अर्थात आपके परमभक्त का गुणगान करने पर आप अवश्य प्रसन्न होंगे, यह आशा है। क्योंकि भगवान अपने भक्तों को अपने से भी बढ़कर मानते हैं।) समाज में बढ़ रहे आर्थिक नैतिक भ्रष्टाचार को कवि ने सबसे बड़ा अपराध माना है। इसे रोकने को जिसने अपना जीवन समर्पित किया हो। वे वास्तव में पूज्य है। अतः कवि उनके प्रति अपना प्रणाम समर्पित करता है। इस प्रकार से गङ्गापुत्रावदानम् महाकाव्य में महाकाव्य के लक्षणानुसार मंगलाचरण प्रस्तुत है।

3. सर्गबन्ध होना- जैसा की कहा ही गया है कि **'सर्गबन्धो महाकाव्यम्'** गङ्गापुत्रावदानम् महाकाव्य भी तेईस सर्गों में विभक्त है। जैसे प्रथम सर्ग में उत्तराखण्ड का वर्णन है और अंतिम श्लोक में हरिद्वार का वर्णन है। जो दूसरे सर्ग में आने वाले हरिद्वार के वर्णन का सूचक है। यथा-

त्रिदशजनपदानांमौलिभूतं सुरम्यं
हरिहरपदपूतं स्वर्गतुल्यं धरायाम्।
ऋषिमुनिगणसेव्यं वन्द्यवन्द्यैकवन्द्यं
भज शुकमुखवाचागुञ्जितं तीर्थनाथम्॥

इसी प्रकार प्रत्येक सर्गों में देखा जा सकता है।

4. सर्गान्त में छन्द का परिवर्तन होना-आचार्य विश्वनाथ जी ने स्पष्ट लिखा है कि- **'एकवृत्तमयैः पद्यैरवसानेऽन्यवृत्तकैः'** अर्थात सर्ग में एक छन्द का प्रयोग होना चाहिये। अन्त में छन्द परिवर्तन होना चाहिये। जो इस महाकाव्य में स्पष्ट देखा जा सकता है।

5. नायक के गुण- नायक के गुणों के विषय में प्रायः सभी आचार्यों का एक जैसा ही मत है कि नायक को धीरोदात्तादि गुणों से युक्त होना चाहिये। आचार्य विश्वनाथ जी ने लिखा है कि-

सद्वंशः क्षत्रियो वापि धीरोदात्तगुणान्वितः। सुन्दर वंश में उत्तपन होना चाहिये। क्षत्रिय हो, धीरोदात गुणों से युक्त हो। नायक का मूल लक्षण करते हुए आचार्य विश्वनाथ लिखते हैं कि-

त्यागी कृती कुलीनः सुश्रीको रुपयौवनात्साही।
दक्षोऽनुरक्तलोकस्तेजोवैदग्ध्यशीलवान्नेता॥

नायक के चार भेद किये गये हैं। जो इस प्रकार से हैं धीरोदात्त, धीरोद्धत, धीरललित और धीरप्रशान्त। आचार्य विश्वनाथ धीरोदात्त नायक की परिभाषा करते हुए लिखा है –

अविकत्थनः क्षमवानतिगम्भीरो महासत्त्वः।
स्थेयान्निगूढमानो धीरोदात्त दृढव्रतः कथितः॥

गङ्गापुत्रावदानम् महाकाव्य के चरितनायक स्वामि श्री निगमानन्द सरस्वती के जीवन में इन गुणों का स्वयं परीक्षण करें।

त्यागी - गङ्गापुत्रावदानम् महाकाव्य के नायक का चरित साक्षात् त्याग का मूर्त रूप है जो तत्तत् स्थानों पर विवेचित होगा। इसके त्यागी होने को प्रमाणित करते हुये कवि द्वारा लिखा गया वह समर्पण श्लोक है जो प्रमाणित करता है कि इसने अपने जीवन के सर्वसुख का परित्याग करने अपने जीवन को लोकोपकार में लगा दिया। यथा-

भ्रष्टाचारविलासनिं स्वपितरं मत्वा गृहं त्यक्तवान्
भ्रष्टाचारनिरोधनाय सकलं योऽयापयद् जीवनम्।
भ्रष्टाचारनिमग्नमूढमतिर्भिर्यो घातितश्छद्मना
तस्मै जह्नुसतासुताय कविना काव्याञ्जलिर्दीयते॥

अर्थात् अपने पिता को भ्रष्टाचार में लिप्त देखकर अपने पिता का परित्याग कर दिया। और आपना सम्पूर्ण जीवन सामाजिक भ्रष्टाचार को रोकने में लगा दिया। अन्त में अपने कार्य व्यापार में लगा हुआ इस संसार का परित्याग कर गया। इससे बड़ा त्यागी और कौन हो सकता है।

यह नायक अपने सद् गुरुदेव को पाकर प्रसन्न हो गया और शिष्य के शिष्यत्व को देखकर गुरु प्रसन्न हो गये तो शिष्य ने अपने पूर्वगृहोचित वस्त्रादि का भी त्याग कर दिया। अपने नाम का भी परित्याग कर दिया। पहले इनका नाम स्वरूपम था और बाद में इनका नाम निगमानन्द हो गया। यथा-

शिष्यस्य चारुचरितेनगुरुः प्रसन्नः
सेवाविधौ नियमनंचचकार तस्य।
संन्यासधर्ममधिगत्य नवीननाम्ना
लोके स्वरुपमवटुर्निगमाऽभिधोऽभूत्॥

कृती- अपने कर्मों से संसार को नया मार्ग दिखाने का संकल्प लेकर चलने वाला नायक अन्त में भले मृत्यु को प्राप्त हो गया हो पर अपने लक्ष्य सिद्धि में सफल हो गया तो उसको कृति ही माना जायेगा। गंगा की रक्षा का जो संकल्प स्वामी निगमानन्द ने लिया था उसे समाजिकों ने अपने कंधे पर उठा लिया तो यह उनकी सफलता है। और इससे उनका जीवन कृती है।

कुलीनः-जगज्जननी जगदम्बिका माता सीता के चरण रज से पवित्र मिथिला भूमि पर विप्रवंश में स्वामी निगमानन्द जी का जन्म उनकी कुलीनता का प्रमाण है। नायक का स्वरूप अतिसुन्दर है। नाम से ही वह स्वरूपम हैं। कवि लिखते हैं–

पूर्णचन्दाननो बालो वक्रकुन्तलभूषणः।
अक्षरग्रहणेदक्षः सर्वानन्दविवर्धनः॥
प्रकृत्या दृढसंकल्पः शुद्धान्तः करणः प्रियः।
लोकलीलाविलासेऽपि परमानन्दलोलुपः॥

वाग्मी- गङ्गापुत्रावदानम् महाकाव्य के नायक निगमानन्द बोलने में परम चतुर थे। वाग्मी का अर्थ स्पष्ट करते हुए महाकवि भारवि लिखते हैं –**'मितं च सारं च वचो वाग्मिता'** इन गुणों से युक्त वाग्मी कहलाता है। और इस महाकाव्य के नायक में वाग्मी के सभी लक्षण स्पष्ट दीखते हैं। यथा –

स्वस्थगात्रः प्रसन्नात्मा गौरवर्णो जितेन्द्रियः।
मृदूवाङ्गितभाषी च सर्वलोकप्रियोऽभवत्॥
वार्तालापेन लोकानां हरत्यन्तस्थवेदनाम्।
कदाचिन्नवतर्केण विस्मापयति सज्जनान्॥

उत्साही- नायक अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये सर्वदा उत्साहपूर्ण थे। अपने उत्साह को लोगों में कहने या दिखाने की उन्हें आवश्यकता नहीं थी अपितु उनके कार्यों को देखकर ही लोगों ने उनके उत्साह को जाना। कहा गया है कि –**'ब्रुवते हि फलेन साधवो न तु कण्ठेन निजोपयोगिताम् नैषधीयचरितम् सर्ग 2**

गङ्गापुत्रावदानम् महाकाव्य के नायक निगमानन्द के उत्साह के विषय में कवि ने स्पष्ट करते हुए कहा है कि-

लोके यः क्षणिकानन्दस्तस्य स्थात्विकल्पने।
मागान्तरेण गन्तव्यं प्राप्तुं प्रयतते स्म सः॥
लौकिकादर्शचारित्र्यं सम्यगालोच्य शुद्धधीः।
नात्रापि परमानन्द इति बुद्धिं चकार सः॥
येन केनापि मार्गेण मृग्यं मे चरमं सुखम्।
किञ्च मन्त्रस्य गोप्तृत्वं नैव हेयं कदाचन॥

इस प्रकार से हम देख सकते हैं कि धीरोदात्त नायक के सभी गुण गङ्गापुत्रावदानम् महाकाव्य के चरितनायक स्वामि श्रीनिगमानन्द में हैं।

रस-महाकाव्य में श्रङ्गार, वीर, या शान्त रस मेन से किसी एक रस की प्रधानता होनी चाहिये। साहित्य दर्पणकार आचार्य विश्वनाथ जी लिखते हैं –

श्रङ्गारवीरशान्तानामेकोऽङ्गीरस ईष्यते।
अङ्गानि सर्वेऽपि रसाः सर्वे नाटकसंधयः॥

इस महाकाव्य का नायक सर्वदा भ्रष्टाचारियों से शांतिपूर्ण तरीके से लड़ता रहा। संन्यासियों का धर्म है इस संसार के कल्याण के लिये सर्वदा शिव संकल्प रहना। इसलिये इस महाकाव्य को वीर रस में ही गिना जाना चाहिए। आचार्य विश्वनाथ जी ने वीर रस के चार भेदों का वर्णन किया है –दानवीर, धर्मवीर, युद्धवीर और दयावीर।

गङ्गापुत्रावदानम् महाकाव्य का चरितनायक अपने धर्म के पालन के लिये सर्वदा तत्पर है। अपने धर्म का परित्याग करना उसे कदापि स्वीकार नहीं है। नायक अपने जीवन के लक्ष्य को स्वीकार करता हुआ कहता है कि-

संन्यास एव शरणं मम दृष्यतेऽत्र
लोकोपकारनिरतः प्रभवामि येन।
स्वार्थे न तद्धावितुमर्हसि यत्परार्थे
पश्यामि जीवनमिदं हि समर्प्य लोके॥

लोकोपकार रूप अपने धर्म का यथावत नायक ने पालन किया है यह भी काव्य में स्पष्ट देखा जा सकता है। जैसे कि –

विन्यस्य जीवनमयं गुरुपादपद्मे
त्रातुं निशाचरबलाज्जनताधिकारम्।
भीतिं विना विकटकण्टकपूर्णभूमौ
चिन्तां विना चरणयोश्चरणं चकार॥
विलोक्य गङ्गाखननस्य तैक्ष्ण्यं

विलम्बताञ्चापि विनिर्णयस्य।
तत्त्वार्थवेत्ता तपसैव सत्य –
प्रदर्शनार्थं स्वमितिं चकार॥

इस प्रकार देखते हैं कि नायक धर्मवीर है जो अपने मार्ग पर सर्वदा तैयार रहता है। अन्य रस स्थान स्थान पर विलोकनीय है।

प्रकृतिवर्णन- महाकव्य में प्रकृति का वर्णन आवश्यक माना जाता है। जिसमें प्रकृति के विभिन्न अंगों का वर्णन कवि अपने वर्ण्य विषय के अनुकूल करते हैं। वन, निर्झर, नदी, समुद्र, वन्यपशुविलास, जलक्रीडा आदि का वर्णन सभी काव्यों में पाया जाता है। साहित्यदर्पणकार लिखते हैं कि –

संध्यासूर्येन्दुरजनीप्रदोषध्वान्तवासराः।
प्रातर्मध्याह्नमृगयाशैलर्तुवनसागराः ॥

प्रस्तुत महाकाव्य में स्थान-स्थान पर प्रकृति के विभिन्न रूपों का वर्णन रमणीय रूप में हुआ है। प्रकृति के रमणीय स्वरूप का दिग्दर्शन इस प्रकार से है –

कानने तुंगवृक्षाणां लतानां दिव्यजीवनम्।
यानाश्रित्य हि जीवन्ति कीटा भृङ्गा खगा मृगाः॥
नवपत्राधरावल्ली फुल्लपुष्पानना शुभा।
शाटिकायां विभातीव काचिन्नवलयौवना॥

जितने भी लक्षण पूर्वाचार्यों ने महाकाव्य के विषय में निर्दिष्ट किये हैं। वह सभी गङ्गापुत्रावदानम् महाकाव्य में स्पष्ट देखे जा सकते हैं। इस प्रकार से इस महाकाव्य का महाकाव्यत्व सुस्पष्ट है।

1.5 सारांश

इस इकाई में आपने गङ्गापुत्रावदानम् महाकाव्य के रचयिता एवं गङ्गापुत्रावदानम् महाकाव्य के महाकाव्यत्व के विषय में अध्ययन किया किआधुनिक संस्कृत साहित्य में अपना नया योगदान करने वाले आधुनिक कवियों में महाकवि निरंजन मिश्र का साहित्य स्वयं में उनका परिचय प्रस्तुत करता है। बिहार राज्य में भागलपुर जिले के अंतर्गत भ्रमरपुर ग्राम में 'मरैरै वारि' मूल के कश्यप गौत्रीय ब्राह्मण वंश में महाकवि निरंजन मिश्र का जन्म 2 जनवरी 1966 ई० को हुआ। इनके पितामह पंडित श्री सीताराम मिश्र तत्कालीन ब्राह्मण समाज के अग्रगण्य पंडितों में लब्धप्रतिष्ट धर्म शास्त्र के मर्मज्ञ विद्वान थे। पितृव्यपाद के चरणों में बैठकर कविवर ने लघुकौमुदी का पाठ प्रारम्भ किया था। इनका स्मरण करते हुए मदालसा चम्पू हिन्दी व्याख्या की भूमिका में कविवर लिखते हैं –

वैयाकरणमूर्धन्यं धर्मशास्त्रविचक्षणम्।
सूर्यनारायणं नामपितृव्यं प्रणमाम्यहम्॥

अपने इन्हीं प्रथम गुरु पितृव्यपाद के आशीर्वाद के फलस्वरूप कविवर ने शास्त्र में प्रवेश किया और साथ ही कर्मकाण्ड आदि की शिक्षा भी ग्रहण की। कविवर के पिता श्री की वाणी पद-पद पर मार्गदर्शक हुई यह तो सत्य है। साथ ही आपने अध्ययन किया कि महाकाव्य के महाकाव्यत्व का परीक्षण हेतु यह देखना पड़ता है कि पूर्व के आचार्यों द्वारा प्रस्तुत काव्य लक्षण उस काव्य पर घटित होता है या नहीं। कतिपय लक्षण महाकाव्य के लिए परमावश्यक हैं और कुछ अस्थायी लक्षण होते हैं। आधुनिक काव्य शास्त्रियों प्रसिद्ध आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी महोदय ने अपने अभिनवकाव्यसूत्र में स्पष्ट किया है कि - **"लोकानुकीर्तनं काव्यम्"**

त्रिविधलोकों की व्याख्या करते आचार्य लिखते हैं- **स च लोकस्त्रिविध:।** आचार्य जी के कथनानुसार तीनों लोकों के महापुरुषों के सच्चरित्र को सहृदयों के सामने शब्दार्थ के माध्यम से उपस्थापित करना काव्य है।पूर्व में घटित चरित को तो शब्दार्थ के माध्यम से ही उपस्थापित किया जा सकता है। काव्य के विषय में पूर्वाचार्यों द्वारा रचित लक्षण है कि काव्य सर्गबंधनादि गुणों से युक्त होना चाहिये। आपने यह भी अध्ययन किया कि महाकव्य के जो लक्षण पुर्वाचार्यों ने कहे हैं वे इस महाकाव्य में पूर्ण रूप से घटित हुए हैं। इस प्रकार से आपने गङ्गापुत्रावदानम् महाकाव्य के महाकाव्यत्व के बारे में भी भली-भांति अध्ययन किया।

1.6 पारिभाषिक शब्दावली

आधुनिक - वर्तमान काल का
घटित - जो अर्थ रूप में सही घटा हो
उपस्थापित - उपस्थित किया हुआ
कतिपय - कुछ
निर्झर - झरना
चरित - जीवन की घटनाओं का उल्लेख
भली – भांति - अच्छि तरहाँ
अस्थायी - जो स्थायी ना हो
परीक्षण - जाँच / परख
तत्पर - मनोयोग पूर्वक लगा हुआ
मार्गदर्शक - मार्ग दिखाने वाला/ पथ प्रदर्शक

अभ्यास प्रश्न 1

(1) निम्नलिखित प्रश्नों के उचित विकल्प का चयन कीजिये।

1 महाकवि निरंजन मिश्र का जन्म कब हुआ ?

A. 2 जनवरी 1966
B. 2 जनवरी 1967
C. 2 जनवरी 1968

D. 2 जनवरी 1969

2 कविवर निरंजन मिश्र जी को विद्यावारिधि की उपाधि प्राप्त हुई।

A. 1990
B. 1991
C. 1992
D. 1993

3 गङ्गापुत्रावदानम् महाकाव्य के रचयिता हैं।

A. कालिदास
B. भीष्म
C. निरंजन मिश्र
D. हरिहर

4 गङ्गापुत्रावदानम् के नायक हैं।

A. पितामह भीष्म
B. स्वामि श्री रामदेव
C. स्वामि श्री दयानंद
D. स्वामि श्रीनिगमानन्द

5 **"लोकानुकीर्तनं काव्यम्"** यह कथन है।

A. कविवर निरंजन मिश्र
B. आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी
C. आचार्य भरत
D. आचार्य कुंतक

(2) रिक्तस्थानों की पूर्ति कीजिये।

1 ---------- के चरणों में बैठकर कविवर ने लघुकौमुदी का पाठ प्रारम्भ किया था।

2 महाकव्य में प्रकृति का वर्णन---------- माना जाता है।

3 **'सर्गबन्धो**---------- कहा जाता है।

4 **'एकवृत्तमयैः पद्यैरवसानेऽन्यवृत्तकैः'** अर्थात सर्ग में एक------- का प्रयोग होना चाहिये।

5 नायक के चार भेद किये गये हैं। धीरोदात्त, धीरोद्धत, धीरललित और----------।

(3) सही गलत का चयन कीजिये।

1 किसी भी महाकाव्य का इतिवृत्त या तो इतिहास प्रसिद्ध कथा होती है या किसी मान्य सज्जन के आश्रित होती है।( )

2 महाकव्य में प्रकृति का वर्णन आवश्यक माना जाता है। जिसमें प्रकृति के विभिन्न अंगों का वर्णन कवि अपने वर्ण्य विषय के अनुकूल करते हैं। ( )

3 - महाकाव्य में श्रङ्गार, वीर, या शान्त रस मेन से किसी एक रस की प्रधानता होनी चाहिये। ( )

4 कवि ने बचपन से ही पारम्परिक संस्कृत शिक्षा आरम्भ की थी। पारम्परिक शिक्षा आरम्भ करने के पीछे कारण था। पिता श्री की हार्दिक इच्छा ( )

5 गङ्गापुत्रावदानम् महाकाव्य में 12 सर्ग हैं। ( )

1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

(1) 1 A, 2 C, 3 C, 4 D, 5 B

(2) 1 पितृव्यपाद, 2 आवश्यक, 3 महाकाव्यम्, 4 छन्द, 5 धीरप्रशान्त

(3) 1 सही, 2 सही, 3 सही, 4 सही, 5 गलत

1.8 संदर्भ सूची ग्रंथ एवं अन्य सहायक पुस्तकें

1. गङ्गापुत्रावदानम् (स्वामिश्रीनिगमानन्दचरितम्) महाकाव्यम् , महाकवि निरंजन मिश्र कृत (सत्यम् पब्लिशिंग हाऊस) नई दिल्ली।

1.9 निबंधात्मक प्रश्न

1. महाकवि निरंजन मिश्र का जीवन परिचय लिखिए ।
2. महाकवि निरंजन मिश्र की कृतियों का परिचय दीजिए।
3. गङ्गापुत्रावदानम् महाकाव्य का महाकाव्यत्व का वर्णन कीजिए।

इकाई 2. गङ्गापुत्रावदानम् प्रथम सर्ग
श्लोक संख्या 1 से 22 मूल पाठ, अन्वय, व्याख्या, अनुवाद

इकाई की संरचना

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 गङ्गापुत्रावदानम् प्रथम सर्ग
श्लोक संख्या 1 से 22 मूल पाठ, अन्वय, व्याख्या, अनुवाद
2.4 सारांश
2.5 पारिभाषिक शब्दावली
2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.7 संदर्भ ग्रंथसूची एवं अन्य सहायक पुस्तकें
2.8 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों !

प्रस्तुत इकाई में आप आधुनिक संस्कृत साहित्य में अपना नया योगदान करने वाले आधुनिक कवियों में महाकवि निरंजन मिश्र प्रणीत **'गङ्गापुत्रावदानम् महाकाव्यम्'** के प्रथम सर्ग का अध्ययन करेंगे ।इस महाकाव्य के प्रथम सर्ग में महाकवि ने उत्तराखंड राज्य का मनोरम वर्णन प्रस्तुत किया है। उत्तराखंड की भूमि को लोग देव भूमि भी कहते हैं। पुराणसाहित्य में इस भूमि की प्रशंसा की गयी है ।श्री वेदव्यास जी ने इसी भूमि पर अपने पुराणों की रचना की। यहीं पर आचार्य द्रोण ने अपने शिष्यों को शिक्षा प्रदान की । उत्तराखंड भूमि के वर्णन में कविवर लिखते हैं –

अस्त्युत्तराखण्ड इति प्रदेशः
शैलाधिराजाङ्कतले निषण्णः ।
कान्तारकान्तेन विभीषणोऽपि
लावण्यलीलाललितानुभवः ॥1॥

शैलाधिराज हिमालय की गोद में स्थित उत्तराखण्ड नाम का प्रदेश है। जो कांतार कान्त (जंगल का पति सिंह) की स्थिति से विभीषण (भयंकर) होते हुए भी आपनी लावण्या लीला से ललित अनुभाव वाला है। (अर्थात भयंकर भी है और ललित भी है ।) उत्तराखंड राज्य की सौंदर्यता का वर्णन कवि ने किया है। कवि कहना चाहते है कि यह राज्य भीषण जंगलों वाला होने के साथ–साथ प्राकृतिक सौंदर्यता से पूर्ण है। ललित अनुभव वाला है। यहाँ सज्जन लोग विना प्रयास के ही फल और फूल प्राप्त करते हैं, (अर्थात यहाँ सभी सम्पन्न हैं ।) जो भूख लोगों को रोगी बना देती है वो भूख यहाँ कदापि नहीं होती है। (वनों का बाहुल्य होने के कारण समयानुकूल फल पर्याप्त मात्रा में यहाँ पाये जातें हैं जिससे लोगों के भूखे रहने की स्थिति नहीं आती है ।)इस प्रकार से उत्तराखंड राज्य की महिमा के बारे में आप इस इकाई में अध्ययन करेंगे।

2.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात आप-

- महाकवि निरंजन मिश्र प्रणित 'गङ्गापुत्रावदानम् महाकाव्य'के प्रथम सर्ग में वर्णित उत्तराखण्ड राज्य के महत्व को जानेंगे।
- उत्तराखंड राज्य के प्रति कवि के प्रेम भावना को जान सकेंगे।
- प्राकृतिक सौन्दर्य की अनुभूति कर सकेंगे।
- प्रकृति प्रेम का अनुभव कर सकेंगे।
- उत्तराखंड राज्य की महिमा को संस्कृत श्लोकों के माध्यम से जानेंगे।

- आधुनिक संस्कृत महाकव्यों से आप परिचित होंगे।
- काव्य सृजनात्मक क्षमता का विकास होगा।

2.3 गङ्गापुत्रावदानम् प्रथम सर्ग

श्लोक 1 से 22मूल पाठ,अन्वय,व्याख्या,अनुवाद

अस्त्युत्तराखण्ड इति प्रदेशः
शैलाधिराजाङ्कतले निषण्णः।
कान्तारकान्तेन विभीषणोऽपि
लावण्यलीलाललितानुभवः ।।1।।

अन्वयः - कान्तारकान्तेन विभीषणोऽपि लावण्यलीलाललितानुभावः उत्तराखण्ड इति प्रदेशः शैलाधिराजाङ्कतले निष्णः अस्ति।

व्याख्या- कान्तारस्य = वनस्य 'कान्तारं' गहनं वनमित्यमरः' कान्तः पतिः काननपतिः सिंहः, तेन सिंहेण क्रूरजीवने विभीषणः = भयङ्करःअपि क्रूरजीवनस्य सिंहस्य सत्वात् स्वयमेव भयंकरता समापद्यते, परञ्च तस्यामवस्थायामपि, लावण्यलीलाललितानुभावः= लावणस्य सौन्दर्यस्य प्राकृतिक सौन्दर्यस्य ग्रहणमत्रापेक्षितम् लीलया विलासेन ललितः सुन्दरं अनुभावः क्रियास्वरुपदर्शनं यस्य तादृशः, उत्तराखण्ड इति प्रदेशः = उत्तराखण्डनाम्ना व्यपदिष्टम् राज्यं (9 नवम्बर 2000 तमे उत्तरप्रदेशात् पृथग्भूतम् उत्तरांचल इति नाम्ना । पश्चादुत्तराखण्ड इति नामकरणं जातम्) शैलाधिराजाङ्कतले = शैलः पर्वतः तेषां शैलानां पर्वतानाम् अधिपतिः राजा हिमालयः, तस्य हिमालयस्य अङ्के क्रोडे निषण्णः= समुपविष्टः अवस्थितः अस्ति । पर्वत राजस्य क्रोडे स्थितं राज्यमिति । यतोहि पर्वतीयप्रदेशोऽयम् । त्रयोदशजनपदेषु केवल जनपदत्रयमेव पर्वतादधो वर्तते। अत्र भयङ्करस्यापि ललितानुभावत्वात् विरोधाभासलंकारः। उपजाति नाम वृत्तम्।

अनुवाद- शैलाधिराज हिमालय की गोद में स्थित उत्तराखण्ड नाम का प्रदेश है। जो कांतार कान्त (जंगल का पति सिंह) की स्थिति से विभीषण (भयंकर) होते हुए भी आपनी लावण्या लीला से ललित अनुभव वाला है। (अर्थात भयंकर भी है और ललित भी है।)

विशेष- विभीषणः - भयंकर, दुर्गम ।लावण्यलीलाललितानुभावः- सौन्दर्य लीला से ललित अनुभव वाला शैलाधिराजाङकतले- पर्वत राज हिमालय की गोद में । निषण्णः- विराजमान, अवस्थित।

सुराङ्गनानां प्रतिहारभूमिः
कुलाङ्गनापादपवित्रभूमिः ।
यक्षेश्वराणां हृदयेश्वरीणां
सुरेश्वरीणाञ्च विलासभूमिः ।।2।।

अन्वयः –सुराङ्गनानां प्रतिहार भूमिः कुलाङ्गनापादपवित्रभूमिः यक्षेश्वराणां हृदयेश्वरीणां सुरेश्वरीणाञ्च विलासभूमिः (उत्तराखण्डस्य भूमिरिति)

व्याख्या- सुराणां = देवानां या अङ्गना = वनिताः सा सुराङ्गना तासां,प्रतिहार भूमिः = प्रतीहारो भवति द्वारपाल: तस्य स्थिति: भवति द्वार भूमौ, इयमुत्तराखण्डस्य भूमिः सुराङ्गानां प्रतिहार भूमिः अर्थात गृहात् बहिरागमनस्य भूमिरस्ति । कुलाङ्गनापादपवित्रभूमिः = सत्कुलोत्पना सत्कुलीन आचार सम्पन्ना वनिता कुलाङ्गानं, तासां कुलाङ्गानां पादाभ्यां चरणाभ्यां तासां सञ्चरणेनेति भावः पवित्रा, इयं भूमिः, अत्रत्या वनिताः कुलङ्गाना: सन्तीति भाव: यक्षेश्वराणां = यक्षाणां ये ईश्वराः स्वामिनस्ते यक्षेश्वराः तेषां, हृदयेश्वरीणां = हृदयस्य या ईश्वरी स्वामिनी अर्थात् हृदये तिष्ठन्ति धर्मपत्नी, तासां पत्नीनां यक्षस्य नायिका इति भावः, सुरेश्वरीणाञ्च= सुराणामपि या ईश्वरी स्वामिनी, सुरैरपि वन्दनीया भगवती पार्वतीत्यर्थः या विविध स्वरुपिण्यस्सन्ति । अत्स्तासां विलासभूमिः = विलासस्य क्रीडायाः भूमिः क्षेत्रं । देवाङ्गनाः, यक्षाङ्गनाः सुरैरिव वन्दनीया: महेश्वर्य: अत्र भूमौ क्रीडन्तीति भावः । अन्त्यानुप्रासलंकारः ।

अनुवाद- सुरांगनाओं के लिये यह प्रतिहार भूमि है । (अर्थात सुरांगनायें यहाँ प्रतिहारिणी बनकर घूमती हैं । या उनके लिए घरों से बाहर निकलने के लिये यह द्वार भूमि है ।) कुलांगनाओं के पैरों से पवित्र यह भूमि है । यक्षाधिप के हृदय में बसनेवाली नायिकाओं के लिये और सुरेश्वरियों (देवताओं की मानिनी, या कामिनी) के लिये विलास भूमि है ।

विशेष-सुराङ्गनानां प्रतिहार भूमिः- सुरांगनाओं के लिये यह प्रदेश प्रतिहार भूमि है । अर्थात घरों से बाहर निकलने के लिये यह द्वार भूमि है । कुलाङ्गनापादपवित्रभूमिः- सत्कुलोत्पन कुलीन आचार संपन्ना वनिताओं के पैरों से पवित्र भूमि । सुरेश्वरीणाञ्च- सुरों की ईश्वरी स्वामिनी, देवताओं की वंदनीय भगवती पार्वती ।

शृङ्गारभूमी रणकर्कशानां
विकासभूमिः कमलेश्वराणाम् ।
आवासभूमिर्वचनेश्वराणां
प्रवासभूमिः श्रुतिसाधकानाम् ।।3।।

अन्वयः-रणकर्कशानां शृङ्गारभूमी कमलेश्वराणाम् विकासभूमिः वचनेश्वराणां आवासभूमिः श्रुतिसाधकानाम् प्रवासभूमिः।

व्याख्या- रणकर्कशानां =रणे युद्ध क्षेत्रे यो कर्कशः कठोरः, युद्धभूमौ शरीरेण मनसा वाचा च काठिन्यमपेक्षते, अतस्ते वीराः रणकर्कशाः, तेषां वीराणां शृङ्गारभूमिः = शृङ्गारक्रियायाः भूमिः क्षेत्रं, ये वीराः देशस्य सीम्नि रिपूणां वक्षो विदारणे स्वकठोरत्वं प्रदर्शयन्ति त एव अत्र आगत्या स्वगृहे स्वधर्म पत्न्या सह शृङ्गारलीलां वितन्वन्तीति भावः, अत्रत्याः पुत्रा वीरा भवन्तीति सन्देशः, कमलेश्वराणां = कमला लक्ष्मी 'लक्ष्मी पद्मालया पद्मा कमला श्रीहरिप्रियेत्यमरः' तस्य ईश्वरो भगवान् विष्णुः, तस्य विकास भूमिः= विकसनस्य प्रसरणस्य

भूमिः, अर्थात भगवान् बद्रीनाथ स्वरुपो विष्णुत्र निवासं कुरुते, भक्ता नित्यमेव तस्य गुणानुवादं कृत्वा लोके तस्य विकासं प्रसारं कुर्वन्ति तेन विकास भूमि इति । अथवा कमला लक्ष्मी धनम्, इदानीं धनमेव लक्ष्मीपदेन व्यपदिश्यते लोके, अतो ये धनेश्वराः धनाधिपाः तेषां विकासस्य भूमिः। ते अत्रागत्य पर्वतीय रत्नानामुत्खननव्यापारेण स्ववित्त कोषस्य नित्यं विकासं कुर्वन्तीति ।

वचनेश्वराणां = वचनस्य मुखान्निर्गतशब्दस्य ये ईश्वराः स्वामिनः, पण्डिताः, येषां वाणी वशीभूताः अर्थात सम्यक् विचार्य ये वदन्ति लोकानां मध्ये तादृशा मधुरालापिनो जनाः, तेषां, आवास भूमिः = आवासार्थ निवासार्थ, तादृशा विद्वांसोऽत्र वसन्तीति भावः, श्रुति साधकानां = श्रुतिं वेदं साधयन्ति श्रुत्युक्ताचारविचारं परिपालयन्ति वा श्रुतेर्मन्त्राणामभ्यासं कुर्वन्ति ये ते श्रुति साधकः, तेषां कृते प्रवासभूमिः = प्रवासस्य भूमिः । अर्थात पर्वतीय प्राकृतिक सौन्दर्य विलोक्य परमशान्तिं चानुभूय दूरदेशादपि विद्वांसो योगिनः अत्रागत्य वेदोक्त मार्गस्य साधनं कुर्वन्तीति । कमलेश्वराणामित्यत्र श्लेषः, अथ चान्त्यानुप्रासालंकारः।

अनुवाद- जो रण में अपनी कर्कशता दिखाते हैं, ऐसे वीरों के लिये यह शृंगार भूमि है, कमलेश्वर (धनपतियों के लिये, कमला-लक्ष्मी के ईश्वर, पति) के लिये विकास भूमि है । जो केवल भाषण में ही स्वामित्व को प्राप्त हैं, या जो वाणी के स्वामी अर्थात् विद्वान् हैं, उनके लिये यह आवास भूमि है और जो श्रुति साधक (वैदिक पद्धति की साधना करने वाले) हैं, उनके लिये यह प्रवास भूमि है ।

विशेष- रणकर्कशानां शृङ्गारभूमी- जो वीर युद्ध में अपनी वीरता दिखाते हैं, उन वीरों के लिये यह शृङ्गार भूमि है । श्रुतिसाधकानाम् प्रवासभूमिः- श्रुति अर्थात् (वेद) जो वेद पद्धति के साधक होते ऐसे साधकों के लिये यह प्रवास भूमि है।

वनेचराणामभिचारभूमिः
प्रचारभूमिर्नयकोविदानाम् ।
नेत्रोत्सवे चासवपानभूमिः
सौन्दर्यरेखारचनातुराणाम् ।।4।।

अन्वयः- वनेचराणाम् अभिचारभूमिः, नयकोविदानां प्रचारभूमिः, सौन्दर्यरेखारचनातुराणां नेत्रोत्सवे चासवपानभूमिः ।

व्याख्या- वनेचराणां = वने विपिने कानने चरन्ति भ्रमन्तीति वनेचराः तेषां वनेचराणां अभिचारभूमिः = अभिचारस्य इतस्ततः परिभ्रमणस्य मृगयादिकार्य साधनस्य भूमिः, नयकोविदानां = नये नीतौ नवीन मार्ग निर्माणे ये कोविदाः बुधाः पण्डिताः 'विद्वान् विपश्चिद्दोषज्ञः सन्सुधी: कोविदो बुधः इत्यमरः तेषां नीतिनिर्धारकानां राजनीतिज्ञानामिति भावः, प्रचारभूमिः = प्रकर्षेण चरणस्य भ्रमणस्य वा स्वप्रचारस्य भूमिः, अत्र राजनेतारो नित्यं स्ववैशिष्ट्य व्याख्या बलेन लोकानां मध्ये गौरवं प्राप्नुवन्तीति भावः, नवराज्यत्वात् राजनीतिज्ञानां कृते प्रचारस्यैव भूमिरेषा, सौन्दर्यरेखारचनातुराणां = सौन्दर्य सुन्दरतायाः भावः, तदर्थ रेखां रचयितुं

सीमानमारोपयितुं ये आतुराः विकलाः व्यस्ता इति ये, ते, अर्थात् कस्य सौन्दर्य वलवत्, का नाम सुन्दरी प्रतिष्ठापयितव्येति, इत्यादिनियमनिर्धारणे ये समर्थाः अर्थात् सुन्दरीणां चयनकर्तारो ये सन्ति, तेषां, नेत्रोत्सवे = नेत्रयोः नयनयोः यो भवत्युतसवः तरुणीनां यौवनदर्शन ब्याजेन, यथा जिह्वायाः उत्सवो भवति सुन्दरास्वादग्रहणेन, कर्णयोरुत्सवो भवति श्रव्यश्रवणेन तथैव नेत्राणामुत्सवो भवति सौन्दर्य विलोकनेन, चासनपानभूमिः = आसवः सुरा, 'मैरेयमासवः सीधुरित्यमरः' तत्पानस्य भूमिः । अर्थात् सुरापानस्य भूमिरेषा तेषां कृते ये सौन्दर्यविलोकन चतुरास्सन्ति । अर्थात् तादृशानामपि भूमिरेषा ये सुरां निपीयात्र तरुणीनां सौन्दर्यमवलोकनेन स्वानन्दं जनयन्ति। अन्त्यानुप्रासालंकारः ।

अनुवाद- वनेचरों के लिये यह अभिचार की भूमि है । नीति कोविद जो हैं । उनके लिये यह प्रचार भूमि है। जो सौन्दर्य की सीमारेखा का निर्धारण करने को आतुर रहते हैं, उनकी आँखों के उत्सव के लिये यह योग्य भूमि है । (अर्थात सौन्दर्य चाहने वालों के लिये लक्ष्य पाकर झूमने योग्य भूमि है।)

विशेष- वनेचराणाम् अभिचारभूमिः- वन में विचरण करने वाले वनचरों के लिये यह अभिचार भूमि है। नयकोविदानां प्रचारभूमिः- जो नीति एवं कोविद (विद्वान) जन हैं। उनके लिये यह ज्ञान एवं नीति की प्रचार भूमि है। सौन्दर्यरेखारचनातुराणां नेत्रोत्सवे चासवपानभूमिः- जो जन सौन्दर्य की सीमारेखा का निर्धारण करने को आतुर रहते हैं, ऐसे जनों की आँखों के उत्सव के लिये यह योग्य भूमि है।अर्थात सौन्दर्य प्रियजनों के लिये लक्ष्य पाकर झूमने योग्य भूमि है।

सप्तर्षिसन्ध्यार्चनपुण्यभूमिः
नन्द्यंघ्रिसंक्षुण्णशिलोच्चभूमिः ।
मातुर्वसूनामपि जन्मभूमिः
सुरासुराणामधिकारभूमिः ॥5॥

अन्वयः- सप्तर्षिसन्ध्यार्चनपुण्यभूमिः, नन्द्यंघ्रिसंक्षुण्णशिलोच्चभूमिः। मातुर्वसूनामपि जन्मभूमिः, सुरासुराणा – मधिकारभूमिः ।

व्याख्या- (श्लोकेऽस्मिन् भुमेरस्याः पावित्र्यं वर्णयति कविः) सप्तर्षिसन्ध्यार्चनपुण्यभूमिः =परमपूज्याः सप्त ऋषयो वशिष्ठादयः सप्तऋषि पदेन ज्ञायन्ते । ते इदानीमपि नक्षत्रमालायां लब्ध प्रतिष्ठा वर्तन्ते इति जानन्ति संस्कृत शास्त्रविज्ञाः, सप्तर्षयो मरीच्यत्रिमुखा इत्यमरः' ते ऋषयः सन्ध्यार्चनार्थमस्यामेव धरायामवतीर्णा भवन्ति । ते ऋषयः स्वयमेव परमपावनास्सन्ति । अतस्तेषां पुण्यार्चनेन पुण्यस्वरुपा भूमिरियं वर्तते । नन्द्यंघ्रिसंक्षुण्णशिलोच्चभूमिः= नन्दी भगवतः शङ्करस्य वाहनो वृषो भवति 'शृङ्गी भृङ्गी रिटिस्तुण्डी नन्दिको नन्दिकेश्वर इत्यमरः' भगवन्तं शङ्करं स्वपृष्ठे निधाय स नन्दी धरायामस्यां परिभ्रमति, तस्य अङ्घ्रिः चरणः 'पदघ्रिश्चरणोऽस्त्रियामित्यमरः' तस्य नन्दिनः चरणाघातेन शिलाः चूर्णिता भवन्ति अतः तेन चरणेन संचूणिताः याः शिलाः, तच्चर्णेनैव उच्च भूमिरियं वर्तते । महाकविकालिदासः स्व

मेघदूते उपमा प्रयोगेन नन्दिनः संचरणस्य दृश्यमुपस्थापितमस्ति यथा – 'शोभां शुभ्रत्रिनयनवृषोत्खातपंकोपमेयाम्' मातुर्वसूनामपि जन्मभूमिः = वसूनां माता भगवती गङ्गा वर्तते। महाभारतीयकथानुसारं अष्टवसवो गङ्गायाः पुत्ररुपेणोत्पन्ना शान्तनोः संयोगात्। अतः गङ्गा वसूनां माता भवति। तस्याः गङ्गायाः जनमभूमिरियं वर्तते। अस्मात् स्थानादेव हिमालयात् प्रभवति भगवती भागीरथी गङ्गा। सुरासुराणामधिकारभूमिः = सुराः असुराश्च सुरासुराः तेषां सुराणामसुराणां च अधिकारयोग्या भूमिरियं वर्तते। अर्थात् सुरा असुराश्च नित्यं भूमावस्मिन् स्वाधिकरस्थापणाय प्रयासं कुर्वन्ति। सुराणां भूमि इयं वर्तते अतः देवभूमिरित्युच्यते इति जानन्ति सर्वे परन्तु नित्यमस्याः विनाशाय यतन्तो जनाः असुरा एव सन्ति। यतोहि भूमेरस्याः महत्वं सर्वे जानन्ति। अन्त्यानुप्रासालंकार:।

अनुवाद- सप्तऋषियों के सन्ध्या वंदन के योग्य यह पुण्यभूमि है। (अर्थात यहाँ सप्तऋषि गण संध्यार्चन किया करते हैं।) यहाँ की भूमि नंदी है (भगवान शंकर का वाहन) के पैरों के आघात से चूर्ण हुई शिलाओं वाली, ऊंची है। वसुओं की माता (गङ्गा) की जन्मभूमि यही है। यही वह भूमि है जिस पर अधिकार करने के लिये सुर और असुर दोनों लगे रहते हैं। अर्थात् यह दोनों की भूमि है।

विशेष- सप्तर्षिसन्ध्यार्चनपुण्यभूमिः- यह परम पूज्य सप्तऋषियों के ध्यान, अर्चन की पुण्य भूमि है।अर्थात सप्तऋषि इस भूमि में सन्ध्यार्चना, वंदना आदि किया करते हैं। नन्द्यंघ्रिसंक्षुण्णशिलोच्चभूमिः-भगवान शंकर के वाहन नंदी के पैरों के आघात से चूर्ण शिलाओं वाली भूमि। मातुर्वसूनामपि जन्मभूमिः- वसुओं की माता गङ्गा माता है। गङ्गा जी का उद्गम केंद्र गंगोत्री है।अर्थात यह माँ गङ्गा की जन्म भूमि है।

व्यासः पुराणानि लिलेख यत्र
द्रोणः शिशून् पाठयति स्म यत्र।
यत्राभ्रमन्नाटकलेखदक्षो
मान्यः कवीनां कविताविलासः ।।6।।

अन्वयः- यत्र व्यासः पुराणानि लिलेख, यत्र द्रोणः शिशून् पाठयति स्म, नाटकलेखदक्षः कवीनां मान्यः कविताविलासः यत्र अभ्रमत् (सैषाभूमिरिति)।

व्याख्या- यत्र = यस्यामुत्तराखण्डस्य भूमौ, व्यासः= पराशरपुत्रो व्यासः वेदानां विभाजन कर्ता, पुराणानि अष्टादश मत्स्यकूर्मवराहादिपुराणानि, लिलेख = लिखितवान्। यत्र = यस्यां भूमौ द्रोणः= द्रोणाचार्यः (महाभारतकालिकप्रसिद्धो गुरुः) शिशून् = बालकान् पाण्डवकौरवादीन्, पाठयति स्म = आश्रमरूपविद्यालये पाठयति स्म, अत्रैव द्रोणाचार्यः बालकान् विविधविद्यायां पारंगतान् कृतवानिति सूच्यते। नाटकलेखदक्षः = नाटकानां दृश्यकाव्यानां लेखने दक्षः कुशलः, कवीनां मान्यः = कवीनां गणनायां सादरं गणनीयो विद्वद्भिः कविता विलासः = कवितायाः

विलास स्वरुप: महाकवि कालिदासः , 'आचार्य जयदेवेनोक्तं यत् – भासो हासः कविकुलगुरु कालिदासो विलासः, यत्र = यस्यां भूमौ अभ्रमत् = भ्रमणं कृतवान् । (सैशाभूमिरिति।)

अनुवाद- श्री वेदव्यास जी ने जहाँ पर अपने पुराणों की रचना की । जहाँ पर आचार्य द्रोण ने अपने शिष्यों को शिक्षा प्रदान की । जहाँ पर नाटक लेखन में कुशल कवियों के माननीय कविता के विलासी (महाकवि कालिदास) ने परिभ्रमण किया । (यह वही भूमि है।)

विशेष- यत्र- यहाँ उत्तराखंड की भूमि । व्यासः पुराणानि लिलेख- महर्षि व्यास जी ने पुराणों की रचना की ।कविताविलासः यत्र अभ्रमत् - कविता के विलासी अर्थात महाकवि कालिदास ने यहाँ भ्रमण किया ।

पार्थः स्वयं यत्र तपः प्रभावा-
दवाप शस्त्रं जगदेकवन्द्यम् ।
शकुन्तलासिञ्चितपादपानां
यत्राधुनाऽप्यस्ति विहारलीला ।।7।।

अन्वयः- यत्र पार्थः तपः प्रभावात् जगदेकवन्द्यं शस्त्रं स्वयम् अवाप । यत्र शकुन्तलासिञ्चतिपादपानां विहारलीला अधुनाऽप्यस्ति ।

व्याख्या- यत्र = यस्यां भूमौ पार्थः = पृथायाः कुन्त्याः पुत्रः अर्जुनः, पाण्डवेषु अर्जुनः पार्थनाम्ना बहुधा व्यपदिष्टो श्रीमद्भगवतगीतयाम् । तपःप्रभावात् = स्वकीयतपस्यायाः प्रभावात् जगदेकवन्द्यं = अस्मिन् संसारे एकमात्रं वन्दनीयं वीरवरैरपि सम्पूज्यम्, शस्त्रं = दिव्यास्त्रं, स्वयं अवाप = प्रताप्वान् । अत्रैव इन्द्रकीलपर्वते तपस्यां कृत्वा किरातवेषधारिणा भगवता शङ्करेण सह युद्धं च कृत्वा तं प्रतोष्य दिव्यास्त्रमवाप्तवानर्जुनः इति महाभारतीया, महाकविभारवि विरचित किरातार्जुनीयमिति महाकाव्यस्य कथा वर्तते । यत्र= यस्यां भूमौ शकुन्तलासिञ्चितपादपानां = शकुन्तला – महर्षि विश्वामित्रस्य मेनकागर्भादुत्पन्ना महर्षि कण्वेन च पालिता पुत्री,तया सिञ्चिता ये पादपाः वृक्षाः तेषां, विहारलीला = विहारस्य लीला, मत्तपवनवेगान्नर्तनादिक्रीडा, अधुनाऽप्यस्ति = इदानीमपि द्रष्टुं शक्यते । अर्थादत्रैव शकुन्तला कण्वाश्रमे (कोटद्वार इति नामके स्थाने) निवसति स्म ।

अनुवाद- पार्थ (अर्जुन) ने जहाँ अपनी तपस्या के प्रभाव से जगद्वन्दनीय अस्त्र (शैवास्त्र) को प्राप्त किया । जहाँ आज भी शकुंतला के द्वारा सिंचित पादपों की विहार लीला होती है । (यह वह भूमि है ।)

विशेष- पार्थः- अर्जुन । अवाप- प्राप्त किया । यत्र शकुन्तलासिञ्चतिपादपानां- यहाँ शकुंतला के द्वारा पौधों को जल से सींचा गया । यह वही भूमि है । (कण्वाश्रम कोटद्वार)। अधुनाऽप्यस्ति- आज भी हैं ।

पदे पदे सन्ति सरांसि यत्र
प्रफ़ुल्लपाथोजमनोहराणि ।

पीत्वा रसं शान्तहृदो द्विरेफा
निद्रानिमग्नाः स्वगतिं त्यजन्ति ।।8।।

अन्वयः- यत्र पदे-पदे प्रफ़ुल्लपाथोजमनोहराणि सरांसि सन्ति, रसं पीत्वा शान्तहृदो द्विरेफाः निद्रानिमग्नाः स्वगतिं त्यजन्ति।

व्याख्या- (अस्मिन् श्लोके कवि उत्तराखण्डस्य प्राकृतिकसमृद्धिं वर्णयति) यत्र = यस्मिन उत्तराखण्डे पदे-पदे = यत्र तत्र सर्वत्र, प्रफ़ुल्लपाथोजमनोहराणि = प्रफ्फुल्लानि पूर्ण विकासं गतानि पथोजानि कमलानि पाथः जलम् 'कबन्धमुदकं पाथः इत्यमरः 'तस्मिन् जायते इति पाथोजम्, तैः पाथोजैः कमलैः मनोहराणि सुन्दराणि लोकानां मनसो हरणे आकर्षणे समर्थानि, सरांसि = तडागाः 'पद्माकरस्तडागोऽस्त्री कासारः सरसी सरः इत्यमरःसन्ति, रसं = कमलानां कोषात् रसं मधुः, पीत्वाशान्तहृदो = शान्तं हृत् येषां, रसपानेन तुष्टाः इत्यर्थः द्विरेफाः = भ्रमराः निद्रानिमग्नाः= निद्रायां निमग्नाः मज्जिताः, पूर्णरूपेण रसं मधु पीत्वा कमलकोषे एव शयनं कुर्वन्ति भ्रमराः, अतो निद्रायां निमग्नाः सन्तः, स्वगतिं = स्व्कीयां गतिं पुष्पान्तरे भ्रमणं त्यजन्ति। निद्रानिमग्नो भ्रमरः पुष्पान्तरे गमनात् विरमिता भूत्वा एकस्यैव पुष्पस्यांके निवसन्तीति भावः। एतेन ध्वनि बलात् सूच्यते यत् चञ्चलमना अपि जनाः पूर्णतृप्ताः सन्तः एकस्मिन्नेव स्थाने तिष्ठन्ति। अर्थात् संतुष्टाः भवन्ति। अनुप्रासलंकारः।

अनुवाद- जहाँ कदम-कदम पर खिले कमलों से मनोहर तालाब हैं। कमल रस को पीकर मत्त मधुकर जहाँ (कमल कोश में) सोकर अपनी गति (चंचलता) को छोड़ देते हैं।
(यह वही भूमि है।)

विशेष- प्रफ़ुल्लपाथोजमनोहराणि- पथ पूर्ण रूप से खिले हुए कमलों से मनोहर। सरांसि- तालाब। शान्तहृदो- जिसका शान्त हृदय हो। द्विरेफाः- मधुकर, भौंरा।

घनो घनस्तिष्ठति यत्र गेहे
सौदामिनी यत्र करोति नृत्यम्।
गम्भीरनादो गगने घनस्य
गुहासु शैलस्य हरेश्च नित्यम् ।।9।।

अन्वयः- यत्र गेहे घनो घनः तिष्ठति, यत्र सौदामिनि नृत्यं करोति, गगने घनस्य शैलस्य गुहासु हरेः च गम्भीरनादो नित्यं भवति।

व्याख्या- यत्र = यस्मिन्नुत्तराखण्डे, गेहे = गृहे जनानां निवासार्थ निर्मिते गृहे 'गृहं गेहोदवसितं वेश्म सद्मनिकेतनमित्यमरः' घनो सघनः सान्द्रः 'घनं निरन्तरं सान्द्रमित्यमरः' घनः = मेघः 'घनजीमूतमुदिरजल मुक धूमयोनयः इत्यमरः' तिष्ठति = अर्थात् आकाशे चरन् मेघः लोकानां गृहं प्रविशति। यत्र = यस्यां भूमौ, सौदामिनी = मेघोदरगता तडित् विद्युत् 'तडित् सौदामिनी विद्युत् चञ्चला चपला अपीत्यमरः' नृत्यं = नर्तनं करोति, गगने = आकाशे, घनस्य = मेघस्य, शैलस्य = शैलः पर्वतः 'आद्रिगोत्रगिरिग्रावाचलशैलशिलोच्चयाः इत्यमरः 'तस्य गुहासु = दरीषु

'दरी तु कन्दरो वा स्त्री देवखातविले गुहेत्यमरः' हरेः = सिंहस्य 'सिंहो मृगेन्द्रः पञ्चास्यो हर्यक्षः केसरी हरिरित्यमरः' च गभीरनादो = गम्भीर घोषः, मेघानां रवोऽपि गम्भीरः सिंहानां नादोऽपि गम्भीरः, नित्यं = प्रतिदिनं प्रतिक्षणमिति भावः भवति।

अनुवाद-जहाँ घना मेघ घर में निवास करता है। (मेघ लोगों के घरों में प्रवेश कर जाता है।) सौदामिनी (विद्युत) जहाँ अपना नृत्य प्रस्तुत करती है। जहाँ आकाश में मेघ का और पर्वत की गुफाओं में सिंहों का गंभीर नाद नित्य हुआ करता है। (यह वही भूमि है।)

विशेष-सौदामिनि- विद्युत (बिजली)। शैलस्य- पर्वत की। गुहासु- गुफाओं में। हरेः- सिंह। गम्भीरनादो- गंभीर ध्वनि (नाद)।

मुनिः पुराणो निजपुत्रमोहाद्
यदा स्वयं कातरतामवाप।
तत्साक्षिणस्ते विलसन्ति वृक्षाः
यत्राधुनापि स्मृतिमादधानाः ॥10॥

अन्वयः-यदा पुराणो मुनिः निजपुत्रमोहाद् कातरताम् अवाप, तत्साक्षिणः वृक्षाः यत्र अधुनापि स्मृतिमादधानाः विलसन्ति।

व्याख्या-यदा = यस्मिन्काले पुरा द्वापरे, पुराणो मुनिः = पुराणकर्ता मुनिः व्यासः वा प्राचीनो मुनिः व्यासः, निजपुत्रमोहाद् = स्वपुत्रस्य तनयस्य मोहाद् मोहवशात्, कातरताम् = दीनताम् अधैर्यताम् 'अधीरे कातरः इत्यमरः' अवाप = प्राप्तवान्,तत्साक्षिणः = तस्य साक्षी तत्साक्षी, ते साक्षिणः, वृक्षाः = पादपाः, यत्र = यस्मिन्नुत्तराखण्डे, अधुनापि = स्मृतिमादधानाः पूर्वदृष्टदृश्यस्य स्मरणं कुर्वन्तः विलसन्ति = शोभाप्नुवन्ति। श्रीमद्भागवानुसारं महर्षिव्यासः स्वपुत्रं शुकदेवं बाल्यकाले एव सन्यासाय ब्रजन्तं वीक्ष्य कातरतामवाप। तन्निरोधाय यत्नं कृतवान्। तथापि स परावर्तितो नाभवत्। तदा पुराणकर्तुरपि पुत्रविषयमोहजनितकातरतायाः साक्षिणो वृक्षाः इदानीमपि उत्तराखण्डे राजन्ते। अर्थात् विशालप्राचीनवृक्षानां बाहुल्यमस्ति राज्यस्य विपिने। वृक्षाणां स्मृतिधारणक्षमतायाः कथनेनातिशयोक्तिरलंकारः। स्मरणं चेतनानां धर्मो भवति नत्वचेतनानाम्।

अनुवाद- जब पुराण मुनि (व्यास) ने अपने पुत्र के मोह में कातरता को प्राप्त किया था, उस दृश्य के साक्षीभूत वृक्ष आज भी जहाँ अपनी उन स्मृतियों को धारण किये हुये विराजमान हैं। (वह यही भूमि है।)

विशेष- यदा- जब। पुराणो मुनिः- पुराण कर्ता,पुराणों के रचयिता अर्थात श्री वेदव्यास जी।अवाप- प्राप्त किया। कातरताम्- दीनतावश,अधैर्यपूर्वक।

शिलातले यत्र वसन्ति लोकाः
प्रालेयशय्यां स्वयमेव लब्ध्वा।
गङ्गाऽमृतास्वादमवाप्य कश्चित्

जानाति नो तीव्रतरां बुभुक्षाम् ।।11।।

अन्वयः-यत्र प्रालेयशय्यां स्वयमेव लब्ध्वा लोकाः शिलातले वसन्ति । कश्चित् गङ्गामृतास्वादमवाप्य तीक्ष्णतरामपि बुभुक्षां न जानाति ।

व्याख्या- यत्र = उत्तराखण्डराज्ये, प्रालेयशय्यां = प्रालेयो हिमः 'प्रालेयं मिहिका चाथ हिमः सप्तान्यलिङ्गका इत्यमरः' तस्य शय्यां शयनासनं, स्वयमेव = स्वतः एव, लब्ध्वा = सम्प्राप्य, लोकाः = जानाः तत्रत्यनिवासिनः, शिलातले = शिलायास्तले अधस्तात् वा शिलायामेव वसन्ति । कश्चित् = कश्चिज्जनः गङ्गामृतास्वादमवाप्य = गङ्गायाः अमृतं जलं 'पयः कीलालममृतं जीवनं भुवनं वनमित्यमरः' तस्य जलस्य आस्वादम् प्राप्य तीक्ष्णतरामपि = तीव्रतराम् नितान्तमावश्यकीम् अपि बुभुक्षां = भोक्तुमिच्छाम् न जानाति । अर्थात् गङ्गाजलं पीतवैव सन्तुष्टाः भवन्ति । जलास्वादमात्रेणेव तुष्टाः इत्यपि न जानाति यत् किमपि भोक्तव्यमप्यस्ति । गङ्गाजलपानेनैव बुभुक्षाया अभावादत्रोतिशयोक्तिरलंकारः ।

अनुवाद- जहाँ शिलातल पर स्वतः प्राप्त वर्फ की शय्या पर निवास करते हैं । गङ्गा की अमृतबूंदों का आस्वाद पाकर कोई भी जहाँ पर तीक्ष्ण बुभुक्षा (भूख) को नहीं जानता है । (यह वही भूमि है ।)

विशेष- प्रालेयशय्यां- प्राप्त बर्फ की शय्य । लब्ध्वा- प्राप्त कर, पाकर । गङ्गामृतास्वादमवाप्य- गङ्गा की अमृत बूंदों का आस्वाद प्राप्त कर । बुभुक्षां- भूख को ।

वने वने नास्ति दिनेशतापो
न वा पयोदस्य जलप्रपातः ।
प्रयोजनाभावमवाप्य लोकाः
पर्णोटजायां सततं वसन्ति ।।12।।

अन्वयः- यत्र घने वने दिनेशतापः नास्ति, न वा पयोदस्य जलप्रपातः, प्रयोजनाभावम् अवाप्य लोकाः पर्णोटजायां सततं वसन्ति ।

व्याख्या- यत्र = यस्मिन्नुत्तराखण्डे, घने = सघने सान्द्रे 'घनं निरन्तरं सान्द्रमित्यमरः' वने = विपिने 'अटव्यरण्यं विपिनं गहनं काननं वनमित्यमरः' दिनेशतापः = दिनेशस्य सूर्यस्य दिनस्य ईशः स्वामी दिनेशः सूर्यः, तस्य तापः नास्ति । वृक्षस्य सघनत्वात् सूर्यस्य तापो नायाति भूमाविति भावः, अथ भूमौ नायाति भूमावित भावः, अथ च न वा पयोदस्य = पयः ददाति पयोदो मेघः जलप्रपातः = जलधाराप्रपतनम् अपि नास्ति । अर्थात वनानां सघनत्वात् मेघान्निपतिता जलधारा अपि भूमौ नायाति अतः, प्रयोजनाभावम् = प्रयोजनस्य अभावम्, अवाप्य = प्राप्य लोकाः पर्णोटजायां = पर्णनिर्मित उटजायां कुट्यां 'पर्णशालोटजोऽस्त्रियामित्यमरः' सततं = निरन्तरं वसन्ति वासं कुर्वन्ति । गृहस्य निर्माणस्य हेतुद्वयं भवति मुख्यरूपेण सूर्यताप निवारणं मेघजलाघात निवारणं च । प्राञ्चात्र विपिनानां सघनत्वात् पादमूले निवसतां जनानां कृते न सूर्यस्य तापो भवति न मेघानां जलप्रपातः। अतः श्रेष्ठ गृह निर्माणस्य आवश्यकतैव न प्रतीयते ।

प्रयोजनाभावे कश्चिदपि किमपि न करोतीति सामान्य सिद्धान्तः । अतोऽत्रत्य लोकाः पर्णोटजायामेव वसन्ति। पर्णोटजायामेव वसन्ति । पर्णोटजायां निवासस्य हेतुप्रदर्शनादत्र काव्यलिङ्गालंकारः। वनानां सघ्नत्वात् सूर्यतापाभावस्य मेघप्रपाताभावस्य निदर्शनादतिशयोक्तिश्च ।

अनुवाद- जहाँ सघन वनों में न सूर्य का ताप है और न मेघ का जल गिरता है। (वृक्षों के घने होने के कारण न सूर्य की किरणें आती हैं और न मेघ की बूंदें नीचे आती हैं। (अतः विशिष्ट गृहों को निष्प्रयोजन समझकर लोग पत्तों की कुटिया बनाकर ही निवास कर लेते हैं। (यह वही भूमि है।)

विशेष- दिनेशतापः- सूर्य का ताप । पयोदस्य- जल देने वाले अर्थात मेघ । प्रयोजनाभावम्- प्रयोजन का आभाव । जलप्रपातः-जल का गिरना । पर्णोटजायां- पत्तों से निर्मित । सततं- निरंतर (लगातार) । वसन्ति- निवास करते है ।

वृक्षा घनास्ते शरणागतान् तान्
रक्षन्ति तापाज्जलदप्रपातात् ।
दिशन्ति लोकान् महनीयतत्वं
सेव्यं सदाऽस्त्यागतरक्षकत्वम् ।।13।।

अन्वयः- ते घनाः वृक्षाः तान् शरणागतान् तापात् जलप्रपातात् रक्षन्ति (एतेन) आगतरक्षकत्वं इति महनीयतत्वं सदा सेव्यम् इति लोकान् दिशन्ति ।

व्याख्या- (अत्र कविः प्रकृतौ चेतनत्वं वर्णयति) ते = पूर्वोक्ता विपिनस्थाः घनाः = सान्द्राः वृक्षाः = पादपाः शाखिनो वा, तान् शरणागतान् = शरणे वृक्षस्य मूले शरणार्थ आगता ये ते शरणागताः, तान् तापात् = सूर्यस्य तापात् ग्रीष्मप्रभावात् जलदप्रपातात् = जलदस्य मेघस्य प्रपातः जलदप्रपातः तस्मात् रक्षन्ति = निवारयन्ति । अर्थात् वृक्षस्य मूले ये समायान्ति ते तापात् जलप्रपाताच्च सुरक्षिता भवन्ति । (एतेन) आगतरक्षकत्वं = शरणे समागतानां रक्षकत्वं रक्षणकर्तृत्वम्, इति महनीयतत्वं = श्रेष्ठातत्वमस्तीति, सदा = सर्वदा, सेव्यम् = सेवनीयम्, इति लोकान् = जनान्, दिशन्ति = निर्दिशन्ति पाठयन्तीति । शरणे समागतानां रक्षणं श्रेष्ठजनानां परमदायित्वं भवति । वृक्षाः शरणागतानां रक्षणं विधाय लोकान् पाठयन्ति यत् शरणागतरक्षणं सर्वदा कर्तव्यमिति। अचेतने चेतनतायाः स्थापनत्वादत्रातिशयोक्तिलंकारः।

अनुवाद- यहाँ के सघन वृक्ष अपने शरण में आये हुए लोगों की सूर्य ताप और मेघ जल प्रपात से रक्षा करते हैं। (अपने कर्तव्यों से) लोगों को यह उपदेश देते हैं कि शरणागत की रक्षा करना सबसे महनीय तत्व है।

विशेष- शरणागतान्- शरण मेन आये हुये शरणार्थी ।तापात्- सूर्य की ताप से । आगतरक्षकत्वं- शरण में आये हुये जनों की रक्षा करना । महनीयतत्वं- श्रेष्ठतं तत्व, सबसे महनीय तत्व । दिशन्ति- निर्देश देते हैं ।

कुचैलिनस्ते जगदीश्वरत्वं
सन्तोषरत्नं समवाप्य यान्ति ।
व्यर्थं वदन्त्यत्र पुराणविज्ञाः
कुचैलिनं देवगणास्त्यजन्ति ।।14।।

अन्वयः- ते कुचैलिनः सन्तोषरत्नं समवाप्य जगदीश्वरत्वं यान्ति। पुराणविज्ञाः व्यर्थः वदन्ति यत् कुचैलिनं देवगणाः त्यजन्ति।

व्याख्या- ते = उत्तराखण्डस्य निवासिनः, कुचैलिनः = चैलः वसनं, 'वस्त्रमाच्छादनं वासश्चैलं वसनमंशुकमित्यमरः' कुत्सितं चैलं कुचैलं, जीर्णशीर्णमलिनवस्त्रमिति, कुर्चलमस्यास्तीति कुचैली ते कुचैलिनः, सन्तोषरत्नं = स्नतोषरूपं रत्नं, सन्तोषं परमं सुखमिति नितिकाराः वदन्ति, समवाप्य = प्राप्य, जगदीश्वरत्वं = जगतः ईश्वरत्वं यान्ति, अर्थात् ते दरिद्राः अपि सन्तोषरत्नप्रभावात् देवत्वमायान्ति। सन्तोषाभावात् कदापि सुखं न भवतीति सामान्यविषयः, पर्वतीयाः दरिद्रतायामपि संतुष्टता भवन्तीति सन्देशः। पुराणविज्ञाः = ये पुराणं जानन्ति ते पुराणविज्ञाः, व्यर्थः वदन्ति = कथयन्ति, यत् कुचैलिनं = मलिनवस्त्रधारिणं, देवगणाः = सुराः त्यजन्ति। परञ्चात्र पर्वतीयनवलोक्य पङ्क्तिरेषा व्यर्थत्वं याति। अतिशयोक्त्यलंकारः।

अनुवाद- यहाँ कुचैली (जीर्ण मलिन वस्त्र धारण करने वाले लोग) संतोष रूप रत्न को पाकर जगदीश्वरता को प्राप्त हो जाते हैं। (संतुष्ट व्यक्ति सर्वदा भगवान् के तुल्य हो जाता है।) व्यर्थ ही लोग कहते हैं कि देवगण कुचैली का परित्याग कर देते हैं।

विशेष- चैलिनः- मलिन वस्त्र। सन्तोषरत्नं- संतोष रूपी रत्न। समवाप्य- प्राप्त कर, पाकर। जगदीश्वरत्वं - जगत ईश्वरत्व, ईश्वरीय गुण। पुराणविज्ञाः- पुराणों के ज्ञाता।

फलानि पुष्पाणि सदैव यत्र
विना प्रयासं सुजना लभन्ते।
कदापि जागर्ति न सा बुभुक्षा
नैरुज्यमार्गस्य हिया विहन्त्री ।।15।।

अन्वयः- यत्र फलानि पुष्पाणि च सुजनाः प्रयासं विना सदैव लभन्ते। नैरुज्यमार्गस्य या विहन्त्री बुभुक्षा सा कदापि न जागर्ति।

व्याख्या- यत्र = यस्मिन्नुत्तराखण्डे फलानिपुष्पाणि = प्रसूनानि च सुजनाः = सहृदयाः सामान्यजना इत्यर्थः, प्रयासं = आयासं विना सदैव = नित्यं लभन्ते। तात्पर्यमिदं यत् वनानां बाहुल्यात् कदाप्यत्र पुष्पाणां फलानां च समृद्धिर्भवत्येव। अतस्तदर्थ विशेष प्रयासस्यावश्यकता न भवति जनानाम्। या पुष्पफ़लादीनां समृद्धिः नैरुज्यमार्गस्य = रुक् रोगः, रोगाभावो नैरुज्यं तस्य नैरुज्यमार्गस्य, विहन्त्री = हननकर्त्री नाशयित्री भवति सा बुभुक्षा = भोक्तुमिच्छा भोजनाभावात् कदापि = कस्यामपि परिस्थितौ कस्मिन्नपि काले न जागर्ति = जीविता न भवति।

अर्थात् भोजनाभावात् यो रोगो भवति जनानाम्। सा बुभुक्षा अत्र फलानां समृद्धिबलात् कदापि लोकान् न बाधते।

अनुवाद-जहाँ सज्जन लोग विना प्रयास के ही फल और फूल प्राप्त करते हैं। जो भूख लोगों को रोगी बना देती है वो भूख यहाँ कदापि नहीं होती है। (वनों का बाहुल्य होने के कारण समयानुकूल फल पर्याप्त मात्रा में यहाँ पाये जातें हैं जिससे लोगों के भूखे रहने की स्थिति नहीं आती है।)

विशेष- सुजनाः- सज्जन लोग, सहृदय जन। लभन्ते- प्राप्त करते हैं। नैरुज्यमार्गस्य- रोग का अभाव, रोगों से रहित। विहन्त्री- नाश करती है।बुभुक्षा- भूख।

पर्णोटजायां च गुहामुखे वा
खद्योतदीपेन सदा प्रसन्नाः।
लोका न जानन्ति दरिद्रतेयं
विघातिनी मानवजीवनस्य ॥16॥

अन्वयः- पर्णोटजायां च गुहामुखे वाखद्योतदीपेन सदा प्रसन्नाःलोका न जानन्ति दरिद्रतेयंमानवजीवनस्यविघातिनी (भवति)

व्याख्या- पर्णोटजायां = पर्णनिर्मितकुट्यां स्वनिवासस्थाने च गुहामुखे = पर्वतानां दरी गुहा तस्यां गुहायां निवसन्तो जनाः, वा खद्योतदीपेन = खद्योता प्रकाशोत्पादक कीटविशेषाः 'खद्योतो ज्योतिरिंगणः इत्यमरः' एव दीपकस्य कार्य कुर्वन्ति तस्यैव प्रकाशे ते स्वकार्य साधयन्ति। अथवा दिवसे सूर्यप्रकाशे कार्य साधयन्ति 'प्रद्योतनो दिनमणिः खद्योतो लोकबान्धवः इत्यमरः'। सदा = सर्वदा प्रसन्नाः = प्रसन्नचेतारः सुखिनः, लोका = जनाः न जानन्ति यत् दरिद्रतेयं = दारिद्र्स्य भावः, भौतिकसुखसाधनाभावः, मानवजीवनस्य = मानवानां यज्जीनम् तस्य विघातिनी = नाशिनी (भवति)। अर्थात् पर्वतीया जनाः दरिद्रताया अवस्थायामपि सन्तुष्टा भवन्ति। तेषां गृहे भवतु नाम प्रकाशाभावः परन्तु रात्रौ खद्योत एव तस्य प्रकाशको भवति दिवसे सूर्यः। विद्युताभावात् मानवजीवनस्य हानिर्भवतीति तत्रत्या लोका न जानन्ति। अत्र सन्तोषस्यैव फ़लमन्यथा दरिद्रता मानवजीवन विघातिनी प्रसन्ना सन्तो जीवन्ति। दरिद्रतायामपि प्रसन्नतायाः। स्थितावतिशयोक्तिरलंकारः।

अनुवाद- चाहे पर्ण कुटी में हों या गुफा के मुख में निवास हो, खद्योत के प्रकाश (जुगनू नामक का क्रीडा जो रात में अपने पंखों से प्रकाश उत्पन्न करता है या दिन में सूर्य) से ही सभी लोग प्रसन्न रहते हैं। ऐसे प्रसन्न लोग यह भी नहीं जानते कि दरिद्रता मानवजीवन का नाश करनेवाली होती है। अर्थात् ये लोग दरिद्रता को नहीं जानते हैं।

विशेष-पर्णोटजायां- पत्तों से निर्मित कुटिया। गुहामुखे- गुफा के मुख में। खद्योतदीपेन- जुगनू का प्रकाश। दरिद्रतेयं- दरिद्रता का आभाव। विघातिनी- नाश करने वाली।

मेघा वृषाश्चात्र चरन्ति मुग्धाः

सर्पयन्ति कर्काः बहुवृश्चिकाश्च ।
सिंहा गुहायां मकराश्च मीनाः
नदीप्रवाहे सरसे तडागे ।।17।।

अन्वयः- अत्र मुग्धा मेषा वृषाश्च चरन्ति, सर्पन्ति कर्काः बहु वृश्चिकाः च चरन्ति, गुहायां सिंहाः नदीप्रवाहे सरसे तडागे वा मकरा मीनाश्च (भ्रमन्तीति) ।

व्याख्या- (श्लोकद्वये वैचित्त्रयं वर्णयति कविरुत्तराखण्डस्य) अत्र = अस्मिन्नुत्तराखण्डे मेषाः = उर्णाकेशसमन्वितो छागसदृशो जीवः 'उर्णायुमेषवृष्णक एडूके इत्यमरः' मुग्धा = सरला सरल स्वभावाः जीवाः, वृषाश्च = वृषाः बलीवर्दाः 'उक्षा भद्रो वलीवर्दः ऋषभो वृष इत्यमरः' कृर्षिकर्म सहायकाः चरन्ति = भ्रमन्ति, सर्पन्ति = इतस्ततो भ्रमन्ति कर्काः = केकडा' इति हिन्दीभाषायाम्, बहु = बहवो वृश्चिकाः = शूककीटः स्यादलिद्रुणौ च वृश्चिकेत्मरः' (विच्छू इति हिन्दी भाषायां) च चरन्ति, गुहायां = पर्वतीय गुफ़ायाम् सिंहाः = केसरिणः नदीप्रवाहे = नदीनां प्रवाहे जल धारायां मकरा = विशाल जलजन्तवः (मगरमच्छ इति) सरसे = सजले तडागे = सरसि वा मिनाश्च = मत्स्याः 'पृथुरोमा झषो मत्स्ये मीनो वैसारिणोऽण्डजः इतय्मरः' (भ्रमन्तीति) । अर्थादत्र मेष-वृष-कर्क-वृश्चिक-सिंह-मकर-मीनाः बहुलतयाः भ्रमन्त्यत्र । अभंगश्लेषालंकारेणातिशयोक्तिरलंकारः ।

अनुवाद-यहाँ मुग्ध मेष (भेड़) वृष (बैल) चरते हैं, कर्क (केकड़ा) एवं वृश्चिक (विच्छू) यहाँ घूमते रहते हैं । गुफाओं में सिंह, नदियों में मगरमच्छ और तालाबों में मीन (मच्छलियाँ) रहती हैं।

विशेष- मुग्धा- सरल स्वभाव । सर्पन्ति- इधर उधर घूमना । नदीप्रवाहे- नदियों का प्रभावित जल। गुहायां- गुफा । तडागे- तालाबमें ।

कन्याः सकुम्भाः मिथुनं तुलायां
स्कन्धे जनानां सततं धनूंषि ।
किं ज्यौतिषस्यास्ति विचित्रवृत्तिः
किं वा प्रदेशस्य विचित्रचित्रम ।।18।।

अन्वयः- कन्याः सकुम्भाः, मिथुनं तुलायां, जनानां स्कन्धे सततं धनूंषि, ज्यौतिषस्य विचित्रवृत्तिरस्ति किम्, किं वा प्रदेशस्य विचित्रचित्रम् (अस्ति)

व्याख्या-कन्याः = अस्मिन् प्रदेशे बालिकाः तरुण्यो वा पुत्र्यः 'कन्या कुमारी गौरी त्वित्यमरः' सकुम्भाः= कुम्भेन घटेन सहिताः सकुम्भाः 'कुम्भौ घतेभमूर्धाशावित्यमरः' दूरस्थानात् जलं वहन्त्यः सर्वदा कुम्भेन सहिताः भवन्ति, घटं नीत्वा यान्त्यायान्तीति भावः, मिथुनं = दम्पती 'स्त्रीपुंसौ मिथुनं द्वन्द्वमित्यमरः' तुलायां = समानतायां, तुला परस्परं समानरूपेण भारबोधकयन्त्रं भवति, अर्थात् स्त्रीपुरुषयोर्मध्ये समानता भवति भाव ग्रहणस्य विचारस्यादान प्रदानस्य परस्परंसमानतायां पत्न्याः पत्युश्च जीवनं सुखमयं भवति । जानानां = लोकानां, स्कन्धे = बाह्वोर्मूले सततं = निरन्तरं धनूंषि = कोदण्डं भवति, 'धनुश्चापौ

धन्वशरासनकोदण्डकार्मुकमित्यमरः' प्रायः आखेटक्रमे विचरतां जनानां स्कन्धे धनूंषि भवन्ति, ज्यौतिषस्य = ज्यौतिषशास्त्रस्य विचित्रवृत्तिः = विचित्रा चित्रात्मिका आश्चर्यकारिका स्थितिः अस्ति किम् किं वाप्रदेशस्य = अस्योत्तराखण्डप्रदेशस्य विचित्रचित्रम् = आश्चर्यकारकं चित्रमस्ति । ज्यौतिषशास्त्रे कन्या, कुम्भ, मिथुन,तुला, धनुराशयस्तु भवन्ति परन्तु बहुवचने न भवन्ति। परञ्चात्र सर्वत्र बहुवचनं दृश्यते। अस्मिन् प्रदेशे ज्यौतिषशास्त्रस्यैव विचित्रता समायाता वा राज्यस्यैव विचित्रचित्रमस्तीति सन्देहः । कुम्भादिशब्दानां राशित्वेनार्थग्रहणे श्लेषस्याधारमादाय। संदेहालंकारः ।

अनुवाद- कुम्भ के साथ कन्यायें (जलपूर्ण घट लेकर चलने वाली कन्यायें) हैं। तुला के साथ मिथुन है (दम्पती समान गुणवाले हैं)। (अर्थात दम्पती बराबर गुणवाले होते हैं। दोनों में परस्पर समझने की क्षमता होती है। इससे पारिवारिक जीवन समुचित होता है।) लोगों के कंधे पर सदा धनुष रहता है (शिकारी लोग धनुष बाण लेकर चलते हैं) यह ज्योतिष शास्त्र की विचित्र वृत्ति है या इस प्रदेश की विचित्रता है।

विशेष- स्कन्धे- कंधे पर । धनूंषि- धनुष वाण । ज्यौतिषस्य – ज्यौतिष शास्त्र की । विचित्रवृत्तिरस्ति- आश्चर्य चकित वृत्ति है। विचित्रचित्रम् – आश्चर्य चकित चित्र, विचित्रता।

मूलेन पुष्पेण फलेन वा ये
निघ्नन्ति रोगानिह दुर्विनीतान्।
ते सुश्रुतास्ते चरका इदानी-
मज्ञातवासे निवसन्ति यत्र ।।19।।

अन्वयः-ये दुर्विनीतान् रोगान् मूलेन वा निघ्नन्ति ते सुश्रुता चरका अज्ञातवासे इदानीम् यत्र निवसन्ति।

व्याख्या-(उत्तराखण्डस्यैतिह्यं वैशिष्ट्यं च वर्णयति कविः) ये = अत्रत्याः लोकाः, दुर्विनीतान् = असाध्यान् रोगान् शरीरविकारान्, मूलेन = वृक्षस्य मूलेन शिफया, 'मूलमाद्ये शिफ़ोभयोरित्यमरः' फलेन वा निघ्नन्ति = निहन्ति दूरीकुर्वन्ति, ते सुश्रुता चरका = आयुर्वेदस्य परमादरणीया आचार्याः, अज्ञातवासे = न ज्ञायते निवासो यदा स अज्ञातवासः तस्मिन्नेव क्रमे, इदानीम् यत्र = उत्तराखण्डे निवसन्ति । अर्थात् वृक्षस्य मूलेन फलेनतद्रसेन वा रोगानामुचापकर्तारः आयुर्वेदशास्त्रस्य परमाचार्याः सुश्रुतचरकादयः अत्र रूपपरिवर्तने अज्ञातवासे निसन्तीति । अत्र गम्योत्प्रेक्षालंकारः ।

हिन्दी-(वृक्षों के) जड़, फल और फूलों से दुर्विनीत (असाध्य) रोगों को भी दूर कर देते हैं, वे सुश्रुत और चरक इस समय अज्ञात वास में इस प्रदेश में निवास करते हैं। (अर्थात ग्रामीण वैद्य सर्वविद रोगों को दूर करने में चरक और सुश्रुत के समान होते हैं।)

विशेष- दुर्विनीतान्- आसाध्य रोग, शरीर सम्बन्धि विकार । निघ्नन्ति- दूर करते हैं । सुश्रुता चरका- सुश्रुत एवं चरकआयुर्वेद के परम आचार्य । अज्ञातवासे- अज्ञात वायस में । यत्र निवसन्ति- यहाँ निवास करते हैं।

काव्यप्रकाशे सततं वसन्तः
रसात्मके चापि सदा श्वसन्तः ।
रसस्य गङ्गाधरतामुपेत्य
साहित्यभूताः सुजना भवन्ति ।।20।।

अन्वयः- (यत्र) सुजनाः सततं काव्यप्रकाशे वसन्तः, रसात्मके चापि श्वसन्तः, रसस्य गङ्गाधरताम् उपेत्य साहित्यभूताः भवन्ति।

व्याख्या- (अस्मिन्श्लोके उत्तराखण्डस्य निवासिनां विद्वत्वं सहृदयत्वं च वर्णयति कविः) यत्रोत्तराखण्डे सुजनाः = सहृदयाः सामाजिकाः, सततं = आजीवनं निरन्तरं, काव्यप्रकाशे = काव्यस्य प्रकाशने काव्यभिधायाः प्रचारे वा काव्यप्रकाशनामधेय ग्रन्थस्य पठने पाठने आलोचने प्रत्यालोचने वा, वसन्तः = निवसन्तः स्वसमयं यापयन्तः, रसात्मके = रसात्मको ग्रन्थः साहित्यदर्पणः आचार्य विश्वनाथ विरचित:, तस्मिन्, च अपि स्वसन्तः = श्वासं ग्रह्णतः अर्थात् श्वास ग्रहणवत् रसात्मक शास्त्रस्य अलोचनं प्रत्यालोचनं कुर्वन्तः, रसस्य = काव्यस्य प्राणभूतस्य रसस्य गङ्गाधरताम् = गङ्गा धरतीति गङ्गाधरः महादेवः, तस्य भावः गङ्गाधरता, तां तद्भावं, उपेत्य = सम्प्राप्य, साहित्यभूताः = साक्षात साहित्यरूपाः, भवन्ति । अर्थादत्रत्याः जनाः सततं काव्यप्रकाशस्य साहित्यदर्पणस्य च अध्यनेन अध्यापनेन स्वयं रसं गङ्गाधरा भवन्ति । अर्थात् काव्यप्रकाश साहित्य दर्पणादीनां पश्चाद् यथा तेषामालोचन प्रत्यालोचन बलात् पं० राजजगन्नाथनिर्मित रसगङ्गाधरः सर्वश्रेष्ठग्रन्थोऽभवत् तथैवैते जनाः भवन्तीति । सर्वे जनाः विद्वांसो भवन्तीति सारांश: । श्लेषालंकारः अन्त्यानुप्रासश्च ।

अनुवाद- जो काव्यप्रकाश में (काव्यों के प्रकाशन में) सदा निवास करते हैं । रसात्मक (साहित्यदर्पण, सुगंधित वातावरण) में ही साँस लेते हैं। रस की गङ्गा धरता (शिवतत्व, रसपूर्ण वार्ता में कुशलता) को प्राप्त कर यहाँ के लोक साहित्य शास्त्र स्वरूप हैं। उपेत्य- पाकर, प्राप्त कर।

विशेष-सुजनाः- सज्जन, सहृदय जन ।सततं- निरंतर । काव्यप्रकाशे वसन्तः- काव्यप्रकाश में, काव्यप्रकाश आदि ग्रंथों के अध्ययन में सदा निवास करते हैं। रसात्मके- रसात्मक ग्रंथ आचार्य विश्वनाथ विरचित साहित्य दर्पण । स्वसन्तः- स्वांस लेना । गङ्गाधरताम्- गङ्गा को धारण करने वाले अर्थात महादेव। साहित्यभूताः-साहित्य शास्त्र का स्वरूप।

विना विभक्तिं हृय्पदत्वनाशो
न वा समासे खलु विग्रहत्वम् ।
सङ्ख्यामतिक्रम्य हि धातुसंज्ञा
शास्त्रं नवीनं ननु पाणिनियम् ।। 21 ।।

अन्वयः- अत्र विभक्तिं हि अपदत्वनाशः, समासे न वा विग्रहत्वं खलु, संख्यामतिक्रम्य हि धातुसंज्ञा, नवीनं पाणिनीय शास्त्रं ननु।

व्याख्या- अत्र विभक्तिं = व्याकरणशास्त्रोचितस्वौजसादि वा तिप् तस् झि आदि विभक्तयो भवन्ति, यां विना पदानां साधुत्व न भवति, विना = तां विभक्ति विनैव, हि अपदत्वनाशः = अपदत्वं पदसाधुत्वाभावत्वं तस्य नाशो भवति अर्थात् अपदोऽपि साधुपदत्वमायाति वा विभक्तिर्विच्छेदनं विच्छेदनं विनैव न पदत्वं चरणत्वमपदत्वम् पादयोः रोगाः,तस्य परिमार्जनंविच्छेदनादिकर्म विनैव भवतीति, समासे = समसनं समासाः इति व्याकरणशास्त्रे, यत्र पदयोः पदानां वा एकीकरणं भवति, तत्र न वा विग्रहत्वं = पदानां विभेदनत्वं, पदयोः पदानां वा पृथक्करणं, खलु निश्चयेन, अथवा परस्परं मानसिक भावयोगे विग्रहत्वं विभेदकत्वं परस्परविरोधित्वं न, सङ्ख्यामतिक्रम्य = गणनार्थ या पद्धतिः, तां अतिक्रम्य उल्लङ्घ्य अर्थात् सङ्ख्यातोऽप्यधिकं, हि धातुसंज्ञा = भूवादयो धातवः इति पाणिनीयशास्त्रे, ते धातवो गणनीयास्सन्ति, परिगणितास्सन्तीति भावः, परञ्चात्र धातूनां रत्नानां गणना नैव भवितुमर्हति अनन्तरत्नमत्र वर्तते, 'अनन्तरत्नप्रभवस्यतस्य' इति महाकवि कालिदासः, नवीनं पाणिनीयशास्त्रं = महर्षि पाणिनि विरचितं शास्त्रं व्याकरणशास्त्रं, तन्नवीनमेव शास्त्रमिदं राज्यं ननु। व्याकरण शास्त्रे विभक्ति बिना साधुपदत्वं न भवति, परञ्चात्र विच्छेदनं विनैव पदयोः भग्नतादिरोगशमनं भवति ग्रामीणचिकित्साबलात्, व्याकरणशास्त्रे समासे विग्रहो भवत्येव, परञ्चात्र जनानां परस्परमानसिक भावसम्बन्धे विग्रहो युद्धं न भवति व्याकरणशास्त्रे धातूनां सङ्ख्या परिगणितास्सन्ति, परञ्चात्र धातूनां सङ्ख्याः गणना नैव भवितुमर्हति। अतः प्रतीयते यत् नवीनं व्याकरणशास्त्रमस्तीति राज्यमिदम्। श्लेषसम्बलितविरोधाभासालंकारः।

अनुवाद- यहाँ बिना विभक्ति के (बिना काटे, बिना प्रथमादि विभक्ति लगाए) अपदत्व (दुष्ट पदत्व, पैर विहीन अर्थात लंगड़ा व्यक्ति का लँगड़पन) ठीक हो जाता है। अर्थात बिना विभक्ति के ही पद शुद्ध हो जाता है। बिना काटे चीडे पैर का इलाज हो जाता है। समास विग्रह नहीं होता (साथ-साथ रहने वालों में कभी झगड़ा नहीं होता। यहाँ धातुओं के नामों की कोई गिनती नहीं है। अर्थात अनगिनत धातु यहाँ पाई जाती है। यह महर्षि पाणिनी का नया शास्त्र है।

विशेष –अपदत्वनाशः - पैर हीन अर्थात लंगड़ा व्यक्ति का लँगड़पन यहाँ ठीक हो जाता है। अर्थात बिना विभक्ति के ही पद शुद्ध हो जाता है।समासे न वा विग्रहत्वं खलु - साथ-साथ रहने वाले कभी अलग नहीं होते।नवीनं - नया पाणिनीय शास्त्रं - महर्षि पाणिनी द्वारा रचित शास्त्र।

अधोगतानामिह धूमराशिं
निपीय मेघो भवति प्रचण्डः।
पापं परेषां समयप्रभावात्
भुङ्तेऽत्र लोके सततं हि साधुः ।।22।।

अन्वयः-इह अधोगतानां धूमराशिं निपीय मेघः प्रचण्डो भवति। समयप्रभावात् परेषां पापं लोके साधुः हि अत्र भुङ्क्ते।

व्याख्या-इह = अस्मिन् उत्तराखण्ड राज्ये, अधोगतानां = अधः नीचैः स्थिताः ये ते अधोगताः, अर्थात् पर्वतादधः भूमौ ये भौतिक विकासेन विकसिता जनाः निवसन्ति तेषां, धूमराशिं = धूमः अग्न्युच्छिष्टः तद्धूमं धूमस्य कृष्णवर्णत्वात् पापाचरणस्य ध्वनि, निपीय = पीत्वा मेघः = वारिदः प्रचण्डो = प्रकृष्टचण्डः भयंकरः चण्डस्त्वत्यन्तकोपनः इत्यमरः भवति । अर्थात् वैज्ञानिकानां विस्फ़ोटकानां दुष्प्रभावात् (ग्लोबलवार्मिंग) प्रचण्डो मेघः पर्वते विनाशं करोति। समयप्रभावात् = समयः कालः तस्य प्रभावात्, परेषां = अन्यजनानां, पापं = दुष्कर्म लोके = संसारे साधु = सज्जनः हि अत्र संसारे भुङ्क्ते । तस्य परिणामेन प्रताडितो भवति । अर्थात अन्ये जनाः स्वार्थलोभाय विस्फ़ोटनादिकर्म कुर्वन्ति । येन प्रकृतौ भवति विघटनं, तस्य प्रभावात् मेघप्रचण्डत्वात् पर्वतीयाः नष्टा: भ्रष्टाश्च भवन्ति । अतएव सत्यमस्ति यत् अन्येषांपापिनां दुष्कर्मणो फलं साधु गुरेव भुङ्ते। एतेन सिध्यति यत् पर्वत प्रदेश वासिनो साधवो भवन्ति। अर्थान्तरन्यासालंकारः।

अनुवाद- अपने से नीचे रहने वालों के धुएं को पीकर यहाँ का मेघ प्रचण्ड हो जाता है। यह सत्य है कि दूसरे के पापों का भोग समय के प्रभाव से सज्जन को ही भोगना पड़ता है। (पड़ोसी यदि अधम हो जाए तो पास में रहने वाले सज्जन को ही वह पाप भोगना पड़ता है। रावण जैसा पड़ोसी हुआ तो बंधन का दण्ड समुद्र को ही भोगना पड़ा।

विशेष- अधोगतानां– नीचे स्थित रहने वाले लोग,निपीय- पीकर, प्रचण्डो- भयंकर, डरावना,समयप्रभावात्- समय के प्रभाव से, लोके- संसार में, भुङ्क्ते- भोगना पड़ता है।

2.4 सारांश

इस इकाई में आपने गङ्गापुत्रावदानम् प्रथम सर्ग के कतिपय श्लोकों का अध्ययन किया। आपने जाना कि महाकवि निरंजन मिश्र ने गङ्गापुत्रावदानम् के प्रथम सर्ग में उत्तराखण्ड राज्य का मनोरम वर्णन प्रस्तुत किया है। उत्तराखंड की भूमि को लोग देव भूमि भी कहते हैं। पुराणसाहित्य में इस भूमि की प्रशंसा की गयी है। इस भूमि की प्राकृतिक छटा को देखकर कवि का हृदय प्रफुल्लित हो उठता है।कवि लिखते हैं -

सुराङ्गनानां प्रतिहारभूमिः, कुलाङ्गनापादपवित्रभूमिः ।
यक्षेश्वराणां हृदयेश्वरीणां, सुरेश्वरीणाञ्च विलासभूमिः ।।
शृङ्गारभूमी रणकर्कशानां, विकासभूमिः कमलेश्वराणाम्।
आवासभूमिर्वचनेश्वराणां, प्रवासभूमिः श्रुतिसाधकानाम् ।।

यह भूमि सुराङ्गनाओं की प्रतिहारभूमि है, कुलांगनाओं के पैरों से पवित्र है, यक्षेश्वर की रानियों एवं सरेश्वरियों की विलासभूमि है। रणकर्कशवीरों की विलास भूमि है। भगवान विष्णु

की या धनवानों की विकास भूमि है, विद्वानों की आवासभूमि है और वेद साधकों की यह प्रवास भूमि है।

इस सर्ग में कविवर यह भी वर्णन करते हैं कि यह वह भूमि है जहाँ वेदव्यास जी ने पुराणों की रचना की। गुरु द्रोणाचार्य ने अपने शिष्यों को धनुर्विद्या की शिक्षा प्रदान की। यह वह भूमि है जहाँ शकुंतला ने अपने छोटे-छोटे घड़े को उठाकरपादपों का सिंचित किया। इस भूमि के सौन्दर्य को देखकर आकाश में चलने वाला मेघ भी यहाँ निवास करने वाले लोगों के घर में घुस आता है। साक्षात् आकाशीय विद्युत् यहाँ नृत्य प्रस्तुत करती हैं। यहाँ के सभी लोग परोपकार में निरत रहते हैं। शरणागतों की रक्षा को अपना धर्म मानने की परिपाटी यहाँ वृक्षों में भी है। यहाँ के सघन वृक्ष अपने शरण में आये हुए लोगों की सूर्य ताप और मेघ जल प्रपात से रक्षा करते हैं। (अपने कर्तव्यों से) लोगों को यह उपदेश देते हैं कि शरणागत की रक्षा करना सबसे महनीय तत्व है। चाहे पर्ण कुटी में हों या गुफा के मुख में निवास हो, खद्योत के प्रकाश (जुगनू नामक का कीड़ाजो रात में अपने पंखों से प्रकाश उत्पन्न करता है या दिन में सूर्य) से ही सभी लोग प्रसन्न रहते हैं। ऐसे प्रसन्न लोग यह भी नहीं जानते कि दरिद्रता मानवजीवन का नाश करनेवाली होती है। अर्थात् ये लोग दरिद्रता को नहीं जानते हैं। यहाँ के लोग सम्पन्न हैं।

2.5 पारिभाषिक शब्दावली

सुराङ्गनानां - सुराङ्गनाओं की
शैलाधिराज - हिमालय
लावण्य - सौन्दर्य
श्रुतिसाधकानाम् - वैदिक पद्धति की साधना करने वाले
कोविद - विद्वान / पण्डित
पार्थ: - अर्जुन
द्विरेफ - भ्रमर
पीत्वा - पीकर
कुचैली - मलिन
त्यजन्ति - त्यागना
यत्र - यहाँ
गुहामुखे - गुफा के मुख में
मेष - भेड़
पर्णोटजायां - पर्णकुटी में
मानवजीवनस्य - मानव जीवन का
श्रुतिसाधकानाम् - वेद साधकों की
अज्ञातवासे - अज्ञात वास में

चरन्ति- चरते हैं

अभ्यास प्रश्न 1

(1) निम्नलिखित प्रश्नों के उचित विकल्प का चयन कीजिये।

1. गङ्गापुत्रावदानम् महाकाव्य के प्रणेता हैं।
   A. राधावल्भ त्रिपाठी
   B. मयूर
   C. निरंजन मिश्र
   D. कल्हण
2. शैलाधिराज हिमालय की गोद में प्रदेश है।
   A. उत्तराखंड
   B. केरल
   C. अरुणाचल प्रदेश
   D. मध्यप्रदेश
3. श्रुति साधक (वैदिक पद्धति की साधना करने वाले) हैं, उनके लिये यह भूमि है।
   A. आवास
   B. प्रवास
   C. विकास
   D. कोई नहीं
4. उत्तराखंड राज्य में किस आचार्य ने अपने शिष्यों को धनुर्विद्या की शिक्षा प्रदान की थी ?
   A. कृपाचार्य
   B. परशुराम
   C. वसिष्ठ
   D. द्रोणाचार्य
5. पुराणों के रचनाकार हैं।
   A. वेदव्यास
   B. वाल्मीकि
   C. वसिष्ठ
   D. तुलसीदास

(2) रिक्तस्थानों की पूर्ति कीजिये।

1. भगवान विष्णु की या धनवानों की यह ---------- भूमि है
2. जो रण में अपनी कर्कशता दिखाते हैं, ऐसे वीरों के लिये यह----------भूमि है,

3. यहाँ के सघन --------- अपने शरण में आये हुए लोगों की सूर्य ताप और मेघ जल प्रपात से रक्षा करते हैं।

4. गुहासु ---------- हरेश्च नित्यम्

5. शकुंतला ने अपने छोटे-छोटे घड़ों को उठाकर पादपों का सिंचित----------की भूमि में ही किया।

(3) सही गलत का चयन कीजिये।

1. महाकवि निरंजन मिश्र ने गङ्गापुत्रावदानम् के प्रथम सर्ग में उत्तराखण्ड राज्य का मनोरम वर्णन प्रस्तुत किया है। ( )

2. यहाँ के वृक्ष अपने कर्तव्यों से लोगों को यह उपदेश देते हैं कि शरणागत की रक्षा करना सबसे महनीय तत्व है। ( )

3. इस राज्य में वर्षा बहुत कम होती है। ( )

4. सप्तऋषियों के सन्ध्या वंदन के योग्य यह पुण्यभूमि है।( )

5. इस भूमि के सज्जन लोग विना प्रयास के ही फल और फूल प्राप्त करते हैं।( )

2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. 1 C, 2 A, 3 B, 4 D, 5 A

2. 1 विकास, 2 शृङ्गार, 3 वृक्ष, 4 शैलस्य, 5 उत्तराखण्ड

3. 1 सही, 2 सही, 3 गलत, 4 सही, 5 सही

2.7 संदर्भ सूची ग्रंथ एवं अन्य सहायक पुस्तकें

1. गङ्गापुत्रावदानम् (स्वामिश्रीनिगमानन्दचरितम्) महाकाव्यम् , महाकवि निरंजन मिश्र कृत (सत्यम् पब्लिशिंग हाऊस) नई दिल्ली।

2.साहित्य दर्पण- आचार्य विश्वनाथ

2.8 निबंधात्मक प्रश्न

1 गङ्गापुत्रावदानम् महाकाव्य के प्रथम सर्ग का वर्णन कीजिये।

2. उत्तराखंड के लोगों की जीवन प्रणाली के बारे में कवि ने क्या कहा है ? अपने शब्दों में उत्तर लिखिये।

3. उत्तराखंड राज्य की प्राकृतिक सौन्दर्याता का वर्णन कीजिये।

इकाई 3. नाटक : दायाद्यम् एवं राष्ट्रं भवति सर्वस्वम् का परिचय

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 डॉ०आशोक कुमार डबराल का परिचय एवं दायाद्यम
3.4 डॉ० कीर्तिवल्लभ शक्टा का परिचय एवं राष्ट्रं भवति सर्वस्वम्
3.5 सारांश
3.6 पारिभाषिक शब्दावली
3.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ/सहायक सामग्री
3.9 निबन्धात्मकप्रश्न

3.1 प्रस्तावना

उत्तराखण्ड के संस्कृत साहित्यकार BASL (N) 220 नामक पाठ्यक्रम के तृतीय खण्ड ''प्रमुख महाकाव्य एवं अन्य विधाएं '' की यह तृतीय इकाई है। इस इकाई में दायाद्यम् एवं राष्ट्रं भवति सर्वस्वम् नाटक का परिचय एवं वर्ण्य विषय का उल्लेख किया जा रहा है। इस इकाई में डॉ०आशोक कुमार डबराल के दायाद्यम् (नाटक) एवं डॉ० कीर्तिवल्लभ शक्टा के राष्ट्रं भवति सर्वस्वम् (नाटक) के विषय में चर्चा की जा रही है।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप दायाद्यम् एवं राष्ट्रं भवति सर्वस्वम् के विषय में भलीभाँति जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप—

- उत्तराखण्ड में प्रसिद्ध कवि डॉ० आशोक कुमार डबराल से परिचित हो सकेंगे।
- दायाद्यम् नाटक के वर्ण्य विषय से परिचित हो सकेंगे।
- उत्तराखण्ड में प्रसिद्ध कवि डॉ० कीर्तिवल्लभ शक्टा से परिचित हो सकेंगे।
- राष्ट्रं भवति सर्वस्वम् के वर्ण्य विषय से परिचित हो सकेंगे।

3.3 दायाद्यम का परिचय

डॉ० अशोक कुमार डबराल का जीवन परिचय—

डॉ० आशोक कुमार डबराल का जन्म 14 अप्रैल सन् 1943 को वेशाखी के दिन ग्राम तिमली, पट्टी-उबरालस्यूँ जिला-पौडी गढ़वाल, उत्तराखण्ड में हुआ। तिमली ग्राम, संस्कृत भाषा के अध्ययन-अध्यापन आदि के कारण गढ़वाल की छोटी काशी कहलता था। आपके प्रपितामह पण्डित दामोदर जी एक समाज सेवी, संस्कृत प्रेमी और सिद्ध तान्त्रिक थे। आपने अपने जीवन काल में स्वयं अपने ही धन से एक सुन्दर शिव मन्दिर, सुन्दर भवनों वाला एक संस्कृत-विद्यालय निर्माण किया। पितामह सिद्धकवि सदानन्द जी ने अनेक महाकाव्यों एवं खण्डकाव्यों का प्रणयन किया था जिनमें नरनारायणीम् और रासविलास उपलब्ध हैं। आपके पितामह ने आपके जन्मकाल में आपकी जिह्वा मर सरस्वती का बीजमन्त्र लिखा था। इस प्रकार वे कवि के दीक्षा-गुरु मी थे। पिता आचार्य विद्यादत्त जी संस्कृत के मूर्धन्य विद्वान, दार्शनिक कवि और अध्यापक थे। पिता से पढ़ने के कारण, पिता विद्यागुरु भी थे। आपकी माता सत्यभामा देवी सरल, उदार एवं संस्कृत के प्रति अति आदर वाली थीं। घर पर गुरुकुल होने से संस्कृत के हजारों श्लोक, कथाएं, वार्ताएं आपको सुन-सुन कर ही याद हो गई थीं।

डॉ० अशोक कुमार डबराल का जन्म एवं शिक्षा—

प्राथमिक शिक्षा बेसिक प्राइमरी स्कूल देवीखेत एवं श्री आदर्श सस्कृत पाठशाला तिमली में सम्पन्न हुई। पूर्व माध्यमिक शिक्षा भी आपने अपने घर ही श्री तिमली आ०सं० पाठशाला, पौड़ी गढ़वाल से प्राप्त की। यहाँ पर आपके विद्या गुरु थे- आचार्य ललिता प्रसाद डबराल एवं आचार्य विद्यादत्त।

सन् 1962 में साहित्य एवं अंग्रेजी से शास्त्री परीक्षा उत्तीर्ण की। सन् 1966 में हिन्दी सा० स० प्रयाग की विशारद परीक्षा, सन् 1967 में साहित्य रत्न परीक्षा भी उत्तीर्ण की। सन् 1968 में आगरा वि० वि० से एम० ए० (संस्कृत) सन् 1974 में मेरठ वि० वि० से एम० ए० (हिन्दी) और सन् 1999 में चौधरी चरण सिंह वि० वि०, मेरठ से पी-एच० डी० की डिग्री प्राप्त की।

सन् 1962 से सन् 2001 तक परिश्रम पूर्वक अध्ययन-अध्यापन के कार्य में संलग्न रहकन सेवानिवृति से 4 वर्ष पूर्व ही स्वेच्छा से सेवानिवृत्त होकर पूर्णरूप से साहित्य साधना में लग गए आपकी भार्या गृहस्थ के समस्त दायित्वों के साथ आपके पास बैठकर लेखन, शोधन, अनुवादना प्रकाशन आदि के कार्य में सदा संलग्न रहती हैं।

डॉ० अशोक कुमार डबराल का कृतित्व— प्रतिभा सम्पन्न अशोक डबराल की निम्नलिखित संस्कृत रचनाएँ हैं-

प्रकाशित साहित्य—

1. देवतात्मा हिमालयः (महाकाव्य) 2004 में प्रकाशित
2. द्युक्षते हा धरित्री (महाकाव्य) 2005 में प्रकाशित
3. चन्द्रसिंह, गर्जितम् (लघु नाटक) संस्कृत मंजरी में प्रकाशित
4. दायाद्यम (संस्कृत नाटक संग्रह) संस्कृत मंजरी में प्रकाशित
5. दुधुक्षा (संस्कृत कथा-पीयूष-दोहानी, हास्य कथा संग्रह
6. प्रतिज्ञानम् (संस्कृत नाटक) संस्कृत मंजरी में प्रकाशित
7. पठितानि मया शोधपत्राणि (संस्कृत शोध-पत्र-संग्रह
8. घिगाशा सर्वदोष भूः (हास्य कथाएँ)

अप्रकाशित साहित्य—

1. अथ-इति (हिन्दी महाकाव्य)
2. मधुमास (हिन्दी कविता संग्रह)
3. लिप्टस (हिन्दी कहानी संग्रह)
4. एक हमाम में सब नंगे (हिन्दी ललित निबन्ध)
5. चलते-चलते (आत्मकथा)
6. मुहिम (हिन्दी उपन्यास)

अनुवाद कार्य—

सूक्ति-सुरा-सुभाषित रत्नभाण्डागारम्, के चार सौ श्लोक हिन्दी गद्यानुवाद अप्रकाशित

शोध-बोध—

नारायण स्वामी जीवन और साहित्य-शोध प्रबन्ध (हिन्दी) अप्रकाशित

हिन्दी कवि दुष्यन्त कुमार त्यागी, जयदेव ललित, गुलाब खण्डेलवाल, के व्यक्तित्व एवं कृतित्त्व पर शोधार्थियों का पूर्ण मार्ग-दर्शन कल्चरल हिस्ट्री इन भागवत पुराण पर शोध मार्ग-दर्शन। इनके अतिरिक्त आपने कई सम्मेलन, संगोष्ठी एवं कार्यशालाओं में सहभागिता की है।

इनके महाकाव्य 'धुक्षते हा धरित्री' के लिए इन्हें उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान द्वारा 'कालिदास' पुरस्कार प्राप्त हो चुका है। संस्कृत के अलावा हिन्दी भाषा में भी इनकी अनेक रचनाएँ प्राप्त होती हैं। जिनमें महाकाव्य, कहानी संग्रह, कविता संग्रह, निबन्ध संग्रह, उपन्यास, आत्मकथा आदि सम्मिलित हैं। ये संस्कृत एवं हिन्दी दोनों ही भाषाओं के जानकार तथा श्रेष्ठ कवि एवं साहित्यकार हैं। संस्कृत साहित्य तथा हिन्दी साहित्य को इनकी देन अमूल्य है।

दायाद्यम का परिचय—

डॉ० अशोक कुमार डबराल द्वारा रचित दायाद्यम् (नाटक संकलन) के नाटकों की कथावस्तु इस प्रकार है-

1. प्रविज्ञानम् यह दाद्यायम् नाटक संकलन का प्रथम नाटक है। इसके अन्तर्गत पाँच अंक है। छान्दोग्य उपनिषद् से कथावस्तु लेकर, कल्पना के रंगों से चित्रित करके नाटककार ने प्रतिज्ञानम् की रचना की है। प्रतिज्ञानम् में पितृहीन, गोत्रहीन, दासीपुत्र सत्यकाम को एक पहचान मिली है। उसको समाज में तनकर खड़ा होने का साहस मिला है। गोत्र और जाति उसके जीवन में कहीं भी आड़े नहीं आते। गोत्रहीन पिछड़ी जाति का यह शिक्षार्थी बालक न समाज के रहम के, महरम से और न ही संवेदना की बैसाखी ही पकड़ के चलता है बल्कि माता के उपदेश से अदम्य साहस और सत्य का सहारा लेकर कहता है- मैं सत्यकाम जाबाल हूँ। गुरुकुल उसे गले लगा लेता है।

2. प्रत्युज्जीवनम् यह नाटक सात अंकों में विभाजित है। उस नाटक में लेखक ने भगवान परशुराम की माता और जमदग्नि की पत्नी रेणुका की जीवन की विडम्बना के माध्यम से अभिसप्त स्त्री के जीवन को मुखरित किया है। विष्णु भगवान के छठे अवतार परशुराम को मातृयध के पाप से बचते हुए धर्मस्थापनार्थय के लिए पंच पर खड़ा करते हैं। इस प्रकार लेखक ने जहाँ परशुराम के मातृवध से उत्पन्न गले न उतरने वाले अपने मानसिक द्वन्द्वों को कम किया वहाँ पिता की आज्ञा से माता का वध कर देने वाले पुरुष प्रधान समाज के कार्य को नकारते हुए नारी के मन पर मरहम का लेप भी लगाया है।

3.दायाद्यम् यह नाटक पाँच अंकों में विभाजित है। प्रस्तुत नाटक में नाटककार ने वृद्ध पिता नभग की सेवा में रत ब्रह्मचारी पुत्र नाभाग के भाग्य का उदय दिखाया है. जो पैतृक सम्पदा के बंटवारे में प्राप्त पिता को स्वीकार करके, भारतीय संस्कृति को बल प्रदान तो करता ही है सुशिक्षित होने का प्रमाण भी प्रस्तुत करता है।

4. अर्थ गौरवम् यह नाटक आठ अंकों में विभाजित है। इस नाटक में लेखक ने आचार्य मम्मट के द्वारा निर्दिष्ट समस्त काव्य प्रयोजनम् को महाकवि भारवि के काव्यजीवनम् में एकत्र चरितार्थ होते दिखाया है। यशः प्राप्ति, अर्थ की प्राप्ति, व्यवहार ज्ञान, अशिव से रक्षा आदि की सिद्धि, अर्थगौरवम में दिखाई गई है।

5. दायमानम् वीररस से पूरित इस नाटक सेनानी चन्द्रसिंह गढ़वाली के शौर्यगाथा को प्रस्तुत करते हुए धरोहर के रूप में प्राप्त इस मातृभूमि रूपी पैतृक सम्पदा के सम्मान एवं रक्षा हेतु सदैव सावधान रहने को कहा है।

6. शालग्राम गवेषणम् यह नाटक पाँच अंकों में विभाजित है। इस नाटक में आज के बुजर्गों की दीनदशा और लुप्त होती हुई कुटुम्ब संस्कृति को कथ्य बनाकर दाताराम, कमला आदि की दुर्दशा की कहानी प्रस्तुत की गई है। तुलसी, नारायण जैसे आदर्श स्त्रिों से जहाँ कर्त्तव्य बाँध का मुखरित किया गया है, वहीं बांटों और राज करो की नीति पर चलने वाले दुराग्रही, दुर्ब्यसनी अभिमानी बुर्जगों को भी आड़े हाथ लिया गया है जिनके कारण बच्चों के गृहस्थ चौराह हो जाते हैं।

7. दायमजूषा यह नाटक सात अंकों में विभाजित है। इस नाटक की कथावस्तु के प्रेरणाप्रद विषय पाश्चात्य जीवन दर्शन के प्रभाव से दूषित और अमानित भारतीय संस्कृति, टूटती पारिवारिक व्यवस्था, सामाजिक मूल्यों का गहराता संकट और पैत्रिक सम्पदा के लिए पुत्रों द्वारा बाहर किए हुए माता-पिता। अधिक से क्या। समाज में चारों ओर दिखाई देने वाला उन्माद ही प्रबल प्रमाण है।

अतः डॉ०अशोक कुमार डबराल जो दायाद्यम् नाटक संकलन में उपर्युक्त नाटकों का समावेश किया है जिससे आधुनिक नाट्य परम्परा को एक नवीन दिशा के साथ नाट्य परम्परा भी अग्रसर हुयी है। इस प्रकार आधुनिक नाटककारों ने पौराणिक कथाओं के साथ-साथ सामाजिक समस्याओं को भी अपने नाटकों का प्रिय बनाया है। इन चयनित नाटकों में नाट्य तत्त्वों का समावेश है। यह नाटक प्राचीन नाट्य नियमों को ध्यान में रखते हुए नवीन शैली में प्रस्तुत किए गए हैं।

3.4 राष्ट्रं भवति सर्वस्वम् का परिचय

डॉ० कीर्तिवल्लभ शक्टा का जीवन परिचय—

आधुनिक नाटककारों में डॉ० कीर्तिवल्लभ शक्टा का नाम प्रसिद्धि को प्राप्त है। इनका जन्म सम्वत् 2010 माघ शुक्ल एकादशी दिनांक 02 जून 1954 में चम्पावत जिला उत्तराखण्ड

में हुआ। इनके पिता का नाम स्व० श्री बदरीदत्त शक्टा और इनकी माता का नाम स्व० कलावती था। शक्टा जी साहित्याचार्य विद्यावारिधि और पी-एच० डी० की उपाधि से विभूषित है। डॉ० शक्टा का नाम काव्य, नाटक एवं कथा साहित्य लेखन विधा के कवि हैं। विशेष सम्मान राष्ट्रीय अध्यापक पुरस्कार (भारत सरकार) पं० गुमानी पन्त पुरस्कार (गुमानी शोध समिति, पिथौरागढ़), डॉ० लक्ष्मीनारायण पाण्डेय स्मृति पुरस्कार, शब्द प्रवाह (उज्जैन), श्री बहादुर सिंह बनौला कुमाऊँ साहित्य सेवी सम्मान (अल्मोडा) आदि। शक्टा जी ने राजकीय इण्टर कॉलेज चम्पावत से सस्कृत प्रवक्ता पद से सेवानिवृत है। वर्तमान समय में लेखन कार्य में संलग्न हैं।

डॉ० कीर्तिवल्लभ शक्टा का कृतित्व—

प्रकाशित संस्कृत ग्रन्थ—

नाटक- राष्ट्रं भवति सर्वस्वम्, रंगवीथि (नाट्यत्रयम)

कथा- सप्तकथाचक्रम (कथा)

कविता- स्तोत्र-स्तावकम

प्रकाशनाधीन संस्कृत ग्रन्थ—

कथा- कैरवी कथा

अभिप्युता वाग्य एवं समसामयिकी काव्य

कुमचिल दर्शन (पंचसर्गात्मक खण्डकाव्यम्)

हिन्दी में प्रकाशित ग्रन्थ—

ससर्ग सुमन (खण्डकाव्य)

काशी (खण्डकाव्य)

हिन्दी प्रकाशनाधीन ग्रन्थ-

शिवशक्तिमहिमा (जगदम्बाचरित) महाकाव्य

संसर्ग विपाक (खण्डकाव्य)

प्रकाशित कुमाऊँनी ग्रन्थ—

न्यायमूर्ति गौरल महाकाव्य

शक्टा जी ने हिन्दी, सस्कृत एवं कुमाऊँनी भाषा में लेखन कार्य किया है। इन कृतियों के अतिरिक्त संस्कृत, हिन्दी एवं कुमाऊँनी भाषाओं की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित है। अखिल भारतीय एवं अन्तराष्ट्रीय संस्कृत शोध सम्मेलन में सहभागिता व शोध पत्र प्रस्तुत किए हैं। दिल्ली संस्कृत अकादमी से नाटक व लघुकथाएं प्रकाशित हैं।

राष्ट्रं भवति सर्वस्वम् का परिचय—

राष्ट्रं भवति सर्वस्वम् नाटक की कथावस्तु को सात अंकों में विभाजित किया गया है। अतः कथावस्तु इस प्रकार है—

प्रथम अंक—

इस अंक में नायक-नायिका का प्रथम मिलन का वर्णन है। नाटक का नायक प्रमोद अपने मित्र में राजीव के साथ अवकाश के दिन नगर घूमने जाते हैं। नगर में स्थित शिव मन्दिर में दर्शन के लिए जाते हैं। यहाँ पर नाटक की नायिका सुधा से मिलन होता है। प्रमोद और सुधा एक-दूसरे देखकर पहचान लेते है, कि वह बचपन के मित्र है, और एक दूसरे प्रति आकर्षित होते हैं। सुधा प्रमोद को घर आने का निमन्त्रण देती है। यहीं पर प्रथम अंक समाप्त होता है। **द्वितीय अंक—**

इस अंक में प्रमोद अपने शिविर में बैठा है. और राजीव उसे वहाँ खोजता हुआ आता है। प्रमोद सुधा के स्मृति में लीन है। राजीव प्रमोद की मनोदशा को जानकर उससे कहता है, कि वह नगर में जाकर सुधा से मिलें। परन्तु अवकाश न होने के कारण नगर में जाना सम्भव नहीं है। तभी कैप्टन के द्वारा प्रमोद और राजीव को सरकारी काम से नगर में जाने के लिए आदेश मिलता है। यहीं पर द्वितीय अंक समाप्त होता है।

तृतीय अंक—

इस अंक में प्रमोद और राजीय नगर में प्रवेश करते हैं। राजीय सुधा से मिलने की योजना बनाता है। नगर में ही एक उद्यान है यहाँ वे दोनों जाते है और यहीं पर आकसमात सुधा और उनकी सखियों की वार्ता को गुप्त रूप से सुनते हैं। सखियाँ सुधा से प्रमोद के विषय में ही वार्ता करती हुयी सुनायी देती है। तभी एक सखी कहती है कि यदि प्रमोद यहाँ होते तो कितना अच्छा होता। (अपि सखिः कियत्सौभाग्यं भवेदस्माकं यदि साम्प्रतं प्रमोदस्य इहागमनं मवेत्) तभी प्रमोद सभी के सम्मुख प्रकट हो जाता है। सखी और प्रमोद वहाँ से कुछ बहाना कर निकल जाते हैं। सुधा और प्रमोद अकेले रहते जाते है, और एक दूसरे को देखते हैं। यहाँ पर तृतीय अंक समाप्त होता है।

चतुर्थ अंक—

इस अंक में सैन्य आधिकारी अपना प्रशिक्षण समाप्त करके अवकाश की तैयारी करते हैं। प्रमोद सरकारी अवकाश के अतिरिक्त दो माह का अवकाश चाहता है। राजीव इसका कारण पूछता है तब प्रमोद सुधा से विवाह करने की बात कहता हैं। राजीव प्रमोद से प्रेम विवाह करने की अपेक्षा पारम्परिक रीति से विवाह करने का सुझाव देता है। अतः प्रमोद अपने माता-पिता से विवाह के विषय बात करके सुधा के परिवार के विषय में बताता है और विवाह के लिए बात करने के लिए सुधा के घर जाने के लिए कहता है। घर पर विवाह की बात चल रही है तमी दूरदर्शन पर समाचार आता है। यह समाचार सुन घर के सदस्य शोकाकुल हो जाते हैं और प्रमोद से सेना में जाने के लिए माना करते हैं परन्तु देश प्रेम सर्वोपरि है इसलिए प्रमोद जाने के लिए तैयार होता है। सुधा भी प्रमोद का सहयोग करती है और नववधु की भाँति तैयार होकर कहती है कि में प्रमोद की वधू बन गयी हूँ और में प्रमोद की प्रतीक्षा करूंगी, यहाँ पर यह अंक समाप्त होता है

पंचम अंक—

इस अंक में युद्ध भूमि का दृश्य चित्रित किया है। सीमा पर दोनों पक्ष की सेना युद्ध करती है। मिन्न-भिन्न प्रकार के अस्त्र-शस्त्र द्वारा किया जा रहा है। अन्त में प्रमोद की सेना विजय प्राप्त करती है परन्तु प्रमोद और प्रताप वापस नहीं आते। उन्हें डूबने का प्रयास करते हैं। वहाँ केवल प्रताप का सिर और कपडे प्राप्त होते हैं। प्रमोद का कोई सुराग नहीं मिलता। इससे यह अनुमान लगाते है कि प्रमोद वीरगति को प्राप्त हो गया है। यह समाचार दूरदर्शन पर प्रसारित कर दिया जाता है। यहाँ पर पंचम अक समाप्त हो जाता है।

षष्ठ अंक—

इस अंक में एक कार्यालय का दृश्य है, जिसमें सुधा कार्य करती है। इस दिन सुधा का स्वास्थ्य ठीक नहीं है, और वह अचानक मूर्धित हो जाती है। सुधा को डॉक्टर के पास ले जाते हैं। यहाँ पर सुधा को होश आता है। सुधा से सब उसके मनोदशा के विषय में पूछते हैं। तब सुधा बताती है कि उसने कल नगर में एक पागल व्यक्ति को बरगद के वृक्ष के नीचे बैठा देखा। मेरा हृदय कहता है कि यह प्रमोद ही है। शीघ्र ही कार्यालय के अधिकारी ने उस पागल व्यक्ति को बुलवाते हैं और उसका चिकित्सा करवाते हैं। चिकित्सक कहता है कि परिस्थिति वश इनके मस्तिष्क में विकार हो गया है। अन्य कोई घटना घटित होने पर इनका मस्तिष्क ठीक हो जाएगा। कुछ समय उपरान्त एक वृक्ष पर लटकी पतंग को बच्चा पकड़ता है और वह बच्चा वृक्ष से गिर जाता है। यह दृश्य देखकर प्रमोद की चेतना लौट आती है। सब स्मृति होने से प्रमोद शीघ्र सेना में जाता है, और उसे वहाँ पर पदोन्नति प्राप्त होती है। यहाँ पर षष्ठ अंक समाप्त हो जाता है।

सप्तम अंक—

इस अंक में प्रमोद कैप्टन का पद प्राप्त होता है, और सुधा के साथ विवाह होता है। इसी अंक में अन्त में प्रमोद और सुधा को एक पुत्र की प्राप्ति होती है। यहाँ पर यह अंक समाप्त होता है।

अभ्यास प्रश्न—

बहुविकल्पीय प्रश्न—

1. डॉ० आशोक कुमार डबराल का जन्म कब हुआ।
   A. 14 अप्रैल सन् 1943
   B. 13 अप्रैल सन् 1943
   C. 14 अप्रैल सन् 1942
   D. 14 अप्रैल सन् 1944
2. डॉ० आशोक कुमार डबराल के प्रपितामह का क्या नाम था।
   A. विष्णुदत्त
   B. दामोदर

C. नीलदेव

D. उक्त में से कोई नही

3. देवतात्मा हिमालयः (महाकाव्य) का प्रकाशन वर्ष क्या है।

A. 2002 में

B. 2003 में

C. 2004 में

D. 2005 में

4. दाद्यायम् नाटक में कितने अंक है।

A. दो अंक

B. तीन अंक

C. चार अंक

D. पाँच अंक

5. डॉ० कीर्तिवल्लभ शक्टा का जन्म कब हुआ।

A. 02 जून 1954

B. 02 जून 1952

C. 02 जून 1955

D. 02 जून 1950

6. डॉ० कीर्तिवल्लभ शक्टा के पिता का क्या नाम था।

A. केदारदत्त

B. बदरीदत्त

C. रामदत्त

D. उक्त में से कोई नही

7. राष्ट्रं भवति सर्वस्वम् नाटक की कथावस्तु को कितने अंको में विभाजित किया गया है।

A. छ: अंकों में

B. वांच अंकों में

C. सात अंकों में

D. दश अंकों में

3.5 सारांश

पारम्परिक अर्थ में नाटक काव्य का एक अंग है। जो रचना श्रवण द्वारा ही नहीं अपितु दृष्टि द्वारा भी दर्शकों के हृदय में रसानुभूति कराती है उसे नाटक या दृश्य-काव्य कहते हैं। नाटक में श्रव्य काव्य से अधिक रमणीयता होती है। श्रव्य काव्य होने के कारण यह लोक चेतना से अपेक्षाकृत अधिक घनिष्ठ रूप से संबद्ध है। नाट्यशास्त्र में लोक चेतना को नाटक के लेखन और

मंचन की मूल प्रेरणा माना गया है। इसी प्रेरणा को आधार मान कर उक्त इकाई में कवि द्वारा इन नाटकों की रचा। इस इकाई में डॉ०आशोक कुमार डबराल के दायाद्यम् (नाटक) एवं डॉ० कीर्तिवल्लभ शक्टा के राष्ट्रं भवति सर्वस्वम् (नाटक) का परिचय एवं वर्ण्य विषय के सन्दर्भ में आप जान चुके हैं।

3.6 पारिभाषिक शब्दावली

शब्द	अर्थ

3.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.A 2.B 3.C 4.D 5.A 6.B 7.C

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ/सहायक सामग्री

1. गढ़वाल की संस्कृत साहित्य को देन, डाँ. प्रेमदत्त चमोली।
2. कूर्मांचल में संस्कृत साहित्य की परम्परा, बसन्तबल्लभ भट्ट।
3. कुमाऊँ का इतिहास, बद्रीदत्त पाण्डे।

3.9 निबन्धात्मकप्रश्न

1. दायाद्यम नाटक का वर्णन कीजिए।
2. राष्ट्रं भवति सर्वस्वम् नाटक का वर्णन कीजिए।
3. डॉ०आशोक कुमार डबराल का परिचय दीजिए।
4. डॉ० कीर्तिवल्लभ शक्टा का परिचय दीजिए।

इकाई.4 संस्कृत पत्र पत्रिकाओं का परिचय एवं महत्त्व

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 प्राचीन संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं का परिचय
4.4 अर्वाचीन संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं का परिचय
    4.4.1 दैनिक संस्कृत पत्र-पत्रिका
    4.4.2 सप्ताहिक संस्कृत पत्र-पत्रिका
    4.4.4 पाक्षिक संस्कृत पत्र-पत्रिका
    4.4.5 मासिक संस्कृत पत्र-पत्रिका
    4.4.5 द्वैमासिक संस्कृत पत्र-पत्रिका
    4.4.6 त्रैमासिक संस्कृत पत्र-पत्रिका
    4.4.7 चातुर्मासिक संस्कृत पत्र-पत्रिका
    4.4.8 षाण्मासिक संस्कृत पत्र-पत्रिका
    4.4.9 वार्षिक संस्कृत पत्र-पत्रिका
    4.4.10 ई-संस्कृत पत्र-पत्रिका
4.5 संस्कृत पत्र पत्रिकाओं का महत्त्व
4.6 सारांश
4.7 पारिभाषिक शब्दावली
4.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
4.9 सन्दर्भ ग्रन्थ/सहायक सामग्री
4.10 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

प्रिय शिक्षार्थियों !

उत्तराखण्ड के प्रमुख संस्कृत साहित्यकार BASL (N) 220 नामक पाठ्यक्रम के खण्ड- तीन 'महाकाव्य एवं अन्य विधाएं' की यह चतुर्थ इकाई है। इस इकाई में संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं के विषय में चर्चा की जा रही है। उक्त संदर्भ में अध्ययन करते हुए सबसे पहले पत्र पत्रिकाओं के बारे में जानना अति आवश्यक है।

पत्र-पत्रिकाएँ मानव समाज की दिशा-निर्देशिका मानी जाती है समाज के भीतर घटती घटनाओं से लेकर परिवेश की समझ उत्पन्न करने का कार्य करती है। पत्र-पत्रिकाओं का मूल उद्देश्य सदैव जनता की जागृति और जनता तक विचारों का सही संप्रेषण करना रहा है। महात्मा गाँधी जी की पक्ति है— 'समाचार पत्र का प्रथम उद्देश्य जनता की इच्छाओं, विचारों को समझना और उन्हें व्यक्त करना है। द्वितीय उद्देश्य जनता को समझना और उन्हें व्यक्त करना है। जनता में वाछनीय भावनाओं की जागृति करना है। तृतीय उद्देश्य सार्वजनिक दोषों को निर्भयतापूर्वक प्रकट करना है'।

पत्र और पत्रिकाओं ने इन उद्देश्यों को अपनाते हुए आरम्भ से ही भारतीयों के हित के लिए विचार को जागृत करने का कार्य किया। संस्कृत भाषा विश्व की प्राचीन एवं समृद्धभाषा है। संस्कृत एक हिंद-आर्य भाषा है, जो हिन्द-यूरोपीय भाषा परिवार की एक शाखा है। आधुनिक भारतीय भाषाएँ जैसे हिन्दी, मराठी, सिन्ध, पंजाबी, नेपाली, आदि इसी से उत्पन्न हुई है इन सभी भाषाओं में यूरोपीय बाजारों की रोमानी भाषा भी शामिल है। बौद्ध धर्म विशेषकर महायान तथा जैनमत के भी कई महत्त्वपूर्ण ग्रंथ संस्कृत में लिखे गये है। संस्कृत भाषा का इतिहास बहुत पुराना है। वर्तमान समय में प्राप्त सबसे प्राचीन संस्कृत ग्रंथ ऋग्वेद है जो कम से कम 2500 ई. पू. की रचना है। इस प्रकार भाषा की दृष्टि से विश्व की सर्वाधिक वैज्ञानिक एवं प्रमाणिक भाषा संस्कृत है। संस्कृत भाषा की उपादेयता सार्वकालिक और सार्वभौमिक है। पूर्वकाल से ही भारतवर्ष में सम्प्रेषण के लिए वार्ता, संवाद, उद्घोषणाज्ञापन, सन्धिहस्ताक्षर, अनेक पात्रों का सहयोग लिया जाता रहा है। उनमें संदेशवाहक, दूत, चर, भाट आदि कई नाम और भी हैं। रामचरितमानस में तुलीदास ने अयोध्याकाण्ड में राजा दशरथ की मृत्यु के उपरान्त का वृत्तान्त राजा भरत को बतलाने हेतु धावक को भेजने का वर्णन प्राप्त होता है।

दूत बोलाइ बहुरि अस भाषण।
धावहु वेगि भरता पहिं जाहू।
नृप सुधि कतहुँ कहहु जनि काहू।
सुनि मुनि आयसु धावन धाए।
चले वेग बर बाजि लजाए।

इसी प्रकार मेघदूत खण्डकाव्य में भी महाकवि कालिदास ने यक्ष के विरह सन्देश का सम्प्रेषण वर्णन मेघों के माध्यम से किया है। वही अभिज्ञानशाकुन्तलम् में कालिदास ने शकुन्तला के मनोगत भावना को प्रकट करने के लिए दुष्यन्त को पत्र लिखा है। पूर्वकाल से ही भारतवर्ष में वार्ता सम्प्रेषण के लिए अनेक पात्रों का सहयोग लिया जाता रहा है। आप सभी जानते हैं की संस्कृत भाषा में कथासाहित्य अति प्राचीन है। वैदिक कथा को प्राचीन उपन्यास भी कहा जा सकता है। संस्कृत साहित्य में पंचतंत्र कथा संग्रह का उदाहरण है। अत: वैदिक काल में कथा के माध्यम से भी संवाद किया जाता रहा है।

विश्व के इतिहास का अवलोकन करे तो सर्वप्रथम मैसोपोटामिया के राजा डेरियसेन ने अपनी सूचनाओं का प्रसारण शिलाओं के माध्यम से किया। भारत में भी सम्राट अशोक ने सूचनाओं का प्रसारण शिलालेखों के माध्यम से किया था। इसी प्रकार ताम्रपत्रों,ताडपत्रों, वस्त्रों में लिखकर सूचना का संप्रेषण किया जाता रहा है।

भारत में सर्वप्रथम संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं का विवरण डा० अर्नेस्टहॉस ने दिया, इनके द्वारा दो पत्रिकाओं का परिचय दिया गया। इसके उपरान्त मैक्समूलर ने अपने ग्रन्थों में कई लेख लिखे। एल. डी. बर्नेट ने भी (1886 ई. से 1929) आपने ग्रन्थों में संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं का यथा स्थान वर्णन किया है।

विद्यावाचस्पति अप्याशास्त्रिराशिवडेकर ने मासिक पत्रिका का सम्पादन किया जीसका नाम संस्कृत चद्रिका था। 1907 में विन्टर नित्स ने संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं के लेखन में अमूल्य योगदान दिया। 1931 में संस्कृत रत्नाकर (मासिक पत्रिका) में 'वासन्तिक: प्रमद' इस नाम से लेख लिखकर अनेक प्राचीन संस्कृत पात्र-पत्रिकाओं का नामोल्लेख किया है। इसके उपरान्त गुरु प्रसाद शास्त्री, दीनानाथशास्त्री सारस्वत, एम० कृष्णमाचारियार, आर.के. दाण्डेकर, चिन्ताहरण, चक्रवर्ति, वी. राघवन, शंकरलालशर्मा, गणेशरामशर्मा, रामगोपाल मिश्र, श्रीधर भास्करवर्णेकर, राधावल्लभत्रिपाठी ने अपने ग्रन्थों तथा आलेखों में संस्कृत पत्र-पत्रिकओं का विषद् रूप से वर्णन किया है।

वर्तमान युग में संस्कृत भाषा में सम्प्रेषण की असीम सम्भावनाएँ है। आज इलेक्ट्रॉनिक मीडिया एवं प्रिंट मीडिया बहुत तेज़ी से इस पर कार्य कर रहा है, उसमें संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं का भी एक विशिष्ट स्थान है। संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं के विषय में सुधी पाठकों को यह जानना चाहिए कि भारत के प्रायः सभी राज्यों और कुछ विदेशों में भी संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन हो रहा है। बस आवश्यकता है एक साथ मिलकर हृदय से इसे स्वीकारने और सक्रियता के साथ इसे जन-जन तक पहुँचाने की। इस आन्दोलन में संस्कृत दैनिक पत्र, साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक, द्वैमासिक, त्रैमासिक, चातुर्मासिक, षाण्मासिक, वार्षिक पत्र-पत्रिकाओं का संस्कृत वाड्मय की श्रीवृद्धि में योगदान रहा है।

अत: इस इकाई के अध्ययन के बाद आप संस्कृत पत्र पत्रिकाओं का परिचय एवं महत्त्व के विषय में भलीभाँति जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप—

- प्राचीन संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं के सन्दर्भ में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- अर्वाचीन संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं के विषय में जान सकेंगे।
- दैनिक संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं के विषय में जानकारी पाप्त कर सकेंगे।
- पाक्षिक संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं के बारे में जानेंगे।
- मासिक संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं के बारे में जानेंगे।
- द्वैमासिक, त्रैमासिक, षाण्मासिक संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन विषयक जानकारी को जानेंगे।
- वार्षिक संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं के विषय में विस्तार से ज्ञान प्राप्त करेंगे।

4.3 प्राचीन संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं का परिचय

साहित्य समाज का दर्पण होता है। किसी राष्ट्र का वास्तविक इतिहास उसका साहित्य है। समाज की ऐतिहासिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक स्थिति जानने के लिए उसका लिखित साहित्य महत्वपूर्ण होता है। ऐसे लिखित अप्रकाशित साहित्य को प्रकाश में लाना अपेक्षित है। भारत के प्रायः सभी प्रदेशों का संस्कृत साहित्य की अभिवृद्धि में अविस्मरणीय योगदान रहा है। प्रस्तुत अध्याय को संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं का परिचय एवं महत्त्व नाम से विभक्त किया है। जिसमें प्राचीन एवं अर्वाचीन संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं का परिचय दिया गया है। पुरातन काल से 19 वीं शताब्दी तक तथा 1901 ई० से अर्वाचीन पत्र-पत्रिकाओं का दिया गया है। प्राचीन संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं का विवेचन निम्नवत है—

समाचार चंद्रिका (1822 ई०)—

भवानी चरण बन्घोपाध्याय द्वारा सम्पादित तथा कोलकाता से प्रकाशित एक साप्ताहिक पत्रिका थी। यह पत्रिका 1822 में पहली बार प्रकाशित हुई थीं। समाचार चंद्रिका के सम्पादक भवानी चरण बन्धोपाध्याय पहले सम्वादकौमुदी के सम्पादक थे वहां जब उनका राजा राममोहन के विचारों में मतभेद हो गया तो उन्होंने समाचार चन्द्रिका पत्रिका आरम्भ की। समाचार चन्द्रिका पत्रिका के सम्पादक भवानीचरण प्रभावशाली व्यक्ति तथा गद्य साहित्य के प्रणेताओं में से एक थे इसका परिणाम यह हुआ कि धीरे-धीरे पत्रिका की प्रसार संख्या में वृदि हुई और 1829 ई. के अप्रैल माह से यह सप्ताह में दो दिन प्रकाशित होना आरम्भ हो गई।

काशीविद्यासुधानिधि (1866 ई०)— 'पण्डिता'

संपूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय के स्थापना वर्ष 1791 में बनारस संस्कृत कालेज के रूप में हुई थी। संस्कृत साहित्य को समर्पित काशी से 'काशीविद्यासुधानिधि' नामक पत्रिका प्रकाशन जून 1866 से शुरू किया गया। इस पत्रिका का अपर नाम 'पण्डिता' भी है। इसके पीछे पूर्व व पश्चिम के आर्य विद्वानों, बनारस और कोलकाता के पंडितों के बीच यूरोप व विश्वविद्यालय के संस्कृतिवादियों के बीच समन्वय स्थापित करना भी था।

इसका प्रकाशन ई०जे० लाजरूस महोदय ने काशी के राजकीय संस्कृत विद्यालय (विश्वविद्यालय का पूर्ववर्ती नाम) से किया। यह पत्रिका देश-विदेश के पुस्तकालयों में भेजी जाती थी। यह पत्रिका मासिक थी, लेकिन साल में एक बार प्रकाशित होती थी। अंग्रेजी व संस्कृत दो भाषाओं में प्रकाशन के कारण इसकी काफी मांग थी। लोग अगले अंक को लेकर इंतजार में रहते थे। 39 वें अंक के बाद अचानक इसका प्रकाशन बंद हो गया। इसका कारण स्पष्ट नहीं है। वर्ष 1920 में महामहोपाध्याय पं. गोपीनाथ कविराज ने सरस्वती भवन पुस्तकालय के नाम पर सरस्वती भवन स्टडीज नामक पत्रिका शुरू की। हालांकि दो अंकों के बाद यह पत्रिका भी विलुप्त हो गई। अप्रैल वर्ष 1942 में मंगलदेव शास्त्री, पं. नारायण खिस्ते, पं. अनंत शास्त्री फडके ने 'काशी विद्या सुधा निधि' को 'सारस्वती सुषमा' के नाम पर एक बार भी पत्रिका का प्रकाशन शुरू कराया। 'सारस्वती सुषमा' के नाम से यह पत्रिका आज भी काफी प्रसिद्ध हैं। वहीं पिछले दस वर्षों से 'सारस्वती सुषमा' का प्रकाशन भी ठप चल रहा है। विश्वविद्यालय ने एक बार फिर इसका प्रकाशन शुरू कराया गया है।

विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में भी प्रथम तीन अंक व पंचम अंक नहीं है। पुस्तकालाध्यक्ष प्रो. राम किशोर त्रिपाठी ने बताया कि वर्ष 1991 मंठ तत्कालीन कुलपति प्रो. विद्या निवास मिश्र ने प्रथम चार अंक को पंडित परिक्रमा के नाम पर पुनर्मुद्रण कराया था। इसकी प्रति लाइब्रेरी में अब भी संरक्षित है। प्रथम अंक में दर्शन में न्याय प्रणाली, ध्वनि का अनंतता मीमांसा की एक हठधर्मिता, वेदांत का सार सहित अन्य लेख व रिपोर्ट प्रकाशित हुए थे।

प्रत्नकम्रनन्दिनी (1867 ई०) — 'पूर्णमासिकी'

श्री हरिश्चन्द्र शास्त्री द्वारा इसका प्रकाशन वाराणसी में (1867 ई०) प्रारम्भ किया गया।

विद्योदय (1869 ई०) —

श्री हृषीकेश भट्टाचार्य ने 1869 ई० में इस मासिक का प्रकाशन प्रथम पंजाब में तदनन्तर कलकत्ता में प्रारम्भ किया। मासिक के असाधारण वैशिष्ट्य के कारण इस पत्रिका को भारत में विशेष प्रसिद्धि प्राप्त हुई। पं० श्री हृषीकेश भट्टाचार्य के अथक प्रयत्न और उनके अदम्य उत्साह तथा त्याग के फलस्वरूप यह मासिक ४५ वर्ष तक अबाध गति से चलता रहा, किन्तु बाद में आर्थिक कठिनाई के कारण इसका प्रकाशन उन्हें बन्द करना पड़ा। पं० हृषीकेश भट्टाचार्य उत्तम श्रेणी के संस्कृत लेखक थे। आपने अनेक साहित्यकारों, महान् पुरुषों के चरित्रों, कथाओं, आख्यायिकाओं तथा अंग्रेजी काव्यों के संस्कृत-अनुवादों को इसमें प्रकाशित कर इसे विशेष

लोकप्रिय बनाया। 'विद्योदय' में समय-समय पर प्रकाशित श्री हृषीकेश जी के वैशिष्ट्यपूर्ण लेखों को पं० पद्मसिंह शर्मा ने प्रबन्धमंजरी नामक पुस्तक में प्रकाशित किया है।

विद्यार्थी (1878 ई०)—

यह मासिक पत्र 1878 ई० में पटना नगर से तत्पश्चात् यह पाक्षिक रूप से (1880 ई०) उदयपुर से पं० दामोदर शास्त्री के संपादकत्व में विद्यार्थी कार्यालय द्वारा प्रकाशित होने लगा।

षड्दर्शनचिन्तनिका, प्रयाग-धर्म-प्रकाश, षड्-धर्मामृतवर्षिणी (1875)—

वर्ष 1875 में षड्दर्शनचिन्तनिका, प्रयाग-धर्म-प्रकाश, षड्-धर्मामृतवर्षिणी उक्त तिन पत्रिकाओं का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ।

कामधेनु (1879 ई०)—

वर्ष 1879 में 'कामधेनु' नामक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ।

काव्यनाटकादर्श (1882 ई०)—

वर्ष 1882 में 'काव्यनाटकादर्श' नामक संस्कृत पत्रिका में संस्कृत काव्य एवं नाटक से सम्बंधित पत्रों का प्रकाशन हुआ।

धर्मोपदेश (1883 ई०)—

वर्ष 1883 में 'धर्मोपदेश' नाम से संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ।

ब्रह्मविद्या (1885 ई०)—

वर्ष 1885 में 'ब्रह्मविद्या' नामक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ।

संस्कृतसञ्जीवनम् (1887 ई०)—

वर्ष 1887 में प० अम्बिकादत्त व्यास जी ने संस्कृत शिक्षण पद्यति के परिष्कार हेतु विहार संस्कृत सज्जीवन समाज की स्थापना की कर संस्कृतसञ्जीवनम् नामक पत्रिका का प्रकाशन किया।

विद्यामार्तण्ड, ग्रन्थमाला, आर्यसिद्धान्त (1888 ई०)—

वर्ष 1888 में विद्यामार्तण्ड, ग्रन्थमाला, आर्यसिद्धान्त उक्त तीन संस्कृत पत्रिकाओं का प्रकाशन इस वर्ष में हुआ।

उषा (1889 ई०)—

वर्ष 1889 में उषा नामक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ।

मानवधर्मप्रकाश (1893 ई०)—

वर्ष 1893 में मानवधर्मप्रकाश संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ।

संस्कृत-चद्रिका (1893 ई०)—

इस मासिक पत्रिका का प्रकाशन (1893 ई०) श्री जयचन्द्रसिद्धान्तभूषण के सम्पदाकत्व में कलकत्ता मैं प्रारम्भ हुआ। पाँच वर्षों के पश्चात् (1898 ई० में) पं० अप्पाशास्त्री राशिवडेकरजी के सम्पादकत्व में इसका प्रकाशन कोल्हापुर से होने लगा। विशेष उल्लेखनीय

यह है कि श्री अप्पाशास्त्री के असाधारण पाण्डित्य एवं उनके संस्कृत भाषा पर प्रभुत्व के कारण इस पत्रिका की लोकप्रियता उत्तरोत्तर बढ़ती गयी। पं० अम्बिकादत्त व्यास प्रणीत प्रसिद्ध उपन्यास शिवराजविजयम् का प्रकाशन इसमें क्रमशः हुआ था।

कवि, प्रयाग-पत्रिका, आर्यावर्त-तत्त्ववारिधि, श्रीवेंड्कटेश्वर (1895 ई०)—

वर्ष 1895 में कवि नामक मासिक संस्कृत पत्रिका तथा प्रयाग-पत्रिका, आर्यावर्त-तत्त्ववारिधि, श्रीवेंड्कटेश्वर नामक संस्कृत पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ।

काव्यकादम्बिनी, संस्कृतग्रन्थमाला, काव्यमाला, काव्यकल्पद्रुम, भारतोपदेशक: (1897 ई०)—

वर्ष 1897 में काव्यकादम्बिनी, संस्कृतग्रन्थमाला, काव्यमाला, काव्यकल्पद्रुम, भारतोपदेशक: नामक संस्कृत पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ।

सहृदया (1896 ई०)—

सहृदया-19 वीं शती के अन्तिम भाग में मद्रास के श्री आर० कृष्णम्माचार्य ने इस मासिक पत्रिका का प्रकाशन प्रारम्भ किया। पौर्वात्य और पाश्चात्य विद्या का समन्वय करना ही इसका एकमात्र उद्देश्य था। इसकी पूर्ति के लिये उन्होंने अनेक प्रयत्न किये। शेक्सपीयर के नाटकों का परिचय 'सहृदय' पत्रिका के द्वारा संस्कृत पण्डितों को कराया गया। 'सुशीला' उपन्यास का क्रमशः प्रकाशन इसी पत्रिका में किया गया। 'पातिव्रत्यम्', 'पाणिग्रहणम्', 'वररुचिः' जैसे उत्कृष्ट निबंधों का प्रकाशन भी इसी पत्रिका में हुआ है। २५ वर्षों के पश्चात् इस मासिक पत्रिका का प्रकाशन नहीं हो सका।

शास्त्रमुक्तावलीं, विद्वत्कला साहित्य रत्नावली (1899 ई०)—

वर्ष 1899 में अनन्ताचार्य जी ने शास्त्रमुक्तावलीं नामक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन किया, इसी वर्ष विद्वत्कला साहित्य रत्नावली संस्कृत नाम से भी संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ।

4.4 अर्वाचीन संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं का परिचय

अर्वाचीन पत्र-पत्रिकाओं में 1901 से वर्तमान तक के संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं का परिचय प्रस्तुत किया गया है। उक्त पत्र-पत्रिकाओं को दैनिक, सप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक, द्वैमासिक, त्रैमासिक, चातुर्मासिक, षाण्मासिक, वार्षिक क्रम से प्रस्तुत किया जा रहा है। उक्त पत्र-पत्रिकाओं का विवेचन निम्नवत है—

4.4.1 दैनिक संस्कृत पत्र-पत्रिका—

जयन्ती (1907 ई०)—

1 जनवरी 1907 को 'जयन्ती' नामक प्रथम संस्कृत दिन पत्र का केरल राज्य के त्रिवेन्द्रम् नगर से प्रकाशन हुआ। इम पत्र का सम्पादन कोमालमारूताचार्य तथा लक्ष्मी नन्द स्वामी ने किया, परन्तु धनाभाव के कारण अल्पक समय में ही इसका प्रकाशन बन्द हो गया।

विजय: (1961 ई०)—

विजय: (संस्कृति) नाम से वार्तापत्र का प्रकाशन होता है। यह स्वातन्त्रपता के बाद का प्रथम संस्कृत दैनिक पत्र है। जिसका प्रकाशन 1961 में होता है। बाद में इसका नाम विजय: से संस्कृति हुआ। इसका सम्पादन पण्डित बालाचार्य खरावेडकर ने किया।

सुधर्मा (1970 ई०)—

सुधर्मा नामक यह अखबार विश्व का एक मात्रा संस्कृत दैनिक समाचार पत्र है। मैसूर के संस्कृत विद्वान वरदराज आयंगर ने 14 जुलाई 1970 में सुधर्मा की शुरुआत की। उनके लिए यह एक मिशन की तरह था। वह चाहते थे कि इसके जरिए संस्कृत का प्रचार प्रसार हो और लोगों में सस्कृत का ज्ञान बढ़े। 1990 में उनकी मृत्यु के बाद यह मिशन उनके बेटे ने चलाया आज सुधर्मा के बीस हजार ग्राहक है जिनमें भारत और विदेश के लोग भी शामिल है।

नवप्रभात् (1991 ई०)—

इस पत्रिका का प्रकाशन ई० 1991 में कानपुर से नवप्रभात् से दैनिक पत्र के रूप में एक प्रकाशित हुआ। संस्कृत साप्ताहिक पत्रिकाओं में गाण्डीवम्, युगगति राजसाकेती का भी विशिष्टि विशिष्ट योगदान रहा है। संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं में हरियाणा राज्य से 1988 में प्रकाशित हितसाधिका पत्रिका का विशिष्ट योगदान है। इस पत्रिका का सम्पादन प्रो० सत्यदेववर्म ने किया था।

4.4.2 सप्ताहिक संस्कृत पत्र-पत्रिका

मञ्जुभाषिणी (1900 ई०)—

काञ्चीपुरम् के प्रतिवादि भयंकरमठ के अधिपति श्री अनन्ताचार्य ने अपने मठ का प्रचार करने के उद्देश्य से इसका प्रकाशन प्रथम मासिक रूप में और कुछ समय पश्चात् अर्थात् 1900 ई० से साप्ताहिक रूप में प्रारम्भ किया। 106 श्री अनन्ताचार्य सभी शास्त्रों के अच्छे पण्डित थे। आपने इस पत्रिका में न्याय, वेदान्त सदृश गंभीर शास्त्रों से सम्बन्धित विविध लेख लिखे। वाल्मिकीय- भावप्रदीषः नाम के अपने प्रबन्ध में वाल्मिकीयरामायण का आध्यात्मिक अर्थ प्रतिपादित किया है। अंग्रेजी कवि गोल्डस्मिथ के हरमिट (Hermit) नामक काव्य का एकान्तवासीयोगी- इस नाम से काव्यात्मक अनुवाद भी उन्होंने किया है। इसके अतिरिक्त पण्डित जगन्नाथ प्रसाद प्रणीत संसारचक्र नामक हिन्दी उपन्यास के संस्कृत रूपान्तर का तथा वासिष्ठचरितम् का इस पत्रिका में क्रमशः प्रकाशन हुआ है। यह प्रथम संस्कृत साप्ताहिक पत्रिका भी है।

विद्वत्कला(1900 ई०)—

इस पत्रिका का प्रकाशन 1900 ई० में काव्य कादम्बिनी सभा द्वारा लश्कर (ग्वालियर) में हुआ था।

वेदगोष्ठी (1900 ई०)—

वर्ष 1900 में वेदगोष्ठी नामक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ।

रसिकरञ्जनी, विद्यार्थिचिन्तामणी (1902 ई०)—

वर्ष 1902 में रसिकरञ्जनी नाम संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ, इसी वर्ष विद्यार्थिचिन्तावमणी नामक सप्ताहिक संस्कृत पत्रिका का भी प्रकाशन प्रारम्भ हुआ।

सुनृतवादिनी (1906 ई०)—

इस पत्रिका का प्रकाशन ई० 1906 में काशी से सुनृतवादिनी नामक साप्ताहिक संस्कृत पत्रिका के रूप में प्रकाशित हुआ। इसका सम्पादन श्री अप्पाशास्त्री राशिवडेकर ने किया। ई० स० 1993 ई० में श्री अप्पाशास्त्री का देहावसान होने पर उक्त पत्रिकाओं का प्रकाशन बन्द हो गया। इसी वर्ष केरल ग्रन्थमाला, सद्धर्मप्रकटननपत्रिका, वीरशैवप्रभाकर, बालमनोरमा, विद्यावती, वीररशैवमतप्रकाश, विश्वश्रुत, विद्वन्मशनोरञ्जनी नामक संस्कृत पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ।

संस्कृतम् (1930 ई०)—

इस साप्ताहिक पत्रिका का प्रकाशन ई० 1930 से पं० कालिकाप्रसाद त्रिपाठी तथा पं० कालीप्रसाद शास्त्री-इन दोनों के सम्पादकत्व में अयोध्या से हो रहा है। अस्यामेव शताब्द्यां संस्कृतं राष्ट्रभाषा भवतु - यह वाक्य इस साप्ताहिक का प्रमुख आदर्श वाक्य है। 'संस्कृत वाक्य-रचना में आवश्यकतानुसार अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग निःसंकोच करना चाहिए' - ऐसा इस पत्र का प्रमुख विचार होने से, इसमें प्रकाशित होनेवाले लेखों में प्रायः उक्त विचार की झलक दिखाई देती है। संस्कृत साकेतः - इस वृत्तपत्र का प्रकाशन भी अयोध्या से ही होता था।

सुरभारती (1947 ई०)—

वर्ष 1947 में मुम्बई से 'सुरभारती' नामक संस्कृत साप्ताहिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ, यह पत्रिका आजादी के बाद की प्रथम संस्कृत साप्ताहिक पत्रिका है। इसका सम्पादन प० गोविन्दवल्लभ शास्त्री जी ने किया।

संस्कृतभवितव्यम् (1951 ई०)—

वर्ष 1951 में नागपुर से संस्कृतभाषाप्रचारसभा द्वारा हे संस्कृतभवितव्यम् नामक संस्कृमत साप्ताहिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ। इस पत्रिका सम्पादन श्री धरभास्किर वर्णेकर नक किया।

वैजयन्ती (1953 ई०)—

वर्ष 1953 में वैजयन्ती नामक संस्कृत साप्ताहित पत्रिका का प्रकाशन हुआ, इसी वर्ष पण्डित पत्रिका का भी प्रकाशन हुआ।

भाषा (1955 ई०)—

वर्ष 1955 में गुण्टूर नामक स्थान से 'भाषा' नामक संस्कृत साप्ताहिक पत्रिका का प्रारम्भ हुआ, इस पत्रिका का प्रकाशन श्री काशी कृष्णाचार्य तथा कृष्णसोमयाजी ने किया।

गाण्डीवम् (1964 ई०)—

वर्ष 1964 में काशी से गाण्डीवम् नामक संस्कृत साप्ताहिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ, इस पत्रिका का सम्पादन रामबालक शास्त्री में किया, उनके अवसान के उपरान्त इस पत्रिका का सम्पादन श्री गोपाल शास्त्री जी ने किया। सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय से यह पत्रिका तब से अनवरत रूप में प्रकाशित हो रही है। कालान्तर में इस पात्रिका का सम्पादन हरिप्रसाद अधिकारी कर रहे हैं।

4.4.4 पाक्षिक संस्कृत पत्र-पत्रिका

उच्छृङ्खलम् (1940 ई०)—

वर्ष 1940 में वाराणसी से उच्छृङ्खलम् नामक पाक्षिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ। इसी वर्ष पटना से संस्कृत-संजीवनम् नामक पत्रिका का भी प्रकाशन किया गया।

भारतवाणी—

आजादी के वाद सर्वप्रथम पाक्षिक संस्कृत पत्रिका के रूप 'भारतवाणी का नाम प्रकाश में आता है। डा० गजानन बालकृष्णन पलसुले ने इस पत्रिका का सम्पादन किया।

संस्कृतवाणी (1958 ई०)—

वर्ष 1958 में संस्कृतवाणी नामक संस्कृत पाक्षिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ। इस पत्रिका का सम्पादन एन०सी० जगन्नाथ ने किया।

शारदा (1959 ई०)—

वर्ष 1959 में पुणे से शारदा नामक पत्रिका का प्रकाशन हुआ। इस पत्रिका सम्पादन श्री वसन्त अन्नत गाडगिल महोदय ने किया। इस पत्रिका में लघु बालकों के लिए बहुत से लेख लिखे गये। इस पत्रिका का प्रकाशन " ई-शारदा नाम से अन्तर्जाल के माध्यम भी (electronic Medium) किया जाता है।

गोरखपुरचर्चा (1990 ई०)—

वर्ष 1990 में गोरखपुर से गोरखपुरचर्चा नामक पाक्षिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ, इसका सम्पादन गीता श्रीवास्तव नेकिया।

दिशाभारती (1994 ई०)—

वर्ष 1994 में दिल्ली से श्री जीतरामभट्ट महोदय के सम्पादकत्व में दिशाभारती नामक पाक्षिक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ। इसी वर्ष वाराणसी से कृतान्त, मुजफ्फरपुर से मित्रम्, कोलकत्ता से भक्तिसुधा, दिल्ली से संस्कृतमंजूषा, श्रीरंगमनगर से संस्कृतश्री, त्रिश्शूर से कामधेनु, महाराष्ट्र से गुञ्जारव, उत्तरप्रदेश से संस्कृत साकेतम् आदि पत्रिकाओं का भी प्रकाशन संस्कृत की श्रीवृद्धि में अनन्य है।

वाक् (2001 ई०)—

देहरादून से प्रकाशित पाक्षिक पत्र वाक् उल्लेखनीय है। वाक् उत्तराखण्ड का प्रथम संस्कृत समाचार पत्र है। इस पाक्षिक संस्कृत समाचार पत्र के संस्थापक एवं सम्पादक डॉ० बुद्धदेव शर्मा थे। इसका आरम्भ 2001 ई के अक्टूबर महीने में हुआ था। तब से यह नियमित रुप से निर्धारित अवधि में प्रकाशित हो रही है। इसमें स्थानीय एवं राष्ट्रिय समाचारों का संग्रह रहता है। इसका आकार छोटा होने से इसमें स्थायी महत्त्व के विषयों का प्रकाशन सम्भव नहीं हो पाता। संस्कृत जगत के समाचारों को इसमें प्रमुखता दी जाती है।

संस्कृत-संवाद (2011 ई०)—

संस्कृत-संवाद पाक्षिक समाचार पत्र है, यह देहली से प्रकाशित होता है। इस समाचार पत्र का विमोचन 01 जुलाई 2011को राष्ट्रिय संस्कृत सस्थान के तत्कालीन कुलपति प्रो. राधाबल्लभ त्रिपाठी महोदय एचं भारतीय संस्कृत पत्रकार संघ के अध्यक्ष पद्मश्रीविभूषित. डॉ. रमाकान्त शुक्ल महोदय ने किया।

4.4.5 मासिक संस्कृत पत्र-पत्रिका

सुक्तिसुधा, वैष्णकवसन्दर्य (1903 ई०)—

वर्ष 1903 में काशी से भवानीप्रसादशर्मा द्वारा प्रकाशित सुक्तिसुधा नामक मासिक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ। इसी वर्ष वैष्ण सन्दर्भ नामक पत्रिका का भी प्रारम्भ हुआ।

मित्रगोष्ठी (1904 ई०)—

वर्ष 1904 में रामावतारशर्मा एवं विधुशेखर भट्टाचार्य के सयुक्त सम्पादनत्वम में मित्रगोष्ठी नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ।

संस्कृतरत्नाकर (1904 ई०)—

इस पत्रिका का प्रकाशन ई० 1904 में श्री भट्टमथुरा-नाथ शास्त्री, श्री पुरुषोत्तम शर्मा, श्री गिरिधर शर्मा आदि के संपादकत्व में जयपुर से प्रारम्भ हुआ। इस पत्रिका ने समय-समय पर अपने विशेषांकों में वेद, दर्शन, आयुर्वेद आदि विषयों पर गवेषणात्मक लेखों को प्रकाशित कर संस्कृत साहित्य की अपूर्व सेवा की है। इस पत्रिका के प्रथम सम्पादक श्री मथुरानाथ शास्त्री थे। इसका प्रकाशन आज भी हो रहा है।

मिथिलामोद, विशिष्टाद्वेतिनि, विद्वद्गोष्ठी (1905 ई०)—

वर्ष 1905 में मिथिलामोद, विशिष्टाद्वेतिनि, विद्वद्गोष्ठी नमक संस्कृत पत्रिका का प्रारम्भ हुआ।

शारदा (1913 ई०)—

इस पत्रिका का प्रकाशन ई० 1913 में चन्द्रशेखरशास्त्री ने प्रयाग से शारदा नामक संस्कृत मासिक पत्रिका का प्रारम्भ किया। इसी वर्ष चित्रवाणी, कवित्वम्, आयुर्वेदपत्रिका, मञ्जरी, प्रचीनवैष्णवसुधा, धर्मचक्रम् अमृवाणी, संस्कृवतमौमुदी, सुरभारती नामक पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ।

संस्कृतभारती (1918 ई०) —

इस पत्रिका का प्रकाशन ई० 1918 में वाराणसी के पं० कालीप्रसन्न भट्टाचार्य, पं० लक्ष्मणशास्त्री द्रविड, श्रीरमेशचन्द्र विद्याभूषण, श्री उमाचरण वन्द्योपाध्याय, श्री कुमुदिनीकान्त वन्द्योपाध्याय और डॉ० सतीशचन्द्र विद्याभूषणादि के संम्पादकत्व में प्रारम्भ हुआ था। रवीन्द्रनाथ टैगोर की गीताञ्जली का संस्कृत अनुवाद सर्वप्रथम प्रस्तुत मासिक पत्रिका में प्रकाशित हुआ था। अनेक गद्य और पद्य प्रबन्धों का भी प्रकाशन इसमें होता रहता था। इसके अतिरिक्त अन्य पत्रिकाएँ जैसे- सुप्रभातम्, अच्युतम्, अमरभारती और सूर्योदय (भारतीय धर्ममण्डल का मुखपत्र) भी वाराणसी में प्रकाशित होती रहीं, किन्तु गच्छताकालेन अज्ञात कारणवश उनका प्रकाशन बन्द हो गया। अमरभारती का प्रकाशन केवल चार वर्षों तक होता रहा, किन्तु अल्पावधि में ही उसने पर्याप्त लोकप्रियता अर्जित की। सूर्योदय पत्र अवश्य ही 30-35 वर्षों तक नियमित रूप से प्रकाशित होता रहा है।

बहुश्रुतम् (1914 ई०)—

वर्ष 1914 में बहुश्रुतम् नामक संस्कृत पत्रिका का प्रारम्भ किया।

गीर्वाणभारती (1915 ई०)—

वर्ष 1915 में गीर्वाणभारती नामक संस्कृत पत्रिका का प्रारम्भ किया।

संस्कृत-साहित्य-परिषद (1918 ई०)—

वर्ष 1918 में कोलकता से संस्कृत-साहित्य-परिषद नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ। इसी वर्ष हरिद्वार से भारतोदय भी प्रकाशन हुआ।

संस्कृत-साकेत (1920 ई०)—

वर्ष 1920 में अयोध्या में अखिलभारतीयविद्वत्परिषद की संस्थापना हुई, परिषद द्वारा संस्कृत-साकेत नामक मासिक पत्रिका का आरम्भ किया जो बाद में महात्माय गांधी के अहिंसात्मक आन्दोलन की केन्द्र बिन्दु रही। इसी वर्ष सरस्वरती-भवन-ग्रन्थमाला भी प्रकाशन हुआ।

गीर्वाण, शारदा, समस्याणकुसुमाक, सूर्योदय (1924 ई०)—

वर्ष 1924 में मद्रास से गीर्वाण, मैसूर श्रृंगेरीमठ से शारदा, काशी के गोपालमन्दिर से समस्यानकुसुमाकर, वाराणसी से सूर्योदय, का प्रकाशन हुआ।

श्रीमन्महाराजसंस्कृतपाठशाला (1925 ई०)—

वर्ष 1925 में मैसूर से श्रीमन्महाराजसंस्कृतपाठशाला नामक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन किया गया। जिसमें प्रमुखत: आधुनिक रचनाओं का प्रकाशन हुआ।

उद्यानम्, सुरभारती, संस्कृत-पद्म-गोष्ठीत (1925 ई०)—

वर्ष 1925 में तिरूपति से उद्यानम् नामक मासिक पत्रिका का सम्पादन डी.टी. ताताचार्य ने किया। इसी वर्ष काशी से सुरभारती, संस्कृत मासिक पत्रिका, कोलकत्ता से संस्कृत-पद्म-गोष्ठी-। त्रैमासिक संस्कृतत पत्रिका का प्रकाशन हुआ।

ग्रन्थमाला (1927 ई०)—

वर्ष 1927 में वडोरदा से ग्रन्थमाला नामक संस्कृत मासिक पत्रिका का प्रारम्भ हुआ।

ब्राह्मण-महासम्मेलन (1927)—

वर्ष 1927 में काशी से ब्राह्मण-महासम्मेलन नामक संस्कृत मासिक पत्रिका का प्रारम्भ हुआ।

अमर भारती (1929 ई०)—

वर्ष 1929 में अमृतसर से अमर भारती का सम्पादन सीताराम शास्त्री ने किया।

पीयूष (1931 ई०)—

वर्ष 1931 में गुजरात से श्री पीयूष नामक संस्कृत मासिक पत्रिक का प्रकाशन हुआ। जिसका सम्पादन हीरालालशास्त्रीन पञ्चोलि एवं हरीश शंकर शास्त्री ने किया, इसी वर्ष श्रीनगर से नित्यानन्द शास्त्री के सम्पादकत्व में श्रीः नामक सस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ।

संस्कृत-पद्यवाणी (1934 ई०)—

वर्ष 1934 में केलकाता से संस्कृत-पद्यवाणी नामक संस्कृत मासिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ। इसी वर्ष हैदरावाद से कौमुदी, वंगाला से संस्कृत साहित्य, लाहौर से उषा नामक संस्कृ त पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ।

संस्कृत मासिकी, मञ्जूषा (1935 ई०)—

वर्ष 1935 में बेलगाम से संस्कृत मासिकी, कोलकाता हे मञ्जूषा नामक संस्कृञत पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ।

दिवाक, मीमांसाप्रकाश, सरस्वतीमहल, कालिन्दी (1936 ई०)—

वर्ष 1936 में हरिद्वार से दिवाकर, पुणे से मीमांसाप्रकाश, तञ्जोर से सरस्वतीमहल, आगरा से कालिन्दी नामक संस्कृत पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ।

कामकोटीपीठ (1948 ई०)—

वर्ष 1948 में कांची कामकोटीपीठ से ब्रह्मविद्या नामक मासिक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ, यह पत्रिक स्वरतन्त्रपता के बाद पहली संस्कृत मासिक पत्रिका है, इस पत्रिका का सम्पादन पाण्डित राज एस. सुब्रह्मण्यमशास्त्री ने किया। इसी वर्ष वाराणसी से वेदवाणी नामक तथा मुम्बई से 'बालसंस्कृतम्" नामक संस्कृत मासिक पत्रिका का भी प्रकाशन हुआ।

गुरुकुल पत्रिका (1948 ई०) —

इस पत्रिका का प्रकाशन गुरुकुल काँगडी विश्वविद्यालय हरिद्वार से 1948 ई० से हो रहा है। प्रकाशन के समय यह पत्रिका हिन्दी भाषा में प्रकाशित होती थी। सन् 1960 से यह पत्रिका

संस्कृत में प्रकाशित होने लगी। गुरूकुल पत्रिका गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय की मासिक पत्रिका है।

संस्कृतप्रचारकम् (1950 ई०)—

वर्ष 1950 में दिल्ली से अखिलभारतीयसंस्कृतप्रचार संस्थात द्वारा संस्कृतप्रचारकम् नामक मासिक पत्रिका का प्रकायान हुआ। इसी वर्ष जयपुर से भारती मासिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ, इस पत्रिका का सम्पादन - बाबासाहेब आप्टेब गिरिराज शास्त्री , श्री कालानाथ शास्त्री ने किया। इस पात्रिका का प्रकाशन वर्ष 2010 तक अनवरत रूप में हुआ। इसी वर्ष कांची से वैदिक मनोहरा नामक संस्कृत मासिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ। जीसका सम्पादन श्री अणड्काचार्य ने किया।

भारतीयविद्या (1950 ई०)—

वर्ष 1950 में फतेहगढ़ से भारतीयविद्या नाम से मासिक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ। इसका सम्पादन स्वामी चिन्मदयानन्द मे किया।

संस्कृतप्रतिभा (1951 ई०)—

वर्ष 1951 में वाराणसी से संस्कृतप्रतिभा नामक संस्कृ त मासिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ। इस पत्रिका का सम्पाकदन प. रामगोपालविन्द शुक्ल जी ने किया।

संस्कृतसन्देश(1953 ई०)—

वर्ष 1953 में काठमाण्डु से संस्कृतसन्देश नामक संस्कृत मासिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ।

दिव्यज्योति (1956 ई०)—

वर्ष 1956 में शिमला से दिव्यज्योति नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ, इस पत्रिका का सम्पादन आचार्य केशन ने किया। इसी वर्ष वेलगाँव से विद्या नामक संस्कृत मासिक पत्रिका प्रकाशन हुआ। इस पत्रिका का सम्पादन पण्डिता वरखेडी नरसिंहाचार्य एवं पण्डित शिरोमणि गलगली रामाचार्य ने किया। इसी वर्ष संस्कृत साकेत तथा दिव्य वाणी पत्रिका का भी प्रकाशन हुआ।

प्रणवपारिजातम् (1958 ई०)—

वर्ष 1958 में कोलकाता से प्रणवपारिजातम् नामक पत्रिका का प्रकाशन हुआ। इसका सम्पाइदन श्री रामरञ्जन ने किया। इस पत्रिका में मुख्यरूप से अनुवादात्मक काव्योंत का प्रकाशन हुआ।

अमरवाणी (1959 ई०)—

वर्ष 1959 में वाराणसी से अमरवाणी नामक पत्रिका का प्रकाशन हुआ।

शारदा (1959 ई०)— यह मासिक पत्रिका 1959 ई० से श्री वसन्त अनन्त गाडगिल महोदय के सम्पादकत्व में पुणे से प्रकाशित हो रही है।

गीता (1960 ई०)—

वर्ष 1960 में उडुपी से गीता नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन इसका सम्पादन श्री के. वेंकटेश ने किया। इसी वर्ष बडोदरा से सरस्वती-सौरभम् का प्रकाशन हुआ इस पत्रिका का सम्पादन श्री जयनारायण राम कृष्ण पाठक ने किया। इसी वर्ष गुरुकुलकांडी हरिद्वार से "गुरुकुल पत्रिका का प्रकाशन हुआ। यद्यापि इस पत्रिका का प्रकाशन 1948 से ही हिंदी भाषा में हो रहा था। इस पत्रिका का सम्पादन श्री सत्यव्रतविद्या मार्तण्ड (व्यवस्थापक) एवं धर्मदेव विद्यामार्तण्ड ने किया। इसी वर्ष नेपाल से जयतु संस्कृतम् तथा दिल्ली से साहित्य वाटिका, विहार से देववाणी पत्रिका का भी प्रकाशन हुआ।

गैर्वाणी (1962 ई०)—

वर्ष 1962 आन्ध्रप्रदेश से गैर्वाणी नामक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ-प्रकाशन वर्ष में यह पात्रिका त्रैमासिक थी जो बाद में मासिक संस्कृत पत्रिका के रूप में प्रकाशित हुई।

कल्याणी (1964 ई०)—

वर्ष 1964 में जयपुर से श्री गोविन्द प्रसाद दाधीच के सम्पादकत्व में 'कल्याणी' नामक मासिकपत्रिका का प्रकाशन हुआ।

मधुमती (1970 ई०)— वर्ष 1970 में राजस्थान साहित्य अकादमी से मधुमती नाम से मासिक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ, जीसका सम्पादन श्री गणेशरामशर्मा ने किया। वर्तमान में यह पत्रिका हिन्दी भाषा में प्रकाशित हो रही है। श्रीगणेशरामशर्मा महोदय के प्रयास से ही 1976 में स्वरमंगला नाम से त्रैमासिक पत्रिका की भी प्रकाश किया गया।

सर्वगन्धाय (1976 ई०)—

वर्ष 1976 में सर्वगन्धा मासिक पत्रिका का प्रकाशन किया गया, जिसका सम्पादन श्री वीरभद्र मिश्रः तथा सुश्री अनीता ने किया। इस पत्रिका का प्रकाशन लखनऊ से किया गया।

संस्कृतम् (1978 ई०)—

वर्ष1978 में दिल्ली से प्रभाकररामरत्नशास्त्री के सम्पादकत्व में संस्कृेतम् नाम से मासिक पत्रिका का प्रकाश किया गया।

गीर्वाणसुधा (1979 ई०)—

वर्ष 1979 में मुम्बई से गीर्वाणसुधा नाम से मासिक पत्रिका का प्रकाशन किया गया। जिसका सम्पादन श्री भि०वेलण्क्र ने किया।

श्रीपण्डित (1980 ई०)—

वर्ष 1980 में श्रीपण्डित नाम से संस्कृणत मासिक पात्रिका का प्रकाशन किया गया। जिसका सम्पादन आचार्य मधुसूदन शास्त्री ने किया बाद में श्री चन्द्रोदयमिश्र तथा भालचन्द्र पाण्डेय ने इस पत्रिका का सम्पादन किया।

परिजातम् (1982 ई०)—

कानपुर से वर्ष 1982 में परिजातम् नाम से सस्कृत मासिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ।

चन्द्रपमामा (1983 **ई०**)—

वर्ष 1983 में चेन्नई से चन्द्रामामा नाम से संस्कृत मासिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ। जिसका सम्पादन नागरेडिङ महोदय ने किया।

लोकसुश्री: (1987 ई०)—

वर्ष 1987 में में उड़ीसा से श्री सदानन्ददीक्षित के सम्पादकत्व में लोकसुश्री: नामका मासिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ। इसी वर्ष कोलकता हे सात्यानन्दम नाम से मासिक पत्रिका का भी प्रकाशन हुआ।

अभिनवसंस्कृतम् (1992 ई०)—

वर्ष 1992 में कानपुर से डा०शिवबालाद्विवेदी जी के सम्पादकत्व में अभिनवसंस्कृतम् नाम से मासिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ।

सम्भाषणसन्देश (1994 ई०)—

वर्ष 1994 में बैगलूर से सम्भाषणसन्देश नाम से संस्कृत मासिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ, जिसका सम्पादन श्री विश्वास तथा श्री जनार्दन हेगडे (निर्वाहक सम्पादक) ने किया। इस पत्रिका में संस्कृत विधा के विविध पहलुओं पर लेखों का प्रकाशन होता है।

रावणेश्वरकाननम् (1996 ई०)—

वर्ष 1996 में झारखण्ड से रावणेश्वरकाननम् नाम से संस्कृत मासिक पत्रिका का प्रकाश हुआ।

अमृतभाषा (1998 ई०)—

वर्ष 1998 में उडीसा से अमृतभाषा नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ। इसी वर्ष दिल्ली से आर्षज्योति नाम से संस्कृत मासिक पत्रिका का प्रकाश हुआ।

लोकभाषा (2002 ई०)—

मेरठ से प्रकाशित लोकभाषा में कुछ आलेख संस्कृत के रहते हैं तो कुछ हिन्दी में भी निबद्ध होते हैं। इसका प्रकाशन सन् 2002 ई. में आरम्भ हुआ था। इस मासिक का प्रमुख उद्देश्य लोगों को संस्कृत भाषा का ज्ञान प्रदान करना है। व्याकरण के नियमों तथा सन्धि आदि के शिक्षण इसके द्वारा किये जाते है। प्राचीन ग्रन्थों के कुछ प्रमुख श्लोक एवं उनके अर्थ भी इसमें सम्मिलित किये जाते है।

देवसायुज्यम् (2007 ई०)—

देवसायुज्यम् नामक मासिक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन वडोदरा से सन् 2007 ई. में आरम्भ हुआ। इसमें विविध शास्त्रों से सम्बद्ध आलेखों के अतिरिक्त आधुनिक विषयों के विवेचन परक आलेख रहते है, साथ ही संस्कृत जगत के समाचारों को भी सन्नविष्ट किया जाता है।

आर्ष-ज्योतिः (2010-11 ई०) —

यह मासिक शोधपत्रिका श्रीमद्दयानन्द आर्ष ज्योर्तिमठ गुरुकुल पौन्धा देहरादून से प्रकाशित है। इस पत्रिका के मुख्य सम्पादक आचार्य डॉ० धनंजय व डॉ० रवीन्द्र कुमार कार्यकारी सम्पादक श्री शिवदेव आर्य है। श्रीमद्दयानन्द वेदार्ष महाविद्यालय न्यास के संस्थापक परमपूज्य स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती इस पत्रिका के संरक्षक हैं। यह मासिक शोध-पत्रिका विगत् 13 वर्षों से निरन्तर प्रकाशित हो रही है। पत्रिका का जून मास का अंक विशेषांक निकलता है।

कुम्भ-दर्शनम्(2015-16 ई०) —

कुम्भ दर्शनम् नामक मासिक पत्रिका हरिद्वार से प्रकाशित होती है। यह पत्रिका संस्कृत और हिन्दी दोनों भाषाओं में प्रकाशित की जाती है। इसमें प्राचीन विषयों के साथ-साथ समसामयिक विषयों को भी प्रकाशित किया जाता है। वर्तमान में भगवान दास संस्कृत महाविद्यालय ज्वालापुर हरिद्वार के साहित्य विभागाध्यक्ष डॉ० निरंजन मिश्र इस पत्रिका के प्रधान सम्पादक हैं तथा इस पत्रिका के सहसम्पादक बालकृष्ण शास्त्री हैं। पत्रिका के प्रारम्भ में सम्पादकीय लेख के बाद मासिक समाचार, किसी विशेष विषय से सम्बन्धित विचार एवं चिन्तन, शिक्षा, आयुर्विज्ञान, सामयिक विषय तथा देश-दुनिया की घटनाओं को प्रकाशित करने के साथ ही साहित्यिक विषयों पर विद्वानों के विचारों को प्रस्तुत किया जाता है। इस पत्रिका का प्रकाशन विगत् 7 वर्षों से लगातार हो रहा है।

4.4.5 द्वैमासिक संस्कृत पत्र-पत्रिका

श्रीकाशी पत्रिका (1909 ई०) —

वर्ष 1909 में वाराणसी से श्रीकाशी नाम से संस्कृत द्वैमासिक पत्रिका का प्रकाश हुआ।

भारतमुद्रा (1913 ई०)—

वर्ष 1913 में भारतमुद्रा नाम हो द्वैमासिक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ। इसी प्रकार से कानपुर से वेदान्तसन्देश, मुजफ्फरपुर को संस्कृतदर्शनम् द्वैमासिक संस्कृत पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ।

बहुश्रुतः (1914 ई०) —

वर्ष 1914 में वर्धा से बहुश्रुतः नाम से द्वैमासिक संस्कृत पत्रिका का प्रकाश हुआ।

भारतसुधा (1932 ई०) —

वर्ष 1932 में पुणे से भारतसुधा नाम से संस्कृत द्वैमासिक पत्रिका का प्रकाश हुआ।

मालवमयूर (1946 ई०)—

वर्ष 1946 में मध्य प्रदेश के मन्दसौर से मालवमयूर नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ, जो वाद में द्वैमासिक मासिक पत्रिका के रूप में प्रकाशित हुई। इसका सम्पादन श्रीरूद्रदेवत्रिपाठी ने किया।

प्रियंवदा (1988 ई०)—

1988 में ओडिसा राज्यं के पुरीधाम से प्रियंवदा नाम से द्वैमासिक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ। जिसका सम्पादन श्री हरेकृष्णामहापात्र व श्री गदाधरदास ने किया।

प्रियवाक् (1992 ई०)—

वर्ष1992 में पुरी से प्रियवाक् नाम से द्वैमासिक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ।

4.4.6 त्रैमासिक संस्कृत पत्र-पत्रिका

संस्कृत भारती (1918 ई०) —

संस्कृत भारती (1918 ई०) वाराणसी से प्रकाशित हुई।

महाराज संस्कृत कॉलेज पत्रिका (1925 ई०) —

महाराज संस्कृत कॉलेज पत्रिका मैसूर से (1925 ई०) प्रकाशित हुई।

कालिन्दी (1936 ई०) —

कालिन्दी-आगरा से (1936 ई०) प्रकाशित हुई।

भारतीविद्या, ब्रह्मविद्या, शारदा (1937 ई०)—

वर्ष 1937 में मुम्बई भारतीयविद्याभवन से एस० सुब्रह्मण्यम शास्त्री द्वारा सम्पादित भारतीविद्या नामक त्रैमासिक पत्रिका, कुम्भकोण से एस.सुब्रह्मयम द्वारा सम्पासदित ब्रह्मविद्या नामक पत्रिका, वाराणसी से शारदा नामक संस्कृत पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ।

ज्योतिष्मती (1939 ई०)—

1939 में ज्योतिष्मती नाम से हास्यपरक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ। जिसका सम्पादन महादेवशास्त्री एवं बलदेवीशास्त्री ने किया।

त्रैमासिकी संस्कृत पत्रिका (1940 ई०) —

त्रैमासिकी संस्कृत पत्रिका गोरखपुर से (1940 ई०) प्रकाशित हुई।

सारस्वती सुषमा (1942 ई०) —

यह त्रैमासिक पत्रिका (ई० 1942) डॉ० मंगलदेव शास्त्री, पं० नारायण शास्त्री खिस्ते, पं० कुबेरनाथ शास्त्री शुक्ल आदि विद्वानों के संपादकत्व में वाराणसी से प्रकाशित होती रही है। इसमें लोक-प्रसिद्ध विद्वानों के सारगर्भित व गवेषणापूर्ण लेख प्रकाशित होने से इस पत्रिका ने विशेष प्रसिद्धि प्राप्त की है।

भारती (1950 ई०) —

इस पत्रिका का प्रकाशन श्री भट्ट मथुरानाथ शास्त्री के सम्पादकत्व में जयपुर से (1950 ई०) प्रारम्भ हुआ। इसके अतिरिक्त अन्य अनेक पत्रिकाओं का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ, जैसे- काशी के धर्मसंघ की प्रतिभा, बेंगलोर का अमृतोदयः, पटना के संस्कृत संजीवन समाज का मित्रम्, काशी के विद्वत्मण्डल का मुखपत्र सुप्रभातम्, काशी की वल्लरी, अखिल भारतीय पंडित परिषद् की पण्डित पत्रिका, कलकता की पद्मवाणी और संस्कृत साहित्य परिषद्-पत्रिका, प्रयाग के आर्यसमाज का आर्यसिद्धान्तः, मुंबई की सुरभारती, सिन्ध हैदराबाद की कौमुदी, त्रिवेन्द्रम् के

महाराज संस्कृत महाविद्यालय की श्रीचित्रम्, बिहार की संस्कृत अकादमी से प्रकाशित होने वाली पत्रिका संस्कृतसंजीवनम्, मुंबई के वैद्यरामस्वरूप का बाल- नम्, बेंगलोर के रामकृष्ण भट्ट द्वारा संचालित अमृतवाणी, चिदम्बरम् की ब्रह्मविद्या आदि नियतकालिक पत्रिकाएँ उल्लेखनीय हैं। इनके अतिरिक भी- आचार्य वासुदेव द्विवेदी (काशी) द्वारा संपादित सार्वभौम प्रचारमा हैं। उक्त पत्रिकाओं के अतिरिक्त प्रादेशिक भाषा के वृत्तपत्रों में भी संस्कृति पुस्तक माला), शिमला की दिव्यज्योतिः नेपाल का जयतु संस्कृतम से सम्बन्धित लेख निरंतर प्रकाशित होते रहते हैं जिनमें मालवमयूरः मन्दसौर संस्कृत पत्रिका भी है।

श्रीरविवर्म-संस्कृत-ग्रन्थावली (1953 ई०)—

वर्ष 1953 में श्रीरविवर्म-संस्कृत-ग्रन्थावली नाम से त्रैमासिक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ। इस पत्रिका का सम्पादन सी. के. रामन् ने किया।

संस्कृतप्रभा (1960 ई०)—

वर्ष 1960 में मेरठ से संस्कृतप्रभा नाम त्रैमासिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ। इसका सम्पादन आचार्य द्विजेन्द्रनाथ शास्त्री ने किया। इसी वर्ष पाटलश्री नाम की त्रैमासिक पत्रिका का भी प्रकाशन हुआ। जीवका सम्पादन अनन्तशयन ने किया।

सागरिका (1962 ई०)—

वर्ष 1962 में मध्यप्रदेश के डॉ. हरिसिंह गौर केन्द्रीय विश्वविद्यालय, सागर से सागरिका नाम की त्रैमासिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ। इस पत्रिका के आदि सस्था पक श्रीरामजी उपाध्याय थे। वर्तमान में इसके संस्थापक आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी हैं।

संस्कृतसम्मेलनम् (1964 ई०)—

वर्ष 1964 में बिहार में संस्कृतसम्मेलनम् नाम से त्रैमासिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ। इसी वर्ष प्रयाग से संस्कृत साहित्य परिषद द्वारा 'संगमनी' मुम्बई से संविद् त्रैमासिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ। इसी वर्ष जबलपुर से हितकारिणी, अहमदावाद से ऋतम्भरा, गुजरात से अमृतलता, आगरा से संस्कृत स्रोतस्विनी, भोपाल से मालविका, कोलकात्ता से सनातन धर्मशास्त्रक, दरभंगा से कामेश्वरसिंहसंस्कृतविद्यालय, जयपुर से संस्कृत सुधा, उदयपुर (राजस्थान साहित्य अकादमी) से मधुमिता आदि संस्कृात पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ ।

स्वरमंगला (1967 ई०)— वर्ष 1967 में उदयपुर से स्वरमंगला नाम से त्रैमासिक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ। इस पत्रिका का सम्पादन प०गणेशराशर्मा ने किया। यह पत्रिका पूर्व में षाण्मासिक पत्रिका के रूप में प्रकाशित होती थी।

परमार्थसुधा (1976 ई०)—

वर्ष1976 में वाराणसी से परमार्थसुधा नाम से त्रैमासिक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ। जिसका सम्पादन श्री सत्यनारायण शर्मा, श्रीवासुदेव शर्मा एवं श्री विद्याधर द्विवेदी ने (सहसम्पादक) किया।

अजस्रा (1977 ई०)—

वर्ष1977 में लखनऊ से अखिल भारतीय संस्कृत परिषद द्वारा अजस्रा नाम से त्रैमासिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ। इसका सम्पारदन अशोक कुमार कालिया ने किया।

अर्वाचीनसंस्कृतम् (1979 ई०)—

वर्ष 1979 में नवदेहली से डा०रमाकान्ता शुक्ल महोदय के सम्पादकत्व में देववाणिपरिषद द्वारा अर्वाचीनसंस्कृतम् नाम से त्रैमासिक संस्कृसत पत्रिका का प्रकाशन किया गया। इस पत्रिका में संस्कृत के निबन्ध, लघुकथा, नाटक आदि का प्रकाश हुआ।

संस्कृतसञ्जीवनम् (1982 ई०)—

वर्ष 1982 में बिहार पटना से मिथिलेश कुमार मिश्र के सम्पादकत्व में संस्कृतसञ्जीवनम् नाम से त्रैमासिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ।

व्रजगन्धा (1985 ई०)—

वर्ष 1985 में मथुरा से व्रजगन्धा नाम से त्रैमासिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ। जिसका सम्पादन डा०वासुदेव कृष्ण चतुर्वेदि ने किया। इसी वर्ष पुडुचेरी से लोकसंस्कृतम् नाम को त्रैमासिक संस्कृत पत्रिका का भी प्रकाशन हुआ।

दुर्वा (1986 ई०)—

वर्ष 1986 में मध्यप्रदेश (भोपाल) से संस्कृत अकादमी से डा०भास्कराचार्य त्रिपाठी तथा डा०राधावल्लभ त्रिपाठी के सम्पादकत्वर में दुर्वानाम से त्रैमासिक संस्कृसत पत्रिका का प्रकाशन हुआ। वर्तमान में यह पत्रिका कालिदास संस्कृत अकादमी से प्रकाशित हो रही है।

विश्वभाषा (1987 ई०)—

वर्ष 1987 में वाराणसी से विश्वभाषा नाम से संस्कृत त्रैमासिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ। जिसका सम्पादन पण्डित गुलाम दस्तगीर-अब्बास-अलीविराजदास ने किया।

अनादिवाक् (1988 ई०)—

वर्ष 1988 में आचार्य रामदयाल के सम्पादकत्व में नवदेहली से 'अनादिवाक् नाम से त्रैमासिक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ।

संस्कृतमञ्जरी (1995 ई०)— वर्ष 1995 में दिल्ली संस्कृत अकादमी से श्री कृष्णासेमवाल महोदय के सम्पादकत्व में संस्कृतमञ्जरी नाम से मासिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ, जिसके विविध कथा, संस्कृत जगता की वार्ता आदि का प्रकाशन होता रहा है।

अमृतवाणी (1996 ई०)—

वर्ष 1996 में ओडिशा से अमृतवाणी त्रैमासिक संस्कृकत पत्रिका का प्रकाशन हुआ। जिसका सम्पादन श्री रमशचन्द्र शाह तथा डा. कुमार चन्द्रन ने किया। इसी प्रकार राउरकेला से उत्कलोदय, लक्षनऊ से प्रभातम्, पुरी से दिग्दर्शिनी, इलाहाबाद मनीषासूत्रम्, दरभंगा से

विश्वमनीषा, दिल्ली से श्रेय:, मुम्बई से संवित आदि त्रैमासिक संस्कृत पत्रिकाओं का प्रकाशन होता रहा है।

आन्वीक्षिकी (2003 ई०) —

यह पत्रिका उत्तराखण्ड संस्कृत अकादमी हरिद्वार से प्रकाशित त्रैमासिक शोध-पत्रिका है। इस पत्रिका में सभी शोध-पत्र संस्कृत भाषा में प्रकाशित होते हैं। इस पत्रिका में प्रकाशित सभी शोध-पत्रों का मूल्यांकन एक समिति के द्वारा किया जाता है। समिति के द्वारा चयनित शोध-पत्रों को ही पत्रिका में प्रकाशित किया जाता है। अकादमी की इस पत्रिका में आधुनिक संस्कृत साहित्य तथा संस्कृत के प्रचार-प्रसार से सम्बन्धित शोध-पत्रों को ही प्राथमिकता दी जाती है। इस शोध पत्रिका का प्रकाशन वर्ष 2003 से उत्तराखण्ड संस्कृत अकादमी द्वारा प्रारम्भ किया गया। यह प्रतिष्ठित शोध पत्रिका है।

शिक्षा-सुधा (2005 ई०)—

सन् 2005 ई. में पुरी से शिक्षासुधा-सम्पादन समिति के सौजन्य से शिक्षा-सुधा नामक त्रैमासिक पत्रिका का प्रकाशन आरम्भ हुआ। इसमें विविध संस्कारों के साथ आधुनिक विषय मानवाधिकार, योग्य अध्यापकों का निर्माण, शास्त्र ज्ञान से परिचय आदि विषयों पर आधारित विद्वानों के आलेख इसमें प्रकाशित होते है।

संस्कृतवार्ता (2008 ई०)—

वर्ष 2008 में नवदेहली में राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान से संस्कृतवार्ता का प्रकाशन हुआ। इस पत्रिका का सम्पादन डा० रमाकान्त पाण्डेकय तथा डा०प्रफुल्ल गडपाल के समपादत्व में हुआ।

संस्कृत-गौरवम्-पत्रिका (2012 ई०)

यह पत्रिका हरिद्वार से प्रकाशित होती है। इस पत्रिका के सम्पादक आचार्य पं० शुभम शर्मा है। यह संस्कृत-हिन्दी त्रैमासिक पत्रिका है। इसमें राष्ट्रवादी एवं आध्यात्मिक आलेख प्रकाशित होते हैं। यह पत्रिका 2012 में प्रकाशित हुई यह पत्रिका राष्ट्रवाद, आध्यात्मिकता तथा संस्कृत भाषा के प्रचार-प्रसार में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे रही है।

4.4.7 चातुर्मासिक संस्कृत पात्रिका

चित्रा (1930 ई०)—

वर्ष 1930 में श्री चित्रा नाम से चतुर्मासिक संस्कृत पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ।

सारस्वतम् (1997 ई०)—

वर्ष 1997 में श्री चन्द्रदीप शुक्ल के समादकत्व में पटना से सारस्वतम् नाम से चतुर्मासिक संस्कृरत पत्रिका का प्रकाशन हुआ।

4.4.8 षाण्मासिक संस्कृत पत्र-पत्रिका

गुरुकुल शोध भारती—

गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार, उत्तराखण्ड से प्रकाशित षाण्मासिक शोध पत्रिका है। इसके सम्पादक प्रो० ज्ञान प्रकाश शास्त्री है, जो वर्तमान में श्रद्धानन्द वैदिक शोध सस्थान, गुरूकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार के अध्यक्ष हैं। यह प्रमुख रूप से वेद, वैदिक, एवं लौकिक साहित्य, धर्म, दर्शन, संस्कृति, योग, आयुर्वेद, तथा अन्य प्राच्यविधाओं से सम्बन्धित शोधपरक आलेखों को प्रकाशित करने के लिए कृतसंकल्प है यह प्राच्यविधओं में निहित ज्ञान विज्ञान एवं साहित्यिक मौलिक अनुसंधनों को प्रोत्साहित करने के लिए प्रतिबंद है अनुसन्धन के क्षेत्रों में हिन्दी, संस्कृत एवं अंग्रेजी भाषाओं में प्रकाशित होने वाली स्तरीय शोध पत्रिका है।

संस्कृतप्रतिभा (1959 ई०)—

वर्ष 1959 के नवदेहली से संस्कृतप्रतिभा नाम से से षाण्मासिक संस्कृात पत्रिका का प्रकाशन हुआ। इस पत्रिका का सम्पादन डी०वी राधवन् ने किया।

मागधम् (1967 ई०)—

वर्ष 1967 में आगरा के हरप्रसाददास जैन महाविद्यालय संस्कृत प्राकृत विभाग से तथा विहार राज्य के तत्वावधान में मागधम् नाम की षाण्मासिन संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ।

अध्ययनमाला (1972 ई०)—

वर्ष 1972 में श्रीलालबहादुर संस्कृत विश्वविद्यालय नई दिल्ली से अध्ययनमाला नाम से षाण्मासिक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ।

संस्कृतविमर्श: (1973 ई०)—

वर्ष 1973 में राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान के नव देहली से संस्कृतविमर्श: नाम से षाण्मासिक संस्कृतत पत्रिका का प्रकाशन हुआ।

भास्वती (1976 ई०)—

वर्ष 1976 में काशी विद्यापीठ से श्री अमरनाथपाण्डेय के सम्पादकत्व में 'भास्वती' नाम की षाण्मासिक संस्कृसत पत्रिका का प्रकाशन हुआ।

संस्कृातवीणा (1986 ई०)— वर्ष 1986 में डा०चित्तणरंजनदयाल कौशल के सम्पादकत्व में संस्कृतवीणा नाम की षाण्मासिक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ।

परिशीलनम् (1990 ई०)—

वर्ष 1990 मे लखनऊ से श्री बलदेवउपाध्याय के सम्पादकत्वे में उत्तरप्रदेश संस्कृत संस्थान द्वारा परिशीलनम् नाम से षाण्मासिक संस्कृसत पत्रिका का प्रकाशन हुआ।

आरण्यकम् (1992 ई०)—

वर्ष 1992 में आरण्यकम् नाम से षाण्मासिक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ। जिसका सम्पादन श्रीगोपबन्धु मिश्र ने किया।

प्रख्या (1992 ई०)—

वर्ष 1992 में सागर विश्वविद्यालय से प्रख्या नाम से षाण्मासिक संस्कृंत पत्रिका का प्रकाशन हुआ। जिसका सम्पाकदन डा०राधावल्लभ त्रिपाठी ने किया।

शोधप्रभा (1994)—

वर्ष 1994 में श्रीलालबहादुर संस्कृत विश्वविद्यालय नई दिल्ली से शोधप्रभा नाम से षाण्मासिक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ।

छन्दस्वती (1997)—

वर्ष 1997 में कर्नाटक से छन्दस्वती नाम की षाण्मासिक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ।

दृक् (1999)—

वर्ष 1999 में इलाहबाद से दृक् नाम से से षाण्मासिक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ।

कथासरित् (2005 ई०)—

कथासरित् वर्ष 2005 में कथासरित् नाम से षाण्मासिक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ।

शोध-प्रज्ञा (2013 ई०) —

यह अर्द्धवार्षिक शोध-पत्रिका उत्तराखण्ड संस्कृत विश्वविद्यालय हरिद्वार से दिसम्बर 2013 में प्रकाशित हुई शोध-प्रज्ञा पत्रिका में प्रकाशित सभी शोध-पत्रों का मूल्यांकन एक समिति के द्वारा किया जाता है। इस पत्रिका के प्रथम अंक के प्रधान संपादक उत्तराखण्ड संस्कृत विश्वविद्यालय हरिद्वार के तात्कालीन कुलपति प्रो० महावीर अग्रवाल थे। यह पत्रिका हिन्दी एंव संस्कृत दोनों भाषाओं में प्रकाशित होती है। यह पत्रिका विश्वविद्यालय के कुलपति के सम्पादन में प्रकाशित होती है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की शोध-पत्रिकाओं की सूची में इस पत्रिका को भी स्थान दिया गया है। दिसम्बर 2013 से दिसम्बर 2019 तक शोध-प्रज्ञा पत्रिका के 11 अंक प्रकाशित हो चुके हैं।

जयराम सन्देश (2012-13 ई०) — यह पत्रिका श्री जयराम आश्रम भीमगोडा, हरिद्वार से प्रकाशित होती है। यह पत्रिका विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा मूल्यांकित शोध-पत्रिका है। यह धर्म, दर्शन, अध्यात्म एवं सास्कृतिक संदर्भ पर आधारित पत्रिका है। इसके सम्पादक डॉ० शिवशंकर मिश्र हैं। इस पत्रिका के संरक्षक परम पूज्य ब्रह्मस्वरूप ब्रह्मचारी है। जयराम सन्देश पत्रिका का प्रथम अंक जून 2012 में 'संस्कार विशेषाङ्ङ्क' के रूप में प्रकाशित हुआ।

जम्बूद्वीप (2022 ई०)—

जम्बूद्वीप (ई-जर्नल) संस्कृत और इंडिक स्टडीज को कवर करने वाली अंतरराष्ट्रीय मानकों की एक अर्ध-वार्षिक, पत्रिका है। इस पत्रिका हमारी संस्कृति में निहित भारत की संस्कृत,

पाली और प्राकृत परंपराओं के गहन विश्लेषण और अंतरराष्ट्रीय इंडिक अध्ययनों के साथ उनकी बातचीत के लिए समर्पित है। इस पत्रिका में हिंदी, संस्कृत और अंग्रेजी भाषा में प्रकाशन हो रहा है। इस पत्रिका का प्रकाशन वर्ष 2022 में संस्कृत विभाग, स्कूल ऑफ ह्यूमैनिटीज, इग्नू द्वारा प्रकाशित किया गया। इस जर्नल का उद्देश्य शिक्षकों, शिक्षक प्रशिक्षकों, अनुसंधान विद्वानों और नीति निर्माताओं के लिए एक अकादमिक मंच प्रदान करना है। शिक्षाविदों को नए विचार प्रस्तुत करके और समकालीन इंडिक विचारों का आलोचनात्मक मूल्यांकन करके इंडिक अध्ययन और संबद्ध विषयों के क्षेत्र में अपने मूल और महत्वपूर्ण विश्लेषण में योगदान देने के लिए प्रोत्साहित किया जा रहा है।

इसी तरह कुछ और भी पत्रिकायें इक्कीसवीं शताब्दीं में प्रकाश में आ रही है, जिनमें विविध विषयों से सम्बद्ध आलेख रहा करते हैं। इनमें कुछ सम-सामयिक महत्त्व के हैं तो कुछ स्थायी महत्त्व से सम्बद्ध होते हैं।

4.4.9 वार्षिक संस्कृत पत्र-पत्रिका

अमृतवाणी (1941 ई०)—

वर्ष 1941 में बैंगलूर से अमृतवाणी नामक वार्षिकी पत्रिका का प्रकाशन हुआ। जिसका सम्पादन एस.एम. रामकृष्णभट्ट ने किया।

सरस्वती-सुमनः (1942 ई०)—

वर्ष 1942 में वाराणसी संस्कृत विश्वविद्यालय से सरस्वती-सुमनः नामक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ।

अमरभारती (1944 ई०)—

वर्ष 1944 में काशी से पण्डित कालिप्रसादशास्त्री के सम्पादकत्व में अमरभारती नामक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ।

तरङ्गिणी (1958 ई०)—

वर्ष 1958 में तरङ्गिणी नाम से वार्षिक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन उस्मानिया वि०वि० हैदराबाद से हुआ। इसका सम्पादाक डा० आयेन्द्रशर्म थे। इसी वर्ष डा०वी०राधवन् महोदय के सम्पादकत्व में संस्कृततरङ्ग नाम से वार्षिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ।

ज्ञानवर्धिनी (1959 ई०)—

वर्ष 1959 लखनऊ वि०वि० से डा० सत्यव्रत सिंह के सम्पादकत्व में ज्ञानवर्धिनी नामक वार्षिक संस्कृत पत्रिका का हुआ। इसी वर्ष काशी हिन्दु वि०वि० तथा संस्कृात विद्यालयों के द्वारा सुरभारती का प्रकाशन किया जो हस्त लिखित रूप में वर्ष में एक वार प्रकाशन में आने लगी।

मेधा (1962 ई०)—

वर्ष 1962 में रायपुर से मेधा नाम की पत्रिका का प्रकाशन हुआ। इसी वर्ष सुरभारती का भी प्रकाशन हुआ।

ज्योतिषांक (1970 ई०)—

वर्ष 1970 में ज्योतिषांक वार्षिक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशक हुआ।

वैजयन्ती (1976 ई०)—

वर्ष 1976 में राजस्थान से वैजयन्ती नाम से वार्षिक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशक हुआ। इसी वर्ष प्रतिदर्शाङ्क का प्रकाशक हुआ। 1977 में वेदाङ्कः, 1978 में इतिहासाङ्क, आदि पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ।

ज्ञानाञ्जलि (1983 ई०)—

वर्ष 1983 में जयपुर से ज्ञानाञ्जलि', वर्ष 1988 में हरिद्वार से आदर्श नाम की वार्षिक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ। जो गुरुकुलकांगडी विश्वविद्यालय से प्रकाशित होती है।

जयन्ती (1989 ई०)—

वर्ष 1989 में जयपुर से केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ से जयन्ती नाम से वार्षिक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ।

लोकप्रभा (1990 ई०)—

वर्ष 1990 में पुरी से लोकप्रभा नाम से वार्षिक संस्कृकत पत्रिका का प्रकाशन हुआ।

विमर्श (1993 ई०)—

वर्ष 1993 में लखनऊ वि०वि० से विमर्श नामक वार्षिक संस्कृत पत्रिका का प्रकाशन हुआ। इसी वर्ष दिल्लीन से शिक्षाज्योति एवं युगप्रभा, बैंगलूर से प्रज्ञालोक, मैसूर से चन्द्रिका, मद्रस से संस्कृततरंग, गुजरात से सामञ्जस्यजम् आदि विविध संस्कृत पत्रिकाओं ने संस्कृत के संरक्षण में अपना यथेष्ट योगदान दिया है।

पद्मपराग (2006 ई०)—

सन् 2006-07 ई. में कश्मीर विश्वविद्यालय संस्कृत विभाग द्वारा पद्मपराग नामक वार्षिक शोध पत्रिका का प्रकाशन आरम्भ हुआ। इसमें विविध विद्वानों के आलेख प्रकाशित हो रहे हैं। ये आलेख विविध विषयों से सम्बद्ध एवं शोधपरक होते हैं। शास्त्रीय विषयों पर शोध करने वाले छात्रो के मार्गदर्शन के लिए यह पत्रिका उपयोगी है। इसके प्रथम अंक में रीति सिद्धान्त, शब्द-ब्राह्मण, बौद्ध धर्म, ज्योतिष आदि से सम्बद्ध आलेख प्रकाशित होते हैं। ये आलेख संस्कृत, हिन्दी और अंग्रेजी भाषाओं में रचित है।

संस्कृत-विमर्शः (2009 ई०)—

यह वार्षिक शोध पत्रिका है। राष्ट्रिय-संस्कृत-संस्थान, मानित विश्वविद्यालय, नवदेहली से सन् 2009 ई. में संस्कृत-विमर्शः का प्रकाशन आरम्भ हुआ। इसके प्रकाशन का श्रेय वहाँ के कुलपति प्रो. राधा वल्लभ त्रिपाठी को प्राप्त है। यद्यपि यह पत्रिका पहले भी प्रकाशित होती थी।

बीच में इसका प्रकाशन किन्हीं कारणों से अवरूद्ध हो गया था। नवश्रृंखला में इसका प्रकाशन पुनः आरम्भ हुआ है। इसमें शोध सम्बन्धी आलेख प्रकाशित होते हैं। कुछ नए तथ्यों का भी उद्घाटन इसमें हुआ है, जैसे महाकवि कालिदास को अनेक प्रमाणों के द्वारा महान् वेदान्ती सिद्ध किया गया है। इस पत्रिका में संस्कृत, हिन्दी एवं अंग्रेजी तीनों भाषाओं में आलेख सम्मिलित किये जाते हैं। अब इसको आनलाइन भी पढ़ा जा सकता है।

आदर्श—

आदर्श संस्कृत में प्रकाशित वार्षिक पत्रिका है। यह पत्रिका भगवानदास संस्कृत महाविद्यालय ज्वालापुर हरिद्वार से प्रकाशित होती है। इसमें उत्तराखण्ड के विद्वान साहित्यकारों के आलेखों के साथ-साथ देश के विभिन्न विद्वान साहित्यकारों के आलेखों को भी प्रकाशित किया जाता है। यह पत्रिका संस्कृत में प्रकाशित होती है। इस पत्रिका में संस्कृत साहित्य की प्रत्येक विधा के लेख प्रकाशित होते हैं।

4.4.10 ई-संस्कृत पत्र-पत्रिका

आधुनिक युग में संस्कृत पत्र-पत्रिका का व्यापक स्थर से प्रचार प्रसार हो रहा है। वर्तमान में विभिन्न संसाधनों के माध्य से यह प्रचार हो रहा है। जैसे— रेडियो, टीवी आनॅलाइन, अन्तजील, ई-पत्रपत्रिका, वेवसाइट (जालपुट) प्रेर्टल (Portal) के माध्यम से अन्तर्जाल (Internet) का प्रयोग करने भी सस्कृत पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन/लेखन किया जा रहा है। इसमें दैनिक वार्ता पत्रों का भी विशिष्ट योगदान है। जीसमे सुधर्मा नाम की दैनिक वार्ता पत्र का प्रमुख स्थान है। संस्कृतवार्ता के रूप में आकाशवाणी से प्रकाशित होने वाली वार्तावली का भी संस्कृत पत्र-पत्रिका के संरक्षण में विशेष योगदान है। संस्कृत के सरक्षण हेतु अनेकों संरकृत प्रेमीयों ने दैनिक वार्तापत्रों का भी प्रकाशन किया।

अतः इक्कीसवीं शताब्दी में प्रकाशित होने वाली पत्र-पत्रिकाओं के आलेखों की ये सामान्य प्रवृत्तियाँ हैं, जों लोगों का ध्यान समस्या के समाधान की ओर आकृष्ट करती है। इनके साथ ही संस्कृत के विभिन्न विषयों - व्याकरण, साहित्य, वेद, ज्योतिष आदि से सम्बद्ध आलेख भी इनमें प्रकाशित होते है। जिनमें आधुनिक दृष्टि से विवेचन की प्रवृत्ति रहती है। अतः शाश्वत विषयों के साथ आधुनिक विषयों के आलेखों से युक्त ये पत्रिकायें वर्तमान एवं भावी पीढ़ी को विभिन्न विषयों से परिचित कराने की ओर अग्रसर है। बीसवीं शताब्दीं में जिन पत्र-पत्रिकाओं का आरम्भ हुआ, उनमें बहुसंख्य पत्र-पत्रिकायें इक्कीसवीं शताब्दी में भी प्रकाशित हो रही हैं। समय-समय पर अनेक विश्वविद्यालयों से कुछ पत्रिकाओं का प्रकाशन होता है जिनमें विविध विषयों से सम्बद्ध आलेख रहते है। ये पत्रिकायें नियमित रुप से प्रकाशित नहीं होती है, क्योंकि इनके प्रकाशन का कोई स्थाई स्रोत नहीं होता है।

संस्कृत-विमर्शः (2009 ई०)— राष्ट्रिय-संस्कृत-संस्थान, मानित विश्वविद्यालय, नवदेहली से सन् 2009 ई. में संस्कृत-विमर्शः का प्रकाशन आरम्भ हुआ। इसके प्रकाशन का श्रेय वहाँ के

कुलपति प्रो. राधा वल्लभ त्रिपाठी को प्राप्त है। इस पत्रिका में संस्कृत, हिन्दी एवं अंग्रेजी तीनों भाषाओं में आलेख सम्मिलित किये जाते हैं। अब इसको आनलाइन भी पढ़ा जा सकता है।

संस्कृतसृजना (2015 ई०)—

(त्रौमासिक ई-पत्रिका) यह लखनऊ से प्रकाशित होती है। यह जनवरी 2015 ई. से नियमित रूप से प्रकाशित हो रही है। इसकी सम्पादिका श्रीमती उषा किरण हैं। इस पत्रिका को ऑनलाइन भी पढ़ा जा सकता है। यहाँ संस्कृत, हिन्दी तथा अंग्रेजी तीनो भाषाओं में लिखित लेख प्रकाशित होते है तथापि संस्कृत की प्रमुखता होती है। संस्कृतक्षेत्र लेख का केन्द्र बिन्दु होता है। इसमें कविता, गजल यात्रावृतांत, व्रत, पर्व त्यौहार, दर्शनीय स्थानीय स्थानी आदि पर लेख के अतिरिक्त पहेली, कहानी, हास्य, व्यंग्य, विद्वानों का साक्षात्कार, विद्वानों का जीवन परिचय, सस्कृत पत्रा-पत्रिकाओं का परिचय, संस्कृत की नवीन पुस्तकों की समीक्षा, देश दुनिया से संचालित सस्कृत विद्यालय, महाविद्यालया का संक्षिप्त परिचय रोजगार सम्बन्धी समाचार विभिन्न संस्थाओं में होने वाली संस्कृत सभाषण शिविरों, संगोष्ठियों और कार्यशालाओं की सूचना संस्कृत संवर्द्धन तथा सरक्षण पर लिखित आलेख विभिन्न शोध पत्रिकाओं में प्रकाशित शोध पत्रों के विषय में जानकारी, इन्टरनेट पर उपलब्ध संस्कृत सामग्रीयों के विषय में जानकारी प्रकाशित की जाती है। इसके नवलेखन को प्राथमिकता दी जाती है तथा मौलिक लेखन को ही स्थान दिया जाता है। इसके शास्त्रीय शोधपत्र प्रकाशित नहीं किये जाते। संस्कृत-सर्जना पत्रिका का उद्देश्य संस्कृत भाषा का प्रचार प्रसार करना है।

सुधर्मा— मैसूर से प्रकाशिता होने वाली सुधर्मा नाम से संस्कृत दैनिक पत्रिका पिछले 50 वर्षों से प्रकाशित हो रही है। इस पत्रिका को sudharma.epapertoday.com पर देख सकते हैं।

जाह्नवी— मुम्बई से जाह्नवी ई-संस्कृत पत्रिका प्रकाशित होती है। इस पत्रिका को http//jahnavisanskrite journal.com पर देख सकते हैं।

जम्बूद्वीप— जम्बूद्वीप ई-संस्कृतपत्रिका को http//www.jambudvipa.net पर देख सकते हैं। इसी प्रकार आकाशवाणी से संस्कृतवार्ता को www.newsonair.com पर देख सकते है। इसके अतिरिक्त संस्कृत की अनेकों वैवसाइट्स, ब्लाग हैं। जो संस्कृत में पत्र-पत्रिकाओं का प्रसार-प्रचार,प्रसारण,लेखन कर रहे हैं। जैसे-

http://yaajushi.wordpress.com
http://slabhyankar.wordpress.com
http://satyayugam.blogspot.com
http://nimittam.blogspot.com
http://trivenipittsburgh.blogspot.com
http://vagartham.blogspot.com
http://sanskritforall.wordpress.com

http://sanskrut.worldpress.com
http://srinilaksmi.worldpress.com
http://kaadambari.wordpress.com
http://yaajushi.blogspot.com
http://www.sanskritbhasha.blogspot.com
http://sanskritlinks.blospot.com
http://sanskritam.ning.com
http://samskritwisdom.wordpress.com
http://kalidasa.blogspot.com
http://learnsanskrit.wordpress.com

4.5 संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं का महत्त्व

संस्कृत भाषा भारतीय संस्कृति का आदि स्रोत है। यह भाषा भारतीयों की प्राणभूत भाषा है। इसका स्वरूप विशाल है। संस्कृत भाषा में ही लोक का मनन, चिंतन, गवेषण और अनुभूति समन्वित है। इस भाषा के माध्यम से ही भारतीय संस्कृति अमर है। हिन्दू धर्म के सोलह संस्कार इसी संस्कारित भाषा में ही कराए जाते हैं। यदि संस्कृत भाषा को भारतीय संस्कृति की आत्मा कहें तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। संस्कृत भाषा में सांस्कृतिक विचार, आध्यात्मिक भाव एवं उच्च नैतिक मूल्य सुरक्षित हैं। संस्कृत अत्यन्त ज्ञान-विज्ञान सम्पन्न, मधुर, सरस और मनोहर भाषा है। इसीलिए इसे सम्पूर्ण ज्ञान राशि कहा जाता है। अपनी सम्पन्नता तथा विविधता से यह साहित्य विश्ववाङ्मय में अद्वितीय है। इसी भाषा का पोषण एवं संरक्षण करने हेतु संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं का भी विशाल स्वरूप देखने को मिलता है। वस्तुतः पत्र-पत्रिकाएँ नया ज्ञान प्राप्त करने के लिए कोष का कार्य करती हैं। फलस्वरूप इसे नवनवोन्मेषशालिनी कहा जाता है।

पत्र-पत्रिकाएँ हमारे जीवन की विविधताओं, नित्य नूतनताओं और दैनिक घटनावओं के प्रसंगों को शीघ्र प्रस्तुत करने की अतुल क्षमता रखती है। दैनिक के साथ-साथ अब साप्ताहिक, मासिक, वार्षिक पत्रों का प्रकाशन होने लगा है। इसमें समाचार पत्रों को ज्ञान का सर्वोच्च साधन माना गया है। संस्कृत साहित्य में पत्र-पत्रिकओं के रूप में संदेशवाहक की परम्परा बहुत प्राचीन समय से ही प्राप्त होती है। महर्षि नारद को सबसे बड़ा संदेशवाहक माना जाता है। वे सदैव देवताओं को पृथ्वी लोक तथा असुरों के व्यवहारों की सूचना देते थे। रामायण और महाभारत में समाचार दाताओं के भी नाम मिलते हैं। रामायण में सुमुख गुप्तचर भेष में समाचारों को जानकर राम से बताता है। महाभारत का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि उस समय समाचार दाता लोग नियत रहते थे, जो कि समाचार एक स्थान से दूसरे स्थान लाया और ले जाया करते थे। संजय ने धृतराष्ट्र को कुरुक्षेत्र में होने वाले युद्ध का वर्णन प्रत्यक्ष की तरह किया है। संस्कृत साहित्यकारों भास, कालिदास, भारवि, बाणभट्ट, दण्डी, विशादत्त ने अपनी-अपनी कृतियों में इन

संदेवाहकों, गुप्तचरों को यथोचित स्थान दिया है। 'दण्डी' की रचनाओं से पता चलता है कि उस समय समाज में पत्र लिखने की भी परम्परा चल पड़ी थी। राजकुमारी अवन्तिसुन्दरी एवं राजवाहन के वार्ताप्रसंग में यह प्रदर्शित होता है।' दशकुमारचरितम् में राजहंस भी राजवाहन सहित सभी कुमारों को बुलाने के लिए राजसेवक को पत्र लिखकर दिया था। अत: ये पत्र अपने आप में एक महत्त्वपूर्ण विधा की ओर संकेत भी करते हैं।

विश्व के इतिहास का अवलोकन करे तो सर्वप्रथम मैसोपोटामिया के राजा डेरियसेन ने अपनी सूचनाओं का प्रसारण शिलाओं के माध्यम से किया। ईसापूर्व तीसरी शताब्दी के मध्य भाग में भारत में भी सम्राट अशोक ने सूचनाओं का प्रसारण शिलालेखों, चट्टानों, स्तम्भों और गुफाओं पर लेख उत्कीर्ण कर किया था। इसी प्रकार ताम्रपत्रों, ताडपत्रों, वस्त्रों में लिखकर सूचना का संप्रेषण किया जाता रहा है।

अशोक के पश्चात् उत्कीर्ण पत्रों की धारा प्रवाहित होती गई। गद्य के स्वाभावितक विकास की रूपरेखा में रुद्रदामन (150 ई.) का शिलालेख अद्वितीय है। यह एक साहित्यिक और सूचनात्मक कोटि की पत्रिका का रूप था। इन्हीं शिलालेखों में पत्र-पत्रिकाओं का बीज निहित है। इस प्रकार कहा जा सकता है की पर्वकाल से ही पत्र लेखन की परम्परा साहित्य में विद्यमान थी, परन्तु 18 वीं -19 वीं सदी से यह परम्परा सर्वोच्च विकास के रूप में विकासित हो रही थी।

उन्नीसवीं सदी के लगभग से ही पत्र-पत्रिकाओं का इतिहास आरम्भ होता है, और संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं स्थिरता को प्राप्त कर लेती है। उस समय से लेकर आज तक भारत के प्रायः सभी राज्यों से पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन हो रहा है। इन पत्र-पत्रिकाओं का आद्योपान्त अनुशीलन किये बिना आधुनिक संस्कृत साहित्य के विविध एवं वैचित्यपूर्ण गतिविधि का ज्ञान नहीं हो सकता है।

पाश्चात्य विद्वानों ने भी संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं पर उल्लेनीय कार्य किये हैं। इसके शैशवावस्था का ज्ञान हमें 'काशीविद्यासुधानिधि' पत्रिका से होता है। इस संस्कृत मासिक पत्रिका का प्रकाशन बनारस में 1866 ई. में प्रारम्भ हुआ। प्राप्त सूचनानुसार 'काशीविद्यासुधानिधि' संस्कृत की प्रथम एवं ज्येष्ठ पत्रिका है। इस पत्रिका में मैक्समूलर ने प्रत्नकम्रनन्दिनी तथा विद्योदय के महत्त्वपूर्ण पत्रिकाओं का उल्लेख किया गया है। उन्होंने यहाँ दो ऐसी पत्रिकाओं का भी नाम दिया है, जिसमें संस्कृत के ग्रंथ भी प्रकाशित होते थे- 'हरिश्चन्द्रचन्द्रिका' और 'तत्त्वोधिनी' है। भारतीय विद्वानों में विद्यावाचस्पति अप्पाशास्त्रीराशिवडेकर प्रथम विद्वान हैं, जिन्होंने अनेक संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं का निर्देश और समीक्षा 'संस्कृतचन्द्रिका' में किया है। इसी पत्रिका के ये सम्पादक भी थे, संस्कृतचन्द्रिका मासिक पत्रिका थी। उसका प्रथम प्रकाशन 1893 ई. हुआ था। इसका सम्पादन उच्चकोटि का था। सारगर्भित निबन्धों को ही इसमें प्रकाशित किया जाता था। आज तक प्रकाशित संस्कृत पत्रिकाओं में उसका प्रमुख स्थान है। 1907 ई. मैं 'विण्टर नित्स' ने भारतीय साहित्य के इतिहास का वर्णन किया है। उन्होंने संस्कृतभाषा के जीवित होने में सबाल

प्रमाण संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं को ही प्रदान किया है। उनके मतानुसार संस्कृत में अनेक विशिष्ट पत्रिकाओं का सम्पादन हो रहा है। संस्कृत भाषा को विशिष्ट स्थान मिलना चाहिए। संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं के सम्बन्ध में पाश्चात्य विद्वानों यही धारणा रही है। अतः उन्नीसवीं शताब्दी में संस्कृत पत्रिका का जन्म माना जाता है।

दूसरी संस्कृत पत्रिका के रूप में प्रत्नकम्रनन्दिनी का नाम आता है जिसका प्रारम्भ 1867 ई. में हुआ। इसे पूर्णमासिकी नाम से भी जाना जाता है। यह पत्रिका बनारस से प्रकाशित की जाती थी। इसमें संस्कृत साहित्य, वेद, दर्शन आदि विषयों के सारगर्भित निबंधों का प्रकाशन किया जाता था। लाहौर से सन् 1871 ई. में विद्योदय संस्कृत मासिक-पत्र का प्रकाशन आरम्भ हुआ। यह पत्र लगातार सन् 1914 तक प्रकाशित होता रहा। सन् 1887 से इस पत्रिका का प्रकाशन कलकत्ता से होने लगा।

इस प्रकार हम देखते हैं कि संस्कृत पत्रिका का अविरल प्रवाह आज तक चला आ रहा है। नित-नूतन पत्रिकाओं का प्रकाशन कार्य अबाध गति से चल रहा है और इसमें उत्तरोत्तर विकास भी हो रहा है। उन्नीसवीं शताब्दी से पहले संस्कृत भाषा की गति मन्द पड़ गई थी लेकिन इन पत्रिकाओं के प्रकाशन से इसमें गति आ गई है। आधुनिक युग में अविकसित क्षेत्रों का उत्थान में पत्र-पत्रिकाओं का विशेष महत्व है। संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं से संस्कृत भाषा को जन-जन तक पहुँचाया जा सकता है। यदि व्यापक स्तर पर दैनिक रूप में संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं को लाया जाये तो यह अतिशीघ्र जन-भाषा का पद प्राप्त कर लेगी। संस्कृत को जनभाषा बनाने में संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं का विशेष उपयोगी साबित हो सकती है। साथ ही आधुनिक और प्राचीन संस्कृत ग्रंथों को प्रकाशित करने के लिए अनेक पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन होना चाहिए। संस्कृत पत्रिकाओं से साहित्य के विविध विषयों का ज्ञान होता है। अतः संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन की महती आवश्यकता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि उन्नीसवीं शताब्दी से संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं का उत्तरोत्तर विकास हो रहा है। इन पत्रिकाओं के महत्त्व एवं विकास को हम इसके दैनिक, मासिक, साप्ताहिक, पाक्षिक, द्विमासिक, त्रैमासिक, चतुर्मासिक, षाण्मासिक, वार्षिक पत्रों के प्रकाशन के रूप में देख सकते हैं, जो संस्कृत की श्रीवृद्धि में अपना सम्पूर्ण योगदान दे रहे हैं।

अभ्यास प्रश्न—

1. संस्कृत की प्रथम पत्रिका का दूसरा नाम क्या था।
   A. पण्डित पत्रिका
   B. काशीविद्यासुधानिधि पत्रिका
   C. उदन्त-मार्तण्ड पत्रिका
   D. केसरी पत्रिका
2. काशीविद्यासुधानिधिः पत्रिका का प्रकाशन वर्ष था।

A. सन् 1865
B. सन् 1866
C. सन् 1867
D. सन् 1868

3. बिहार का पहला संस्कृत-पत्र "विद्यार्थी" किस ई. में प्रकाशित हुआ।
A. 1876 ई. में
B. 1877 ई. में
C. 1878 ई. में
D. 1879 ई. में

4. विद्यामार्तण्ड प्रकाशन वर्ष है।
A. 1885 में
B. 1886 में
C. 1887 में
D. 1888 में

5. 19 वीं शती के अन्तिम भाग में मद्रास से किस पत्रिका का प्रकाशन हुआ।
A. सहृदया
B. भारतोपदेशक
C. कवि
D. संस्कृत-चद्रिका

6. प्रथम संस्कृत दैनिक पत्र का प्रकाशन किस राज्य से हुआ।
A. उत्तराखण्ड
B. केरल
C. उत्तरप्रदेश
D. कर्नाटक

7. देहरादून से प्रकाशित पाक्षिक पत्र का क्या नाम है।
A. गोरखपुरचर्चा
B. दिशाभारती
C. वाक्
D. संस्कृत-संवाद

8. संस्कृतभारती पत्रिका का प्रकाशन वर्ष क्या है।
A. 1915
B. 1916

C. 1917

D. 1918

4.5 सारांश

संस्कृत भाषा के प्रचार-प्रसार में संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। पहले उपन्यास एवं लघुकथाएँ पत्र-पत्रिकाओं में धारावाहिक रूप से छपते थे। स्फुटकाव्य और स्तोत्र काव्य भी समय-समय पर इनमें प्रकाशित होते रहे हैं। पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से समसामयिक और महत्वपूर्ण विषयों की जानकारी प्राप्त होती है।

सस्कृत भाषा की में पत्र-प्रत्रिकाओं की परम्परा प्राचीन काल से चली आ रही है। संस्कृत साहित्य में पत्रिकाओं का प्रारम्भ सन् 1866 ई० में काशीविद्यासुधानिधिः नामक मासिक पत्रिका से हुआ जिसका प्रचलित नाम पण्डित पत्रिका था। उसके बाद प्रत्नकम्रनन्दिनी नामक पत्रिका का प्रकाशन श्री हरिश्चन्द्र शास्त्री द्वारा वाराणसी से 1867 ई० में किया। सन् 1873 ई० में विद्योदय' नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन हृषीकेश भट्टाचार्य ने लाहौर से किया। अतः संस्कृत की प्रथम पत्रिका काशी विद्यासुधानिधिः के प्रकाशन से संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं की परम्परा की शुरूआत हुई वर्तमान में देश के विभिन्न राज्यों से लगभग 200 से अधिक संस्कृत पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित हो रहीं हैं।

वर्तमान समय की बात अगर कि जाए तो वर्तमान युग एक विज्ञान युग है। मोबाईल का युग है। विज्ञान एवं तकनीकी के माध्यम से समूचे देश एवं विदेश में हो रही घटनाओं को हम तत्काल देख एवं सुन सकते हैं। वर्तमान संदर्भ में गुगल से हर प्रकार की खबरे हम तक पहुंच जाती है। कहा जा सकता है आज तकनीकी संसादन महत्त्वपूर्ण आवश्यकता बन गई है। प्रातः काल से हर किसी को पत्र-पत्रिकाओं, समाचार का इतजार रहता है या यूं कहे कि जानकारी हमे पत्र-पत्रिकाओं से ही प्राप्त होती है हमें हर प्रकार की जानकारी इससे मिलती है जैसे कि शिक्षा, मनोरंजन, साहित्य, आदि की प्रमुख खबर पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती है। ये हमारे वर्तमान जीवन का एक महत्त्वपूर्ण अंग सा बन गये है।

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि संस्कृत भाषा की पत्र-पत्रिकाओं की परम्परा वर्तमान संदर्भ के अध्ययन इस प्रकार लोकतंत्र में समाचार पत्रों तथा पत्रिकाओं का काफी महत्व है। जब रेडियों, टेलिविजन का जोर नहीं था समाचार पत्रों-पत्रिकाओं में छपे समाचार पढ़कर ही लोग देश-विदेश में घटित घटनाओं की जानकारी प्राप्त किया करते थे। आज संस्कृत में कई सौ साहित्यिक एवं शोध पत्रिकाएँ निकल रही है। इनमें से कुछ नियमित है, कुछ अनियमित है। पत्र पत्रिकाएं— जबकि आज कल सोशल नेटवर्किंग का दौर है लोगों के हाथों में टेबलेट, मोबाईल, लैपटॉप सहित अन्य आधुनिक उपकरणों के संचार की गति तीव्रता प्रदान कर रही है। विश्वविद्यालयों, पुस्तकालयों, छात्रावासों सहित तमाम अन्य शैक्षणिक संस्थाओं में पाक्षिक, मासिक व अन्य समयावधि के पत्र-पत्रिकाएं दिखाई देती हैं। इससे यह विदित होता है कि

संस्कृत भाषा में भी यह सब कुछ उपलब्ध है, जो विश्व की अन्य भाषाओं में आज युवा लेखक पहले की तुलना में कही अधिक संस्कृत लिख पढ़ रहे हैं। इस प्रकार कहा जा सकता है कि पत्रिकाएँ संस्कृत भाषा के प्रचार-प्रसार में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे रही हैं। अतः देश के विभिन्न प्रान्तों से प्रकाशित संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं का संस्कृत भाषा के प्रचार-प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान है।

4.6 पारिभाषिक शब्दावली

शब्द		अर्थ
प्राचीन	-	पूर्व कालिक
अर्वाचीन	-	वर्तमान कालिक
दैनिक	-	प्रतिदिन
पाक्षिक	-	पन्द्रदिन
मासिक	-	तीस दिन
द्वैमासिक	-	दो माह
त्रैमासिक	-	तीन माह
षाण्मासिक	-	छ: माह
वार्षिक	-	एक वर्ष

4.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.A 2.B 3.C 4.D 5.A 6.B 7.C 8.D

4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ/सहायक सामग्री

1. प्रो. रमेश गौतम, पत्र-पत्रिकाओं का इतिवृत और विकास, दिल्ली. विश्वविद्यालय विभाध्यक्ष दिल्ली

2. संस्कृत के विद्वान् तथा पण्डित रामचन्द्र मालवीय, काशी, 1972 ई.

3. संस्कृत पत्रकारिता का इतिहास डॉ. राम गोपाल मिश्र, दिल्ली, 1979 ई.

4. दशकुमारचरितम्, पर्वपीठिका, पंचमोच्छवास, चो.अ.मा.प्र.वाराणसी, 2004।

5. आधुनिक संस्कृत साहित्य और संस्कृत पत्रकारिता, डॉ घनश्याम बैरवा, 2019

6. आधुनिक संस्कृत काव्य परम्परा, श्री केशवराव मुसलगाँवकर, 2004

4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. प्राचीन संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं का परिचय दीजिए।

2. अर्वाचीन संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं का परिचय दीजिए।

3. संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं के महत्त्व पर प्रकाश डालिए।

इकाई- 05 संस्कृत साहित्य की आधुनिक विधाएं

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 संस्कृत साहित्य की आधुनिक विधाएं
    5.3.1 संस्कृत साहित्य की आधुनिक विधाओं का सामान्य परिचय
5.4 प्रमुख विधाएं
5.5 गज़ल
    5.5.1 - गज़ल का स्वरूप (परिभाषा)
    5.5.2 - गज़ल की संरचना
    5.5.3 - प्रमुख संस्कृत गज़लकार
5.6 आधुनिक छन्द
    5.6.1 सॉनेट
    5.6.2 हाइकु
5.7 लोकगीत
5.8 युगबोधपरक कविताएं
5.9 रेडियो रूपक
5.10 सारांश
5.11 शब्दावली
5.12 अभ्यासार्थ प्रश्न- उत्तर
5.13 उपयोगी पुस्तकें
5.14 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

संस्कृत भाषा में साहित्य सृजन की धारा वैदिक काल से लेकर आधुनिक काल तक निरन्तरता के साथ प्रवहमान है। वैदिक काल से लेकर आज तक सतत गतिशील रहने वाला एवं वैश्विक जन समूह को सकारात्मक रूप में प्रभावित करने वाला यह संस्कृत साहित्य सम्पूर्ण साहित्यों मे प्राचीन, अविच्छिन्न व्यापक और कलापूर्ण होने के कारण अद्वितीय है। मध्यकालीन यवन साम्राज्य की विद्वेषपूर्ण व संकीर्ण मनोवृत्ति के कारण संस्कृत की साहित्य संपदा को नुकसान हुआ पर फिर भी साहित्य का अविराम निर्माण होता रहा है।

उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ काल से संस्कृत साहित्य रचना में एक नवीनता व परिर्वतन दिखायी पड़ता है। काव्य रचना की शैली, विषयवस्तु एवं काव्यनिर्मिति के प्रयोजन की दृष्टि से एक नवोन्मेष दृष्टि में आता है और लेखन पद्धति में अधिक व्यापकता और स्वाभाविकता का समावेश दिखाई पड़ता है। ''भारतपारिजातम्'' नामक महाकाव्य में प्रणेता भगवदाचार्य ने 'संस्कृत के प्रति मोह' को काव्य रचना का प्रयोजन बताया है। श्रीपाद हरसूरकर ने श्रीशिखगुरुचरितामृतम् की प्रस्तावना में लोक जाग्रति को प्रयोजन बताया है। इसी तरह यशःप्राप्ति, अर्थप्राप्ति से आगे बढ़कर समाजहित, छात्रहित, प्रेरणा, संस्कृति व संस्कृत की सेवा काव्य रचना मे नये प्रयोजन स्थापित किये गए हैं।

5.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप -

1. संस्कृत में आधुनिक रचनाओं के स्वरूप को जान सकेगें।
2. आधुनिक संस्कृत रचना में छन्दों को जान सकेगें।
3. संस्कृत गज़लो से परिचित हो सकेगें।
4. आधुनिक संस्कृत रचना के नवीन काव्य प्रयोजन जान सकेगें।
5. वैदेशिक छन्दों में संस्कृत साहित्य रचना से परिचित हो सकेगें।

5.3 संस्कृत साहित्य की आधुनिक विधाएं

5.3.1 संस्कृत साहित्य की आधुनिक विधाओं का सामान्य परिचय

संस्कृत साहित्य रचना परम्परा के आधुनिक कालखण्ड में विविध नूतन विधाओं के आविर्भाव व रूपान्तरित विधाओं के प्रयोग के साथ यह परम्परा निरन्तर पल्लवित व पुष्पित हो रही है। समृद्ध शब्दकोश एवं परम वैज्ञानिक व्याकरण होने से अत्यन्त विश्वसनीय संस्कृत भाषा प्राचीन शैली और भावबोध परम रचनाओं सहित युगानुकूल नवोन्मेशी रचनाओं की नूतन विधाओं में सर्जना के अप्रतिम अवसर प्रदान करती है। आधुनिक कालखण्ड में भी निरन्तर नवीन शैली की श्रेष्ठ रचनाएं विशालतम शब्दकोश वाली संस्कृत भाषा की अद्भुत सृजन शक्ति व जीवन्तता का बोध कराती है। आधुनिक संस्कृत साहित्य रचना में प्राचीन छन्दों के साथ साथ

नये छंद विधान एवं वैदेशिक छंदो का अनुकरण भी दिखाई पड़ता है। संस्कृत रचनाकारों मे छन्दोमुक्त नवकाव्य रचना के प्रति आकर्षण बड़ा है।

5.4 प्रमुख विधाएं

वस्तुतः अमरवाणी संस्कृत आदिकाल से ही साधना, निष्ठा एवं तपश्चर्या की भाषा रही है। संस्कृत में रचना धर्मिता की तापस प्रकृति के कारण ही इतिहास के सभी काल खण्डों में उसका प्रवाह निरन्तर बना रहा है। संस्कृत रचना की प्रमुख आधुनिक विधाएं आत्मकथा, जीवनी, यात्रावृत्त, गज़ल, कव्वाली, गीतियां, उपन्यास, लघुकथा, हास्यकणिका, मुक्तककाव्य, रेडियो रूपक, सॉनेट, हाइकु, तान्का, सीजो आदि हैं।

5.5 गज़ल

भाषा और धरोहर का अनुपम मिश्रण संस्कृत की अद्वितीय विशेषता है। आधुनिक संस्कृत साहित्य मात्रा, विषय वैविध्य तथा विधा बाहुल्य के स्तर पर अन्य किसी भी भारतीय भाषा के समकक्ष है। संस्कृत कवियों ने नए नए प्रयोग कर पौराणिक मिथकों को पुनर्नवा रूप में प्रस्तुत कर संस्कृत की संजीवनी शक्ति को स्थापित किया है। संस्कृत गज़ल का एक समृद्ध परिदृश्य प्राप्त होता है। परन्तु गज़ल लोकधर्मी प्रयोग नहीं है यह आंचलिक न होकर वैदेशिक छन्द है। एवं गज़ल परम्परागत संस्कृत छन्दशास्त्र से इतर अस्तित्व लिये हुये है आधुनिक संस्कृत काव्य में गज़ल की एक सुदीर्घ परम्परा दिखाई दे रही है। गज़ल मूलतः अरबी शब्द है। काव्य विधा के रूप में गज़ल शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम ईरानवासी रौदकी (840 - 940) ने किया। कालांतर में फारसी भाषा में इस विधा का आगमन हुआ जो बाद में उर्दू की मुख्य साहित्य विधाके रूप में प्रसिद्ध हुई। यह अरवी साहित्य की सुप्रसिद्ध व लोकप्रिय काव्यविधा है। जो बाद में फारसी, उर्दू, हिन्दी, नेपाली और अब संस्कृत साहित्य में भी अत्यन्त लोकप्रिय हो रही है। ईरानी और भारतीय संगीत के सम्मिश्रण से इस विधा को गाने के लिए संगीत की अलग शैली निर्मित हुई।

5.5.1 - गज़ल का स्वरूप (परिभाषा)

गज़ल का सर्वसाधारण अर्थ प्रेमिका से बातचीत का माध्यम लिया जाता है। उर्दू के प्रसिद्ध साहित्यकार स्वर्गीय रघुपतिसहाय फिराक गोरखपुरी के अनुसार दर्द में निकले करुण स्वर को गज़ल कहते हैं। उनके शब्दो में **'विवशता का दिव्यतम रूप में प्रगट होना, स्वर का करुणतम हो जाना ही गज़ल का आदर्श है।'**

अंग्रेजों के शासनकाल के समय जयपुर के प्रसिद्ध विद्वान्, फारसी एवं संस्कृत दोनों भाषाओं के श्रेष्ठ कवि महामहोपाध्याय भट्ट मथुरानाथ शास्त्री ने गज़ल गीत को फारसी गज़लकारों की तरह ही संस्कृतभाषा में भी प्रतिष्ठित किया। अतः संस्कृत गज़लों के पहले रचनाकार भट्ट मथुरानाथ शास्त्री जी माने जाते हैं। तदनन्तर संस्कृत की गज़ल परम्परा को

विकसित करने में आचार्य बच्चूलाल अवस्थी का नाम अग्रगण्य है। मुगलवंश के अन्तिम बादशाह बहादुरशाह जफर के शासनकाल में मिर्जा गालिब नाम के एक महान कवि थे जिन्हें गज़ल का बाहशाह कहा जाता है। मिर्जा गालिब की परम्परा में मीर आदि प्रसिद्ध गज़लकार हुए जिन्होंने फारसी से समानता रखने वाली उर्दू भाषा में गज़लें कीं। उर्दूभाषा की यही गज़ल परम्परा बीसवीं सदी के आरम्भ में भट्ट मथुरानाथ शास्त्री जी द्वारा संस्कृतभाषा में भी प्रचलित हुई। शास्त्री जी के साहित्यवैभवम् तथा गीतिवीथी नाम से प्रकाशित दो काव्य संग्रहों में लगभग 22 बहरों का प्रयोग करते हुए रची गई अनेकों गज़ल गीतियां संकलित हैं। संस्कृत में इस गज़ल परम्परा को विशेषरूप से आचार्य बच्चूलाल अवस्थी ने आगे बड़ाया। सहृदय मन को अभिव्यक्त करने वाली करुणतम रचना होने के कारण ही अभिराजराजेन्द्र मिश्र ने इस विधा का संस्कृत नामकरण गलज्जला या गलज्जलिका किया। ''अभिराजयशोभूषणम्'' नामक काव्य लक्षण ग्रन्थ में गज़ल का लक्षण प्रस्तुत करते हुए कहा- गज़ल नामक गीति सम्वेदना से ओत प्रोत होती है जिसमें प्रेम की गंभीरता तथा नैष्ठिकता वर्णित होती है। प्रो. मिश्र ने गज़ल का गलज्जलिका नामकरण भी किया है नेत्र जल की वृष्टि कराने के कारण इस गीति को गलज्जलिका कहते हैं। आचार्य मिश्र जी ने इस बात का उल्लेख अपनी कृति वाग्वधूटी में करते हुए कहा कि- सर्वप्रथम मैंने ही गज़लगीति के लिए गलज्जलिका शब्द का प्रयोग किया है।

5.5.2 - गज़ल की संरचना(मतला, मक्ता, शेर)

सामान्यभाषा में जिसे मुखड़ा कहा जाता है गज़ल का वह प्रारम्भिक युगल वाक्य फारसी में मतला कहा जाता है। और यह मूल भाव को प्रकाशित करता है। अन्तिम बन्ध को मक्ता कहते हैं। मतला व मक्ता के मध्य आने वाले बन्ध शेर कहलाते हैं। जो मूलभाव के पोषक अथवा भिन्न अभिप्रायों के प्रकाशक हो सकते हैं। संस्कृत निष्ठ संरघटना में इसे मतला को आरम्भिका, शेर को मध्यिका, और मक्ता को अन्तिका कहते हैं। इस प्रकार मतला आदि से युक्त फारसी भाषा की गज़लगीति ही संस्कृतनिष्ठ आरम्भिका, मध्यिका, अन्तिका से सुशोभित गलज्जलिका है।

संस्कृत कविता की तरह अक्षर विस्तार की जो स्थिति गणों से प्रदर्शित होती है उसी तरह गज़ल की भी एक सुन्दर गण व्यवस्था है जिसे बहर कहते हैं। इस गीति विधा में नाना प्रकार का बन्ध विस्तर दिखाई पड़ता है। इसको प्रदर्शित करने लिए फारसी में बहर शब्द का प्रयोग किया जाता है। गज़ल गीति में कहीं छोटी तो कहीं बड़ी बहर दिखाई पड़ती हैं जो गज़लकारों की क्षमता की परिचायक होती हैं। यह सुनिश्चित है कि किस बहर में कौन सा गणक्रम प्रयोग में लाया जायेगा। संस्कृत छन्दशास्त्र में गणों के विस्तार का जैसा क्रम वार्णिक छन्दों में एक अक्षर से प्रारम्भ होकर 26 अक्षरों जैसा होता है उसी तरह बहर में विस्तारक्रम में अगणित वृत्त जन्म लेते हैं।

5.5.3 - प्रमुख संस्कृत गज़लकार

संस्कृत साहित्य में गज़ल के प्रवर्तक के रूप में महामहोपाध्याय भट्ट मथुरानाथ शास्त्री का नाम अग्रगण्य है। अनेक बहरों में गज़ल रचना करते हुए उन्होंने यह सिद्ध कर दिया कि गज़ल किसी भाषा विशेष का एकाधिकार नहीं है अपितु यह एक ऐसा शिल्प है जो भावात्मक सम्वेदना की अभिव्यक्ति का सफल सन्धान करता। भट्ट मथुरानाथ शास्त्री ने ब्रज भाषा के दोहा, सोरठा, कवित्त सवैया, घनाक्षरी का संस्कृत भाषा में प्रयोग किया है इसके अतिरिक्त गज़ल को फारसी गज़लकारों जैसी प्रतिष्ठा के साथ संस्कृत में प्रणीत किया। भट्ट जी का गज़ल लेखन के प्रति जो दृष्टिकोण था उसमें उनकी शास्त्रीय दृष्टि और विधिवत सैद्धान्तिक प्रक्रिया अनुस्यूत थी। इन विधाओं के व्यापक फलक पर संस्कृत कविता को स्थापित करने के लिये भट्ट जी ने सार्थक प्रयत्न किये जिससे संस्कृत भाषा को युगानुरूप और सरल तरल आलोक में प्रस्तुत किया जा सके। उन्होंने अपने विशाल मुक्तक संकलन 'साहित्यवैभवम्' में 'उर्दू छन्दासि' शीर्षक अध्याय में छोटी-बड़ी 19 बहरों के नाम, लक्षण देकर स्वनिर्मित गज़लों को उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया। इन विविध भावभूमियों, विभिन्न छन्दों और शैलियों की गज़लों में कव्वालियाँ भी हैं, नात भी, प्रेम गीतियाँ हैं, नीति उपदेशात्मकगीतियाँ भी, युगीन विद्रूपताओं पर प्रहार भी हैं और क्रान्ति का आह्वान भी। उर्दू शैली की उनकी एक छोटी बहर की गज़ल दृष्टव्य है

रतिविगमोऽद्य मानसे कोऽयम्
अवमनुते मुधैव लोकोऽयम्
विरहकृशं विलोक्य मामाह
न परिचिनोमि वर्तते कोऽयम्?
अयि भिषजो! मुधा निदानं वः
दुरवगमो ममाऽस्ति रोगोऽयम् (गीतिवीथी - 56/30)

यहाँ विरहावस्था तो पूर्णतः उर्दू भावभूमि की है परन्तु बिम्ब भारतीय संस्कृति से जुड़े हुये हैं। इसी प्रकार निर्ममता का उलाहना और मन की पीड़ा को न समझने की अनुदारता को व्यक्त करती हुई

वस्तुतः इस कालखण्ड के बाद भट्ट जी की ही शैली में गिरिधर शर्मा नवरत्न, रामनाथ प्रणयी, जानकी वल्लभ शास्त्री, हरिशास्त्री आदि कवियों ने इस विधा को पल्लवित एवं पुष्पित किया, तदनन्तर पं० बच्चूलाल अवस्थी ने व्याकरण भाषा में सही वजन और चलन की गजलें लिखकर संस्कृत पाठकों को चमत्कृत कर दिया उनकी गजलों में संस्कृत भाषा की प्रौढ़ता के साथ-साथ गज़ल की नजाकत भी विद्यमान है। उन्होंने अपनी रचना प्रतानिनी में प्रेम, आशिकी, आँसू, वियोग से विलग नये भावबोध की गज़ल का रंग अत्यन्त विलक्षण प्रस्तुत किया है। वस्तुतस्तु बच्चूलाल अवस्थी ने विरह मिलन की अनुभूतियों को तो उर्दू काव्य परम्परा में रससिक्त होकर ही लिखा परन्तु कल्पना की मौलिकता और भारतीय मिथकों एवं बिम्बों के तीर

सन्धान ने उसे और पैना बना दिया। इस सदी के अन्तिम दो-तीन दशकों में पं० जगन्नाथ पाठक और अभिराज राजेन्द्र मिश्र जैसे श्रेष्ठ कवियों ने नये रूप से पाठकों का परिचय कराया।

पं० जगन्नाथ जी की गजलों में मनोवेदना और सूक्ष्म भावों की व्यञ्जना है। उर्दू फारसी की गज़ल शैली पर आधारित गीतियाँ अपनी रागात्मकता से हृदय में अलौकिक आनन्द का संचार करती हैं। 'कापिशायिनी' में कवि ने वैयक्तिक प्रेम की सम्पूर्ण मधुशाला को एक ही चषक में पी लिया है। यह चषक प्रिया की ऐसी मधुर मुस्कान है जो पूरी मधुशाला पर भारी है। पाठकजी के काव्य में साधना चिन्तन और विकास की त्रिवेणी प्रवाहित होती है। वह समाज की विद्रूपताओं को किनारे खड़े रहकर देखते हैं और जब दृष्टा की चेतना साक्षीभाव से जुड़ जाती है तो उनका लौकिक भाव अलौकिक बन जाता है। आपकी गज़ल और रुबाइयों में सौन्दर्य, बोध, लय और बिम्बों की नवीनता बहुत ही चित्ताकर्षक है। गालिबकाव्य को 'गालिबकाव्यम्' बना देने वाले पाठक जी निस्संदेह स्मरणीय हैं। उनकी पिपासा में गज़ल की तृष्णामयी अनुभूति है। परन्तु अभिराज राजेन्द्र मिश्र बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी हैं। उनके काव्य में जहाँ सोहर, कजरी और क्षेत्रीय लोकगीतों की महक है वहीं मधुपर्णी, मत्तवारणी और शालभञ्जिका की गज़ल गीतियों में सम्पूर्ण विश्व की चेतना संरक्षित है। मिश्र जी की गज़लों में वेदना, अन्तर्द्वन्द और विरह का ताप ही नहीं अपितु वैयक्तिक अनुभूतियों का उदात्त चित्रण हैं। अभिराज ने गज़ल विधा को जिस नए भावबोध के साथ उतारा है उसमें संस्कृत भाषा की निष्ठा भी विद्यमान है और उर्दू, फारसी की परम्परा भी। यद्यपि उर्दू गज़ल में शब्दों की मात्राओं के साथ छेड़छाड़ करके गज़ल के वजन और चलन पर दृष्टि रखी जाती है परन्तु संस्कृत गज़ल लिखना तलवार की धार पर चलने जैसा है जिसमें सन्तुलन पर दृष्टि रखनी होती है। परन्तु अभिराज राजेन्द्र मिश्र ने रदीक और काफिए के आकर्षक संयोजन के साथ अपनी बहुरंगी गजलों के रंग काव्य क्षितिज पर बिखेरे हैं, मत्तवारणी की भूमिका में आपने स्वयं स्वीकार किया है कि मैंने गजलों को उनके पुश्तैनी बाड़े (हुस्न इश्क) से बाहर निकालने का यत्न किया है और उन्हें एक बड़ा कैनवास प्रदान किया है जिसमें व्यक्ति, समाज, राष्ट्रलोक तथा विश्वसमरस है।

वास्तव में अभिराज की गजलो में कथ्य की व्यापकता है, विषयवस्तु की विविधता है और अनेकों बिम्ब एवं प्रतीकों की सहजग्राह्यता है। वाग्वधूटी, मृद्वीका, श्रुतिम्भरा एवं मधुपर्णी के प्रणयी कवि ने प्रौढ़त्व के छैनी हथौड़े से शालभञ्जिका को गढ़ा है। इसमें झर-झर बहते आँसुओं में प्रिय बिछोह की पीड़ा नहीं, प्रिया से मिलने की तृष्णा नहीं और न ही भोग की चाह है, अब तो सांसारिक कामनाओं के अंकुर सूख गये हैं यह जीवन मुक्ति की तृष्णा में जिया जा रहा है।

शोषमापादिताः सर्वभावाडराः
जीवनं जीव्यते काम्यया साम्प्रतम्(शालभञ्जिका- 134/4)

यही मुक्ति हमारी धरोहर है, परम पुरुषार्थ है जिसके समक्ष लौकिक, यश-अपयश बौने हो जाते हैं। संस्कृत की गज़ल में भावबोध का यही नयापन उसे उर्दू की गज़ल से विलग करता है। संस्कृत साधक का उद्देश्य परमतत्व में एकाकार होना है। प्रेम की लौकिक बात भी अलौकिक प्रतीत होती है।

इसके अतिरिक्त समाज के गिरते मूल्य, दोहरे मानदण्ड और परपीड़ा के लिये अभिराज ने जो आचार संहिता निश्चित की है उससे कुछ सामाजिक विसंगतियाँ दूर की जा सकती हैं। आज व्यक्ति अपने दुःख से दुखी नहीं है अपितु दूसरों के सुख से दुःखी है, निरन्तर दूसरों के लिये अवरोध खड़े करता है -

कंटकशिखाऽप्यसह्या प्रतिभाति चेत्वदङ्गे
प्रतिवेशिनित्यमार्गे तदलं निखन्य शंकुम् (मत्तवारणी - 80/4).

आपको काँटे की पीड़ा भी असह्य है और दूसरे के मार्ग में खूँटा गाढ़ने में भी आपको लज्जा नहीं आती कैसा दोहरा व्यक्तित्व है। यहाँ इस शेर में गूढार्थ यह है कि काँटे के चुभने में और खूँटे के गाढ़ने में उद्देश्य भिन्नता है। प्रथमतः काँटा अनायास चुभता है और उसकी पीड़ा भी बहुत छोटे भाग पर होती है और फिर काँटा चुभने में दूसरे के द्वारा जानबूझकर कष्ट देना निहित नहीं होता। परन्तु इसके विपरीत खूँटा गाढ़ते समय हमें उस विशिष्ट स्थान की तलाश है जहाँ से हमारा प्रतिवेशी नित्य गुजरता है। और फिर खूँटे से टकराने पर पता नहीं चोट कहाँ-कहाँ लगे। यहाँ पड़ोसी को पीड़ा देने में हमारा कलुष चिन्तन कार्यरत है।

प्रेम काव्य की आत्मा है भले ही वह पति-पत्नी का दाम्पत्य प्रेम हो, प्रिया के प्रति समर्पण हो, मात-पिता के प्रति समादर हो, भाई बहिन के प्रति स्नेह हो अथवा अपने देश के लिये मर मिटने का संकल्प हो । प्रेम का सूक्ष्म तन्तु प्रत्येक सम्बन्ध में उसकी चेतना बनकर रहता है। अभिराज ने जिस प्रेम को स्थायी और प्रशंसनीय स्वीकार किया है वह क्षुप के समान धीरे-धीरे विकसित प्रीति है।

अभिराज की विशेषताओं के पुञ्ज को यदि एक शब्द में कहने की शर्त हो तो कहा जा सकता है कि वे बेवाक हैं। वास्तव में उनकी समस्त कृतियों में उनके व्यक्तित्व की पारदर्शिता झलकती है वे जो कहते हैं, वही करते हैं। बाह्य आडम्बर न तो उनके चरित्र और व्यक्तित्व में है और न ही वे ऐसे व्यक्तियों से प्रभावित होते हैं।

गज़ल के कैन्वस पर यद्यपि अन्य व्यक्तियों ने भी अपने रंगों को उतारने का प्रयास किया है परन्तु वह उतना स्पष्ट नहीं है। जनार्दन प्रसाद मणि की गोखराणां का कथा यद्यपि गज़ल के समीपवर्ती है परन्तु गीत और गज़ल के मध्य की क्षीणतर रेखा का स्पर्श करते हुये।

इच्छाराम द्विवेदी के प्रश्नचिह्न शीर्षक में लगभग 31 गज़ल संगृहीत हैं। जो भिन्न-भिन्न विषयों को अंगीकृत करके लिखी गई हैं जिसमें कहीं अपने देश की निदाघ कथा है तो कहीं सामाजिक मूल्यों के पतन का निदर्शन है। परन्तु इन गजलों को पढ़ने पर विशुद्ध गज़ल की

अनुभूति नहीं होती। इनमें न तो उर्दू शायरी की नज़ाकत है और न ही उसकी लयात्मक गति। कई स्थान पर छोटी बहर की गज़लें बहुत ही सपाट और नीरस प्रतीत होती है। हाँ यह अवश्य है कि कुछ गज़लों में उनका प्रयास सराहनीय है। प्रणवरचनावली में चन्दनत्वं गताः की गेयता प्रभावित करती है।

प्रायः प्रणव की गज़लों में भी प्रेम एवं वियोग के स्थान पर सामाजिक विद्रूपताएँ ही जीवित हैं। राष्ट्रीय प्रेम समाज के गिरते मूल्य, चारित्रिक पतन एवं कुछ मिथकीय प्रयोग कवि ने अपनी गज़लों में किये हैं। सम्भवतः इसका उद्देश्य गज़ल के नवीन आयामों को प्रस्तुत करना रहा होगा।

5.6 आधुनिक छन्द

अर्वाचीन संस्कृत काव्य में जो क्रान्तिकारी परिवर्तन आया है उसमें छन्दों पर किये गये नवप्रयोग भी उल्लेखनीय है। भले ही वह देशी छन्दों की बात हो अथवा विदेशी छन्दों की कवि ने छन्द शास्त्र की परम्परा से चार कदम आगे बढ़कर स्वयं को लोकधर्मी सिद्ध करने का प्रयास किया है। अतः इस नवप्रयोग में जो भारत की जमीन से जुड़े छान्दस नवप्रयोग हैं उन्हें लोकधर्मी छन्द कहा गया है।

5.6.1 सॉनेट

संस्कृत में अनेकों नाट्यकृतियों के रचनाकार श्री वीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने संस्कृत कविता का सॉनेट छन्द से परिचय कराया। सॉनेट अंग्रेजी कविता का प्रसिद्ध छन्द है। एक सॉनेट में चौदह पंक्तियाँ होती हैं और एक ही छन्द में एक कविता पूर्ण हो जाती है। भट्टाचार्य जी ने अपने सॉनेट संग्रह को 'कलापिका' के नाम से कलकत्ता (1969 ई०) से प्रकाशित कराया। शेक्सपियर के सॉनेट विधान का प्रभाव इस संग्रह पर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। पहली एवं तीसरी में तथा दूसरी और चौथी पंक्ति में अत्यानुप्रास का निर्वाह और छन्दोविधान की रक्षा भी कवि ने यहाँ की है। वीरेन्द्र कुमार जी ने सॉनेट का संस्कृत नामकरण संस्तबक किया है। ये समस्त संस्तबक उनके पूर्ण समर्पण एवं साहित्य साधना का परिणाम है। उन्होंने अंग्रेजी के इस छन्द को उसी के विधान में संस्कृत भाषा का उत्तरीय पहनाकर अपनी कल्पना और भाषा सौष्ठव के समन्वय का पूर्णतः निर्वाह किया है। इस प्रकार भट्टाचार्य जी ने सॉनेट को संस्कृत साहित्य में उतारकर विदेशी छन्दों की रचनाधर्मिता का सूत्रपात किया।

इसी श्रृंखला में हर्षदेव माधव ने सॉनेट को उसी भावभूमि में लिखकर संस्कृत साहित्य को विश्वचेतना से जोड़ा है। यद्यपि हाइकू माधव का प्रिय छन्द है परन्तु सॉनेट को भी उन्होंने उतनी ही खूबसूरती से अपने साहित्य में उतारा है। हर्षदेव माधव प्रयोगधर्मी कवि कहे जाते रहे हैं। प्रत्येक छन्द, प्रत्येक विधा के साथ नये-नये प्रयोग करना उनकी जादूगरी है। वे कुछ भी लिख सकते हैं। शब्दों के खेल से कहीं नीचे गिरते शब्द चित्रकाव्य बन जाते हैं तो कहीं शब्दों का

ऊँचा नीचा लेखा-जोखा उसे ग्राफ काव्य का रूप दे देता है। कहीं मदारी और जमूरे के संवाद कविता कह उठते हैं तो कहीं समुद्र और नदी टेलीफोन पर बात करते दिखाई देते हैं, कहीं पहेली है तो कहीं रिक्त स्थानों की पूर्ति, कहीं शब्दों का मेल करने का खेल कविता बन जाता है। अतः माधव कोई भी छन्द को सीधे-सीधे लिखने वाले कवि नहीं हैं। जहाँ सॉनेट सा में उन्होंने चौदह पंक्तियां लिखकर उसकी गति यति का पूर्णतः निर्वाह किया है वहीं छन्दोविधान के दायरे में रहकर भी उन्होंने अन्य स्थान पर सॉनेट का वार्तालाप रूप प्रस्तुत किया है। इसमें प्रिय और प्रियतमा का पारस्परिक संवाद है। प्रिया अपनी रूपराशि पर गर्वित है अतः उसे लगता है कि प्रियतम का स्नेह भ्रमर सदृश है जो फूल के म्लान होने पर नष्ट हो जाता है परन्तु प्रियतम का प्रत्युत्तर बहुत ही सटीक है कि हे प्रिया यौवन श्री भले ही नष्ट हो जाये परन्तु स्मृतियों की सुगन्ध सदैव बाँधती है। अतः यदि उन यादों को संजोकर रखा जाए तो व्यक्ति जीवन भर उसी ऊष्मा में जीता है। स्मृति सुगन्ध के सदृश ही माधव ने पुष्पं परन्तु सॉनेट भी लिखा है ये दोनों ही सॉनेट संवादात्मक शैली में लिखे गये हैं। "पुष्पं परन्तु" में प्रिया को आशंका है कि प्रिय भ्रमर द्वारा भुक्त पुष्प के समान उसकी देह को ही चाहता है और आनन्द के उपरान्त उसे त्याग देता है परन्तु हर्षदेव कहते हैं कि वास्तव में भ्रमर को तो पल भर का सुख मिलता है परन्तु पुष्प का तो जीवन ही सफल हो जाता है।

डॉ० राधावल्लभ त्रिपाठी ने यद्यपि बहुलता से इस छन्द का प्रयोग नहीं किया है परन्तु सन्धानम् के लक्ष्य में सॉनेट आ ही गया है। उन्होंने है दो सॉनेट सन्धानम् में लिखे हैं। इससे प्रतीत होता है कि डॉ० त्रिपाठी अर्वाचीन छन्दोविधान के ऐसे सहयात्री हैं जो देशी विदेशी सभी छन्दों का सहज प्रयोग करने में सिद्धहस्त हैं। उनके गद्य में ही आधुनिकता का संचरण नहीं है अपितु काव्य की गति भी समयानुकूल सज्जित होती है। अन्वेषणम् सॉनेट में यति और गति का पूर्ण निर्वाह करते हुये चौदह पंक्तियों में उसे नियमबद्धता से समायोजित किया है। परन्तु एक बात निश्चित रूप से आधुनिक संस्कृत कवियों में दिखाई देती है कि इस प्रकार के नवप्रयोग उन्होंने अपनी बहुआयामी प्रतिभा को सिद्ध करने के लिये ही किये हैं। उनमें उनके काव्य की स्वाभाविकता के स्थान पर कृत्रिमता दिखाई देती है।

5.6.2 हाइकु

जापानी काव्य विधा का सफल प्रयोग हाइकु कहा जा सकता है। इसमें 17 अक्षरों का प्रयोग करके सूत्र के सदृश भावाभिव्यक्ति होती है। यह अक्षर 5-7-5 के क्रम में तीन पंक्तियों में होते हैं इस विषय में झीणाभाई देसाई कहते हैं पाँच-पाँच की पहली और तीसरी पंक्ति से सधने वाला संवाद एवं बीच की टेढ़ी पंक्ति मानो दो पलड़ों को सन्तुलित रखने वाला केन्द्र ! एक बार इस आकार से हमारी रसवृत्ति अभ्यस्त हो जाए तो फिर उसमें से नये-नये उन्मेष जन्मने लगते हैं। यह भी हाइकु सृष्टि का एक अनूठा आनन्द है।

डॉ० अरुणोदय जानी हाइकु के विषय में कहते हैं कि **पादत्रयात्मके सप्तदशाक्षरेऽस्मिन पंक्ति 5-7-5 संख्याका वर्णा सन्तिः। अतः हाइकु इत्यपरपर्यायस्यास्य सत्तरी, सत्तराक्षरी, त्रिदलम् इति नामान्तराणि। हर्षदेवस्तु एतस्य बिल्वपत्रम् इवान्वर्धकं नाम कल्पयति।**

हर्षदेव माधव हाइकु की तीन पंक्तियों को त्रिगुणात्मक विश्वव्यापकता के साथ रखते हैं और हाइकु को बिल्वपत्र कहना पसंद करते हैं। **हाइकुकाव्यमपि त्रिचरणमयं तस्यापि त्रीणि चरणानि वर्तन्ते, अतः सूचयति त्रिगुणसमन्वितं विश्वदर्शनप्रभुत्वम्। हाइकु-होऽकु-सत्तरी-सत्तराक्षरी-त्रिदलं-बिल्वपत्रं इत्यादि बहूनि नामानि वर्तन्ते हाइकुमहोदयस्य, किन्तु बिल्वपत्रमेव कथयिष्यामि।**

वस्तुतः हाइकु में कवि स्वयं कुछ नहीं कहता छोटा सा यह त्रिदल सब कुछ कह जाता है। यद्यपि सुभाषितों में भी अन्योक्ति भाव को कम शब्दों में व्यक्त किया जाता है परन्तु उनका काव्य उद्देश्य केवल सदाचार एवं उपदेश की सर्जना करना होता है जबकि हाइकु में क्षण भर की संवेदना सम्पूर्ण जीवन का दर्शन समझा जाती है। वास्तव में इसमें बिम्बद्प्रतिबिम्ब का संयोजन बहुत प्रभावी होता है। हर्षदेव माधव ने हाइकु के लक्षण इस प्रकार निर्देशित किये हैं

1. चमत्कृति - ऐसी चमत्कृति जिसमें ध्वनि हो।
2. लाघव - ऐसा लाघव जो शब्द स्वामी ही साधसके। लाघव हो परन्तु काव्यार्थ के लिये हानिकारक न हो।
3.जिसमें काव्य की विविध वाक्छटाएँ भरी हों तथा कल्पना वैभव हो।
4. उसमें प्रकृति सहित सर्व विषय स्वीकार्य हों।
5. हाइकु स्वयं एक सौन्दर्य का अनुभव है।
6. हाइकु में स्वतन्त्र होने पर भी किसी भी छन्द के साथ योजना की जा सकती है।

वस्तुतः कल्पना की सृष्टि से युक्त होने के कारण हाइकु कल्पनावादी कवियों के लिये एक श्रेष्ठ छन्द योजना है। परन्तु यह कल्पना परम्परिक न होकर नवीनता लिये होती है मेघ का इन्द्रधनुष के कंधे से बाल संवारना दृश्यकल्पन की मनोहारी योजना है।

हाइकु में टेलीग्राफिक भाषा का प्रयोग होता है। इसमें एक वाक्य शब्द में और एक खण्ड वाक्य में समाहित हो जाता है। यही उसका वैशिष्ट्य है और यही अर्थगौरव भी। परन्तु हाइकु के भावक का सूक्ष्मदृष्टा होना आवश्यक है जिससे वह अन्तःस्थल में प्रवेश कर सके। इस प्रकार जापानी काव्यविधा हाइकु सूचना, ध्वनि और व्यञ्जना प्रधान काव्य कला का सूक्ष्म शिल्प है। इसमें कम से कम शब्दों में काव्य सिद्धि की जाती है। अतः हाइकु के पाठक को बहुत ही धैर्य के साथ उसकी भावभूमि पर उतरना पड़ता है। इसमें बिम्ब, प्रतीक एवं मिथकों द्वारा गागर में सागर समाने की कला का प्रयोग किया जाता है। जब भी इसे अन्योक्ति, व्यंग्य और कटाक्ष के साथ उतारा जाता है तब यह और भी वेधक बन जाता है।

घुणा खादिता ग्रन्थाः कपोताः सुप्ताः पुस्तकालये।(ऋषेः क्षुब्धे चेतसि 32/317)

ग्रन्थों में घुन का लगना और पुस्कालय में अनेकों कबूतरों का सोना वहाँ की जनशून्यता को दर्शाता है। यह शून्यता घुन खाई किताबों के कारण थी अथवा व्यक्तियों के द्वारा उपयोग में न लेने के कारण किताबों में घुन लगा यह भावक की भावयित्री प्रतिभा पर निर्भर है। कारण कई हो सकते हैं सम्भवतः वे पुस्तकें बहुत उपयोगी नहीं हैं, पुस्तकालय शहर से बहुत दूर है, सरकारी अनुदान के अभाव में कर्मचारियों की नियुक्ति नहीं हो पा रही अथवा ग्रन्थालय का वातावरण प्रतिकूल है। इन सब बातों को यह हाइकु अपने में सहेजे हुये है आप जैसा सोचते हैं वैसा ही अर्थ उसमें से निकाल सकते हैं।

हर्षदेव माधव ने हाइकु की विविधता से भी पाठकों का परिचय कराया है। वे परम्परागत छन्द-शिखरिणी, शार्दूलविक्रीडित, स्रग्धरा, वसन्ततिलका आदि को भी हाइकु के स्वरूप में उतारने हेतु प्रयास कर रहे हैं। भले ही इसके लिये छन्दों को खण्डित करने का दोष भी उन पर लगाया जाता रहा है परन्तु छान्दस तत्व को दृष्टि में रखकर उन्होंने इस चुनौती को स्वीकार करके प्रयोगशीलता को निभाया है और ऐसे प्रयोगों द्वारा हाइकु में व्याप्त सम्भावनाओं की ओर संकेत भी किया है।

अतः उन्होंने जापानी छन्द हाइकु को भी भारतीय परिवेश में लिखा है। वात्सायन के कामसूत्र की अभिसारिका जब इस लघुछन्द में कैद की जाती है तो कितनी सरल हो जाती है -

अभिसारिका
हस्ते दीपः नेत्रयो
राग्नेयकीटरू (ऋषेः क्षुब्धे चेतसि 4/33)

रात में उपपति के पास जाने की उत्कण्ठा आँखों में जुगनू की चमक उत्पन्न करती है हाथ में नन्हा दीपक जो हथेली की ओट में भी सुरक्षित नहीं है तेज वायु से कभी भी बुझ सकता है। नायिका के नेत्रों में विविध भाव जुगनू की चमक के समान स्पन्दित हैं। कभी किसी के देख लेने का भय तो कभी मिलन का आनन्द । दीपक आशा का प्रतीक है और जुगनू अस्थायित्व का । वस्तुतः एक छोटा सा हाइकु एक पूरी प्रेम कथा का गवाह बन जाता है। यही है बिम्ब प्रतिबिम्ब और कवि की संवेदनात्मक दृष्टि का प्रवाह। यद्यपि अन्य कवियों ने भी हाइकु पर कुछ प्रयोग किये हैं परन्तु माधव के द्वारा लिखे गये हाइकु बहुत ही स्वाभाविक एवं मुखर हैं।

5.7 लोकगीत

अर्वाचीन संस्कृत काव्य में जो क्रान्तिकारी परिवर्तन आया है उसमें छन्दों पर किये गये नवप्रयोग भी उल्लेखनीय है। भले ही वह देशी छन्दों की बात हो अथवा विदेशी छन्दों की कवि ने छन्द शास्त्र की परम्परा से चार कदम आगे बढ़कर स्वयं को लोकधर्मी सिद्ध करने का प्रयास किया है। अतः इस नवप्रयोग में जो भारत की जमीन से जुड़े छान्दस नवप्रयोग हैं उन्हें लोकधर्मी छन्द कहा गया है।

अभिराजयशोभूषणम् में डॉ० मिश्र ने गीतभेद निरूपण करते हुये लिखा है कि कर्ण कुहरों के लिये जो गीत अमृत तुल्य होता है वह धातु और मातु से समन्वित होकर नादात्मक एवं अक्षरात्मक इन दो रूपों में विभक्त है। धातुज गीत उसे कहते हैं जो वेणु तथा वीणा आदि यन्त्र समूह से प्रस्फुटित होता है। मातुज गीत को मुँह से कढ़ने वाला भी कहते हैं जो कि गायन के रूप में विद्यमान है। यही गीत जब शास्त्रसम्मत रागों के माध्यम से गाया जाता है तो उस प्रकार के गीत काव्यों को रागकाव्य कहते हैं और जो गीत स्वतन्त्र रीति से सम्प्राप्त कण्ठध्वनि के अनुसार सुखपूर्वक तथा जनपद, ग्राम, कुल, जाति की परम्परा के अनुसार गाया जाता है वह संगीतशास्त्र नियमों से रहित बन्धनमुक्त आनन्द देने वाला गीत लोकगीत कहा जाता है।

तच्च सघोरसानन्ददायकं गतबन्धनम्
शास्त्रनियमनिर्मुक्तं लोकगीतं समुच्चते (254/7)

यहाँ पर रागकाव्य के लिये संगीत शास्त्रसम्मत होने की बात कही गई है और लोकगीतों के लिये जो राग प्रयुक्त किये जाते हैं उनका लोकसम्मत होना आवश्यक है। परन्तु लोकधर्मी छन्दों को प्रयोग करने का उद्देश्य परम्परागत छन्दशास्त्र का उल्लंघन करना अथवा उसकी अवहेलना नहीं था अपितु संस्कृत को जन-जन से जोड़ना है। जब संस्कृत के छन्दों में तत्कालीन समाज और संस्कृति की महक सुवासित होती है जो वह व्यक्तियों को खुद से जोड़ लेती है। वहाँ के आंचलिक छन्द लय के कारण अपरिचित भाषा को भी आत्मसात करने की क्षमता रखते हैं। इन छन्दों में सोहर, रसिया, लोरी, गज़ल, लावनी, ठुमरी, कजरी, कव्वाली आदि लोकगीत सम्मिलित हैं। क्योंकि यह गीत जनपद, गाँव, कुल तथा स्वजातीय परम्परा के अनुसार कण्ठ-ध्वनि के वैशिष्ट्य से गाये जाते हैं अतः इन्हें लोकगीत कहते हैं। जनपद के अनुसार रसिक (रसिया) लोकगीत ब्रजक्षेत्र में बाउल बंगाल में, पण्डवानी छत्तीसगढ़ में, रागिणी हरियाणा में, सोहर, स्कन्धहारीय चैत्रक, नकटा, पचरा, वटुक, फाग उत्तर प्रदेश में, डाँडिया गुजरात में और अभंग महाराष्ट्र में गाया जाता है। परन्तु ब्रजक्षेत्र में प्रचलित लोकगीतों को संस्कृत में यथावत रूप से उतारकर जन-जन में लोकप्रिय बनाने का श्रेय ब्रज के मूर्धन्य साहित्यकार वासुदेव कृष्ण चतुर्वेदी को है उन्होंने इस प्रकार के अनेकों लोकगीतों को संस्कृत की ऊष्मा से और भी आकर्षक बना दिया है, एक प्रसिद्ध गीत है -

मैं तौ गोवर्धन कूं जाऊं मेरे वीर नाय मानै मेरौ मनुआ।
अहं तु गोवर्धनं गमिष्यामि मनुते नैव मनो मे(ब्रजगन्धा)

इसके अतिरिक्त उन्होंने संस्कृत भाषा की लोकप्रियता और जन-जन के कर्णमाधुर्य के लिये कुछ संस्कृत गीतियों को फिल्मी धुन आधारित करके लिखा। उनकी एक प्रसिद्ध सरस्वती वन्दना विद्यार्थियों में बहुत लोकप्रिय रही। जिसकी मूलधुन थी - तेरी प्यारी प्यारी सूरत को किसी की नजर ना लगे उस पर सरस्वती वन्दना का यह रूप दृष्टव्य है-

धनसारतुषार सुहारसिते

वरवीणा निनादकरी पाहिमात!।
मधुमञ्जुलतामधुमञ्जुलता
सुतनौ सुतनौ सुतनोतुतता।
सततं सतता सुमहास्ययुता
मकरन्दसुधाश्रितरागरता।
सितवारिजवारिजवेशवृते
वरवीणा निनादकरी पाहिमात!(ब्रजगन्धा)

लोकगीतों की इसी परम्परा में श्रावणगीत, रसिया बटुकगीत आदि का उल्लेख भी आधुनिक संस्कृत काव्य में मिलता है।

5.8 युगबोधपरक कविताएं

बीसवीं शताब्दी में विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में मानव जगत ने आश्चर्यजनक उपलब्धियां प्राप्त की है,जिनके कारण इस सदी की जीवन पद्धतियों में अत्यंत तीव्र वेग से परिवर्तन दिखाई पड़ते हैं। मनुष्य का सारा परिवेश परिवर्तित हुआ है और एक नए कलेवर में उपस्थित हुआ है। इसका प्रभाव संस्कृत साहित्य सर्जना पर भी पड़ा है। आधुनिक समय की इन परिस्थितियों में संस्कृत कवियों ने कविता में नए वातावरण के अनुरूप नए नए मानक गढे हैं व नए नए विषयों का चयन किया है। इस प्रवृत्ति के आरंभ का श्रेय आचार्य भट्ट मथुरा नाथ शास्त्री, कुलभूषण, हर्ष देव माधव, रहसबिहारी द्विवेदी आदि कवियों को जाता है। आधुनिकता के इस कालखंड में अनेक संस्कृत साहित्यकार कवि, गद्यकार मार्क्सवाद, अस्तित्ववाद और उत्तर आधुनिकतावाद की नई वैश्विक विचारधाराओं से अभिप्रेरित व प्रभावित होकर रचना में संलग्न हुए हैं ।मानव जीवन की यह बीसवीं सदी न केवल उसके औद्योगिक व वैज्ञानिक विकास के लिए अपितु नई-नई समस्याओं के जन्म के लिए भी जानी जा सकती है। मानव समाज की मुखर अभिव्यक्ति के लिए आधुनिक संस्कृत साहित्यकार भी पीछे नहीं हैं। संस्कृत साहित्यकारों को युगबोध की जितनी सूक्ष्म पकड़ होती है शायद वह अन्यत्र दुर्लभ हो। आज के समय में पर्यावरण संरक्षण ,जिसमें कि जल संरक्षण, वायु संरक्षण, मृदा संरक्षण आदि महत्वपूर्ण विषय शामिल किए जा सकते हैं । आचार्य निरंजन मिश्रा रचित गंगापुत्रावदानम् युगबोध परक रचनाओं का एक उत्कृष्ट निदर्शन है। वर्तमान समय में घटित निर्भया कांड जैसी अत्यंत दुःखदाई घटनाएं, जो कि मानव समाज को उद्वेलित करती हैं, साथ ही कन्या भ्रूण हत्या, सांप्रदायिक विद्वेष ,महंगाई, शिक्षा का गिरता स्तर, आज के युगबोध के विषय हैं जिन पर संस्कृत कवियों ने अपनी ललित लेखनी को बड़ी ही उत्कृष्टता के साथ बढ़ाया है।

बीसवीं शताब्दी में लिखी जा रही संस्कृत कविताएं न केवल भारत देश में अपितु सारे विश्व में सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक स्थलों पर हो रहे विभिन्न प्रकार के परिवर्तनों व परिस्थितियों के प्रभाव का प्रमाण देती हैं। जिस तरह पारंपरिक रूढ़ विषयों पर

संस्कृत साहित्यकारों की लेखनी अविराम गति से चलती आ रही है उसी तरह नवीन स्थितियों और नवीन विषयों पर संस्कृत कविता ने सीधी प्रतिक्रिया देना प्रारंभ किया है ।स्वतंत्रता प्राप्ति के समय व तत्पश्चात के वातावरण को प्रतिबिंबित करते हुए बहुसंख्यक काव्य संस्कृत में लिखे गए हैं । विदेशी आक्रमणों और बांग्लादेश के मुक्ति संग्राम आदि के विषय को लेकर भी संस्कृत कवियों ने काव्य लिखे हैं । इस युग में गांधीवाद का प्रभाव व अन्य विचारधाराओं का प्रभाव भी देखा जा सकता है जिसका प्रभाव संस्कृत कविता पर पड़ा है। यद्यपि तात्कालिक युगबोध की दृष्टि से की जाने वाली इन रचनाओं में साहित्य के शाश्वत मूल्यों और शाश्वत सौंदर्य बोध का प्रभाव कम ही परिलक्षित होता है तथापि समकालीनता को समझने के लिए यह साहित्य अत्यंत महत्वपूर्ण है। आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी अपनी पुस्तक आधुनिक संस्कृत साहित्य की प्रमुख प्रवृत्तियों में लिखते हैं कि "रस बोध की दृष्टि से अवश्य चीन तथा पाकिस्तान के संग्राम के अवसर पर लिखी गई रचनाओं में वीर रस और राष्ट्र के प्रति प्रेम का परिपाक हुआ है। इस दृष्टि से हम कह सकते हैं कि पारंपरिक रस बोध की कविता समकालीन सर्जना की धारा से जुड़ कर राष्ट्र के प्रति चिंता और विश्वजनीन मानवता के प्रति जागरूकता की भावना से संचालित हुई है।" आचार्य त्रिपाठी का यह मानना एकांगी हो सकता है परंतु यदि संस्कृत कविता के आधुनिक परिप्रेक्ष्य में दृष्टिपात करें तो संस्कृत कविता हर युग में प्रासंगिक और नवीन रही है और उसमें समसामयिक युगबोध के साथ सर्वकालिक व सार्वभौम युगबोध की प्रवृत्ति रही है। युगबोध परक रचनाओं के लिए विशेष रूप से हम पंडित बटुकनाथ शास्त्री खिलाते, डॉ. बीआर राघवन, पंडित राम करण शर्मा, प्रोफेसर शिवजी उपाध्याय, अभिराज राजेंद्र मिश्र, डॉ राधा वल्लभ त्रिपाठी ,हर्षदेव माधव, डॉक्टर निरंजन मिश्रा, पंडित शिवदत्त शर्मा चतुर्वेदी, प्रोफेसर कमला पांडे, प्रोफेसर कौशलेंद्र पांडे आदि की रचनाओं को देख सकते हैं। युगबोध परक दृष्टि से की जा रही संस्कृत साहित्य की सर्जना अत्यंत मार्मिक, प्रभावशाली व लोक कल्याणकारी है। इन रचनाओं छंद विधान की बाध्यता से भी मुक्त होकर जो रचनाएं की जा रही हैं, उनसे वर्तमान समय की समस्याओं व उनसे उत्पन्न विकराल परिस्थितियों के प्रति तीव्र प्रतिक्रिया का सहज बोध प्राप्त होता है, जिसमें मानव मन की संवेदनाएं धैर्य की सीमा को अतिक्रमण कर फूटने को तैयार हैं।

पंडिता क्षमा राव का सत्याग्रह गीता, स्वराज्य, रामकुमार शर्मा का वृक्कयौतुकम् ,निरंजन मिश्र के महाकाव्य व लघु काव्य और इसी प्रकार बहुतेरे कवियों का काव्य संसार संस्कृत कविता में युगबोध का परिचायक दिया है। निरंजन मिश्र अपने गङ्गापुत्रावदानम् तथा ग्रन्थिबन्धनम् आदि महाकाव्य में समाज की बहुविध प्रवृत्तियों, रूढ़ियों का मार्मिक चित्रण करते हैं ।विवाह की विधियों के निरूपण में लोकजीवन की सरस छटा से अब उसमें आधुनिक रीतिरिवाज भी सम्मिलित हो गये हैं। यथा –

क्वचित्तु विद्युल्लतिकाविधानं

क्वचिच्च दीर्घं चलचित्रगानम्।
क्वचिल्लताभिः शुभसंविधानं
क्वचिच्च सङ्गीतकलानिदानम्।।

धान्यकुट्टन का मनोहर वर्णन निरंजन मिश्रा कवि ने ग्रन्थिबन्धनम् में इस प्रकार किया है-

श्रेष्ठा वदन्ति भो वत्स गार्हस्थ्यं धान्यकुट्टनम्।
कुरु लज्जां विहायाद्य मार्गोऽयं बुधवन्दितः ।।
श्रेष्ठैर्मुसलदण्डस्य ग्रहणैनैव जीवने।
गार्हस्थ्यस्वीकृतिं मन्ये वरो दिशति कर्मणा।।

5.9 रेडियो रूपक

रेडियो रूपक के रूप में आधुनिक काल की प्रचलित वालों का प्रिय साहित्य विधा है किस विधा का प्रयोग अब संस्कृत साहित्य लेखन में भी प्रगति पर है रेडियो फीचर ही अंग्रेजी का शब्द है इसके लिए हिंदी में रेडियो रूपक शब्द का प्रयोग किया जाता है रेडियो रूपक एक ऐसी विधा है जिसमें तथ्यों और उनकी प्रस्तुति के लिए प्रयोग शील तकनीको विशेष महत्व पूर्ण रूप से प्रयोग किया जाता है अनेक प्रसिद्ध रेडियो रूपक प्रस्तुतकर्ता ओं ने रेडियो रूपक की जो परिभाषाएं दी हैं उन्होंने किसी न किसी रूप में इनके प्रयोग से प्रयोग शील तकनीकी पक्षों को विशेष महत्वपूर्ण माना है स्टैनले फील्ड नए प्रोफेशनल ब्रॉडकास्ट ट्राइटर हैंडबुक नामक पुस्तक में रेडियो फीचर की परिभाषा देते हुए लिखा है कि रेडियो फीचर का प्राथमिक उद्देश्य श्रोताओं को जानकारी देना है और मनोरंजन करना है।

लुई मैथिली द्वारा दी गई रूपक की परिभाषा के अनुसार रेडियो रूपक वास्तविकता की वह नाटक की प्रस्तुति होती है जिसमें रिपोर्टर या कैमरामैन की बनिस्बत अधिक संवेदनशील चयनकर्ता होना चाहिए रेडियो रूपक प्रस्तुतकर्ता को वास्तविक सामग्री का चुनाव करते समय भिन्न भिन्न दृष्टिकोण अपनाना चाहिए ताकि संपूर्ण प्रस्तुति नाटक जैसी प्रभावकारी साबित हो सके। सुप्रसिद्ध रेडियो रूपककार व प्रसारणकर्मी जीसी अवस्थी ने अपनी पुस्तक ब्रॉडकास्टिंग इन इंडिया में लिखा है रेडियो रूपक लेखन एक तकनीकी काम है। आज संस्कृत साहित्य सर्जन कर्ताओं में भी रेडियो रूपक कि यह साहित्य विधा अत्यंत लोकप्रियता को हासिल कर रही है।

रेडियो रूपक की विभिन्न परिभाषा ओं पर विचार करने पर रेडियो रूपक के संदर्भ में निम्नांकित तथ्य उभरकर सामने आते हैं रेडियो रूपक साहित्य लेखन की एक विशेष तकनीक है रेडियो रूपक का आलेख पत्थरों पर आधारित होना चाहिए।

5.10 सारांश

इस पाठ में हमने संस्कृत साहित्य की लंबी विकास यात्रा को ध्यान में रखते हुए आधुनिक काल में संस्कृत साहित्य की प्रमुख प्रचलित विधाओं का विशेष परिचय प्राप्त किया

है। आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी आदि आधुनिक काल के प्रमुख संस्कृत काव्य के इतिहासकारों के अनुसार 19वीं शताब्दी के साथ संस्कृत साहित्य के आधुनिक काल का आरंभ माना गया है। 19 वीं शताब्दी के उत्तरार्ध से संस्कृत साहित्य की सर्जना में गद्य तथा वस्तु परकता की ओर झुकाव बढ़ता हुआ देखा जाता है। तथापि पद्य विधा की लोकप्रियता कम नहीं रही है। राष्ट्रीय नवजागरण तथा पुनरुत्थानवाद का गहरा प्रभाव इस कालखंड में लिखे गए संस्कृत साहित्य में विशेष रूप से परिलक्षित होता है। धीरे-धीरे संस्कृत का रचनाकार अपनी सामाजिक चेतना को प्रखर करता आया है। 19 वीं शताब्दी के अंतिम तथा बीसवीं शताब्दी के आरंभिक दशकों में राष्ट्रवाद की चेतना व समाजवाद की चेतना में संस्कृत के अनेक गीत व काव्य रचे गए हैं। इनमें सामाजिक चेतना, यथार्थ बोध, व्यक्तिवाद का उदय, वैश्विक विचारधाराओं का प्रभाव, विडंबना शैली व विषयों की नवीनता दिखाई पड़ती है। हमने इस पाठ में बड़ी सहजता के साथ पारंपरिक विधाओं में नव भाव बोध और नवीन छंद विधान का परिचय प्राप्त किया है। नवीन छंदोविधान की दिशा में बीसवीं शताब्दी के संस्कृत साहित्य में सर्वाधिक नए प्रयोग किए गए हैं। आधुनिक इतिहास ग्रंथों के अनुसार फारसी उर्दू काव्य परंपरा के छंदों का संस्कृत कविता में बीसवीं शताब्दी के संस्कृत साहित्य रचना की एक अलग विशेषता है। जिसका सूत्रपात भट्ट मथुरानाथ शास्त्री से होता है। भट्ट मथुरानाथ शास्त्री ने दोहा, सोरठा ,कवित्त, सवैया, घनाक्षरी इत्यादि के साथ-साथ उर्दू के काव्य से गजल छंद को लेकर अपने काव्य वैभव का चमत्कार संस्कृत रचना में प्रकट किया है। जगन्नाथ पाठक, राजेंद्र मिश्र, बच्चू लाल अवस्थी, इच्छा राम द्विवेदी आदि इस विधा के चमत्कारी कवि संस्कृत में हुए हैं । इस कालखंड में अनेक कवियों ने लोकगीतों की मधुरिमा से आकृष्ट होकर संस्कृत काव्य रचना में नए नए प्रयोग किए। श्री भाष्यम् विजयसारथी नामक कवि ने तेलुगु भाषा के लोकप्रिय प्रचलित छंदोंको संस्कृत भाषा में कविता के लिए अपनाया। अभिराज राजेंद्र मिश्र की लोकगीत की परक रचनाएं अत्यंत लोकप्रिय हुई हैं।

वीरेंद्र कुमार भट्टाचार्य नाम के एक कवि ने अपने कविता संग्रह कलापिका में सानेट का प्रयोग संस्कृत रचना में किया है। प्रसिद्ध कवि हर्ष देव माधव ने तीन हजार के लगभग जापानी भाषा के हाइकु छंद संस्कृत में लिखे हैं। इसी तरह हाइकु की भांति ताका छंद भी जापानी काव्य का एक प्रचलित छंद है, जिसमें माधव तथा कुछ अन्य कवियों ने अपनी रचनाएं की हैं। इसी प्रकार हर्ष देव माधव ने कोरिया देश की कविताओं से शिजो नामक छंद को लेकर भी संस्कृत कविताएं रची हैं । इस प्रकार हमने इस पाठ में संस्कृत साहित्य रचना के आधुनिक काल खंड में हुए नए-नए प्रयोगों को नवीन विषय विधान व नवीन छंदोविधान की दृष्टि से जाना है।

5.11 शब्दावली

अविच्छिन्न	-	युक्त
नवोन्मेषी	-	नवीनता प्रकट करने वाला

मिथक	-	भ्रान्ति
पुनर्नवा	-	पुनः नवीन हुई
अभिव्यक्ति	-	विचार प्रगट करना
वैयक्तिक	-	व्यक्तिगत
असह्य	-	न सहने योग्य
सिद्धहस्त	-	प्रवीण
जनशून्यता	-	मानव रहित होना
अवहेलना	-	अपमान

5.12 अभ्यासार्थ प्रश्न- उत्तर

बोध/अभ्यास प्रश्न

प्रश्न.1 आधुनिक संस्कृत रचना में प्रयुक्त होने वाले 4 छन्दों के नाम लिखिए।

उत्तर - गजल, सॉनेट,शीजो, हाइकु।

प्रश्न.2 गज़ल की शुरूआत मूलतः किस भाषा में हुई थी ?

उत्तर - अरबी फारसी में।

प्रश्न.3 संस्कृत साहित्य में गज़ल को लाने का श्रेय किस आचार्य को जाता है ?

उत्तर - भट्ट मथुरा नाथ शास्त्री को।

प्रश्न.4 हाइकु मूलरूप से किस देश का छन्द माना जाता है ?

उत्तर- जापान का।

प्रश्न.5 अभिराजराजेन्द्र मिश्र के अनुसार गज़ल को संस्कृत भाषा में क्या कहते हैं ?

उत्तर- गलज्जलिका।

5.13 उपयोगी पुस्तकें

1. साहित्यवैभवम् - भट्ट मथुरानाथ शास्त्री,निर्णय सागर प्रेस मुम्बई 1930

2.गीतिवीथी - भट्ट मथुरानाथ शास्त्री निर्णय सागर प्रेस मुम्बई 1930

3.	वाग्वधूटी	-	प्रो. अभिराजराजेन्द्र मिश्र
4.	मत्तवारणी	-	प्रो. अभिराजराजेन्द्र मिश्र
5.	शालभञ्जिका	-	प्रो. अभिराजराजेन्द्र मिश्र
6.	मृद्वीका	-	प्रो. अभिराजराजेन्द्र मिश्र
7.	प्रतानिनी	-	पं० बच्चूलाल अवस्थी
8.	निष्क्रान्ता सर्वे	-	हर्षदेव माधव
9.	कलापिका	-	श्री वीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य

10. संस्कृत का अर्वाचीन समीक्षात्मक काव्यशास्त्र- प्रो.अभिराजराजेन्द्र मिश्र, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी प्रथम संस्करण 2010 ईस्वी

11. आधुनिक सस्कृत काव्य परम्परा - श्री केशवराव मुसलगावकर, चौखंबा विद्याभवन वाराणसी प्रथम संस्करण 2004

12. संस्कृत साहित्य: बीसवीं शताब्दी - राधावल्लभ त्रिपाठी, राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान 1999

13. आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र समीक्षाएं- डॉ. रमाकांत पाण्डेय जगदीश संस्कृत पुस्तकालय जयपुर नूतन संस्करण 2009

14. आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र- डॉ. आनंद कुमार, श्रीवास्तव ईस्टर्न बुक लिंकर्स दिल्ली प्रथम संस्करण 1990

5.14 निबन्धात्मक प्रश्न

प्रश्न.1 रेडियो रूपक का शिक्षा में योगदान बताइये।

प्रश्न.2 सॉनेट की परिभाषा व संस्कृत में सॉनेट रचना पर प्रकाश डालिए।

प्रश्न.3 भट्ट मथुरानाथ शास्त्री का आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र में क्या योगदान है ?

प्रश्न.4 हाइकु की परिभाषा एवं प्रसिद्ध आचार्यों के विषय में लिखिए।